

Shodh Shree

ISSN 2277-5587
Indexed in ULRICH & IJIF
Impact Factor 2.541

Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

शोध श्री

Volume - 19 Issue - 2 April-June 2016 RNI NO. RAJHIN / 2011 / 40531

Volume - 19

Issue - 2

April - June 2016



CHIEF EDITOR
Virendra Sharma

EDITOR
Dr. Ravindra Tailor

shodhshree@gmail.com
www.shodhshree.com

Shodh Shree

(International Refereed Journal of Multidisciplinary Research)

Virendra Sharma
Chief Editor
Government Girls P.G. College,
Ajmer

Dr. Ravindra Tailor
Editor
Shodh Shree,
Jaipur

Editorial Board

Prof.H.S.Sharma (Retd.)
University Of Rajasthan, Jaipur

Prof.T.K.Mathur (Retd.)
M.D.S. University, Ajmer

Prof. Ravindra Kumar Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra (Haryana)

Sarah Eloy
Museum The House of Alijn, Belgium

Prof. B.P.Saraswat
Dean of Commerce
M.D.S. University, Ajmer

Prof. Pushpa Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra (Haryana)

Dr. Rajesh Choudhary
Assistant Director (Research)
Indian Council of Historical Research, NewDelhi

Dr. Pankaj Gupta
Government P.G. College, Kotputli

Advisory Board

Prof. S.P.Vyas
Jainarayan Vyas University, Jodhpur

Prof. S.N.Tailor (Retd.)
S.D.Government P.G.College, Beawar

Dr. Mahesh Narayan
Archivist (Retd.)
National Archives of India, NewDelhi



Shodh Shree

(International Refereed Journal of Multidisciplinary Research)

Contents

Volume - 19

Issue-2

April - June 2016

1. भारत में भ्रष्टाचार एवं कालेधन की समस्या - एक चुनौती
डॉ. (श्रीमती) वसुधा अग्रवाल, मध्यप्रदेश 1-5
2. अज्ञेय की कविताओं में व्यंग्य: विविध रूपों में
डॉ. हरप्रीत कौर, चण्डीगढ़ 6-10
3. जैन सन्तों का पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में योगदान
डॉ. स्वीन्द्र टेलर, जोधपुर 11-13
4. महात्मा फुले - विचार दर्शन एवं सत्यशोधक समाज
डॉ. तनुजा मेलकानी, उत्तराखण्ड 14-16
5. ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति जागरूकता, संवेदनशीलता तथा विधिक चेतना के स्तर का अध्ययन
डॉ. कल्पना पारीक, मीना यादव, जयपुर 17-20
6. राजकीय एवं स्ववित्तपोषित प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की अपने शिक्षाक्रम के प्रति जागरूकता तथा शिक्षण अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन
ऋचा अग्रवाल, आगरा, उत्तरप्रदेश, डॉ. सरिता अग्रवाल, फरीदाबाद, हरियाणा 21-24
7. वेद व पुराण में अश्व का वृत्तान्त
डॉ. अनुराधा टाक, नागौर 25-28
8. भारत-पाकिस्तान के सामरिक हित : दक्षिण एशिया के विशेष संदर्भ में
फकरुद्दीन खान, जयपुर 29-37
9. महिला सशक्तिकरण: एक मिथक (विकासखण्ड चम्पावत के ग्राम तरकुली के विशेष संदर्भ में)
डॉ. मनोहर चन्द्र जोशी नैनीताल (उत्तराखण्ड) 38-43
10. पंचायती राज एवं जनसहभागिता : एक विश्लेषण राजस्थान के विशेष संदर्भ में
डॉ. रेनू बाला मीना, कोटा 44-47
11. केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना : स्मार्ट सिटी से बदलेगा शहरों का स्वरूप
डॉ. अरविन्द चौधरी, जयपुर 48-53
12. राजस्थान में संगठित अपराध की रोकथाम में विशेष कार्य दल (एस.ओ.जी.) की भूमिका
हवासिंह घुमरिया, जयपुर 54-56
13. जैसलमेर में उत्पन्न जल संकट का अध्ययन : जल प्रबंधन की उपेक्षा के परिप्रेक्ष्य में
मीनाही, जोधपुर 57-60
14. अजमेर के तीर्थराज पुष्कर का ऐतिहासिक अध्ययन : वर्तमान संदर्भ में
रुखमणी, जोधपुर 61-65

15	A Study on Revision of Insurance Industry in India to Make Pace with Globalization	66-72
	Ram Prakash, Jodhpur, Sunil Netar, Australia	
16	Impact of Reservation Policy on Backward Communities in Rural Kumaun	73-78
	Dr. Manju Paneru, Nainital (Uttarakhand)	
17	Striking Work Life Balance”Rising Challenges and Contemporary Solutions	79-86
	Nilesh Sancheti, Jodhpur	
18.	Changes In Histopathology of Rice Plant Due To Blast Disease Caused By Pyricularia Oryzae (L.)	87-90
	Dr. Rohini Maheshwari, Bundi	
19.	Corporate Social Responsibility (CSR) and Social Welfare: Creating a Better World Through Business	91-97
	Dr Minakshi Kumawat, Pune, Maharashtra	
20.	Governance of NGOs in Education Sector An Analytical Study of Rajasthan	98-107
	Mushtaq Ahmed, Chittorgarh	
21.	Study of Consumer Behaviour and Its Evolution	108-113
	Surbhi Sancheti, Jodhpur	
22.	An Overview on Green Marketing	114-118
	Payal Chandak, Jodhpur	
23.	Munshi Devi Prasad: A Historian Par Excellence	119-121
	Dr. Sambodh Goswami, Dausa	
24.	Municipal Governance and Per Capita Expenditure in Local Self Bodies of Rajasthan	122-126
	Jitendra Prakash Bohra, Jodhpur	
25.	Industrial Development in Rajasthan	127-132
	Dr. Seema Pareek, Sambhar Lake	
26.	Enhancing the Quality and Accessibility of Higher Education through the use of ICT	133-135
	Dr. Sarita Agarwal, Dr. Ravneet Gaur, Faridabad, Harayana	

भारत में भ्रष्टाचार एवं कालेधन की समस्या - एक चुनौती

डॉ. (श्रीमती) वसुधा अग्रवाल

प्राध्यापक, डॉ. भगवत सहाय शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर, मध्यप्रदेश



shodhshree@gmail.com

भ्रष्टाचार की समस्या समाज में अनंतकाल से व्याप्त रही है। सार्वजनिक जीवन एवं प्रशासन को नकारात्मक रूप से प्रभावित करती रही है। किन्तु आज इसने ऐसे दावानल का रूप धारण कर लिया है जिसने जीवन व प्रशासन के सभी पक्षों को प्रभावित किया है। आर्थिक, राजनैतिक, शैक्षणिक, सामाजिक, प्रशासनिक स्वायत्त शासन कोई भी क्षेत्र इससे अछूता नहीं रहा है। आधुनिक युग में भ्रष्टाचार प्रशासन में शिष्टाचार बन गया है। आज किसी भी कार्य को समय पर कराने के लिये रिश्वत देना और लेना आम बात हो गयी है। कार्य करवाने के लिये रिश्वत को एक शस्त्र की तरह प्रयुक्त किया जाता है। निर्धनता, अशिक्षा, गरीबी, महंगाई ने इस स्थिति को और भी भयावह बना दिया जाता है।

भारत में कालेधन का प्रादुर्भाव द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् से शुरू होता है जबकि ब्रिटिश सरकार द्वारा अनिवार्य वस्तुओं की कमी को दूर करने के लिये नियंत्रण की व्यवस्था शुरू की गयी थी। वितरण और नियंत्रणों की व्यवस्था के कारण गुप्त बाजार का प्रादुर्भाव हुआ। गुप्त बाजार में निर्धारित कीमतों के स्थान पर वस्तुओं की मनमानी कीमतें बसूल की जाती थी। फलतः व्यापारियों और उद्योगपतियों को अत्यधिक लाभ हुआ। इस प्रकार कमाये गये लाभ को वे न तो अपने हिसाब में दिखाते थे और न ही बैंकों में जमा करते थे। इस प्रकार भारतीय अर्थव्यवस्था में कालेधन का प्रादुर्भाव हुआ।

भ्रष्टाचार किसी भी देश के आर्थिक विकास के लिये एक गंभीर मुद्दा है। यह देश के आर्थिक विकास तथा विकासात्मक लक्ष्यों को प्राप्त करने के मार्ग में एक सबसे बड़ा अवरोधक है। वर्तमान में भ्रष्टाचार देश के आर्थिक विकास की गति को मंद बनाये रखने में एक प्रमुख कारण है। भ्रष्टाचार की समस्या नयी नहीं है, और न ही इसका क्षेत्र सीमित है। बल्कि वर्तमान में ये देश व समाज के प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ती ही जा रही है। भ्रष्टाचार एवं आर्थिक विकास का संबंध बहुत जटिल है।

21वीं सदी के प्रारंभ में आधुनिकीकरण और उदारीकरण का दौर शुरू हुआ तो उदारीकरण के समर्थकों ने दावा किया था कि उदार अर्थव्यवस्था के अंतर्गत सरकारी नियम कानून पारदर्शी होंगे जिससे घोटालों और भ्रष्टाचार में भी कमी आयेगी लेकिन ऐसा नहीं हुआ बल्कि भ्रष्टाचार और तेजी से फला फूला। इस तरह वैश्वीकरण ने भारत में भ्रष्टाचार का वैश्वीकरण कर दिया है। रिश्वत, कार्टेल, फर्जी एकाउंटिंग, कॉर्पोरेट फ्रॉड नीतियों में मनमाना फेरबदल, एसबैंड आवंटन, 2जी स्पेक्ट्रम, आदर्श हाउसिंग घोटाळा, आवास ऋण, राष्ट्रमंडल खेल, कर्नाटक खनन, उत्तरप्रदेश खाद्यान्न आदि भ्रष्टाचार के मुख्य मामले हैं।

भ्रष्टाचार से विदेशी व घरेलू दोनों प्रकार के विनियोग हतोत्साहित होते हैं। देश में प्रत्येक स्तर पर व्याप्त भ्रष्टाचार से विनियोगकर्ता के व्ययों में अनावश्यक वृद्धि होती है साथ ही उनके विनियोग आगमों में अनिश्चितता बनी रहती है जिससे वे विनियोग करने में हिचकिचाते हैं। भ्रष्टाचार के कारण देश के आर्थिक विकास हेतु आवश्यक पूँजी प्राप्त नहीं हो पाती जिससे घरेलू पूँजी निर्माण नहीं हो सकता है।

उद्यमियों एवं नवप्रवर्तकों को उद्योगों की स्थापना एवं विस्तार हेतु लाइसेंस एवं विभिन्न अनुमतियाँ प्राप्त करनी होती हैं। किन्तु भ्रष्टाचार होने के कारण अनुमति प्राप्त न होने के कारण उनका लाभ

मार्जिन कम हो जाता है जिससे वे औद्योगिक विकास के अनुरूप कार्य नहीं कर पाते इसी कारण औद्योगिक विकास भी पिछड़ा रह जाता है।

तालिका क्रमांक - 1

काले धन का अनुमान			(करोड़ रुपये में)
क्र.	वर्ष	समिति	अनुमानित धन (करोड़ रुपये में)
1	1953-54	कालडोर समिति	600
2	1968-69	वांचू समिति	1400
3	1984-85	डॉ. चेलैया समिति	37000
4	1985-86	डी. आर. पडेसे समिति	40530
5	1990-91	बजाज समिति	80000
6	2011-12	डॉ. ए. पी. सिंह समिति	540 बिलि डॉलर स्विस बैंक

भारत में कालाधन जितना है उसका बड़ा भाग स्विस बैंक में है। मई 2012 में भारत सरकार ने बताया कि सभी राष्ट्रों का जितना धन है उसमें भारत का हिस्सा 2006 में 0.29 था जो वर्तमान 2010 में 0.13 हो गया। सीबीआई डायरेक्टर ए.पी. सिंह ने फरवरी 2012 में

बताया कि भारत का 500 बिलियन डॉलर स्विस बैंक में जमा है। भारत का कालाधन कुल जीडीपी का 25 प्रतिशत है। इसकी अन्य देशों से तुलना इस प्रकार है।

तालिका क्रमांक - 2

विश्व की कालाधन अर्थव्यवस्था

क्र.	देश	प्रतिशत
1	भारत	23 से 26
2	एशिया	28 से 30
3	अफ्रीका	41 से 44
4	लेटिन अमेरिका	41 से 45

कालाधन पर भारत में मई 2012 में एक श्वेत पत्र लाया गया जिसके अनुसार 2010 में भारत के नागरिकों का सी एच एक 1.99 बिलियन भारतीय रुपये 9295 करोड़ यूएस डॉलर 2.1 बिलियन है। भारत के नागरिकों के अकाउन्ट एचएसबीसी बैंक में थे।

भारत में इण्डेक्स 2013 के अनुसार भारत घूसखोरी और कालेधन के कारण भ्रष्टाचार में 177 देशों की सूची में 94वें स्थान पर है। इस सूची में पहले स्थान पर डेनमार्क और न्यूजीलैंड हैं और अंतिम स्थान पर सोमालिया है। भारत के पड़ोसी देश इस सूची में इस प्रकार हैं।

तालिका क्रमांक - 3

विश्व की कालाधन अर्थव्यवस्था

क्र.	देश	स्थान
1	भूटान	31
2	श्रीलंका	91
3	नेपाल	116
4	पाकिस्तान	127
5	बांग्लादेश	136

इण्डिया करप्शन एण्ड ब्राइवरी रिपोर्ट के अनुसार भारत में रिश्वत लेने वालों में 14 प्रतिशत के लगभग नौकरशाह 2.50 लाख रुपये से

अधिक की रिश्वत की मांग करते हैं, जबकि 84 प्रतिशत नौकरशाह 2.50 लाख रुपये तक की रिश्वत की मांग करते हैं।

तालिका क्रमांक - 4
विभिन्न कार्यों में रिश्वत लेने के मामलों का प्रतिशत

क्र.	कार्य का प्रकार	प्रतिशत
1	सही एवं वैध कार्य समय से करना	51
2	व्यावसायिक हितों का संरक्षण	16
3	सेवाएं प्रदान करने के लिए	10
4	नवीन व्यावसाय प्रारंभ करने के लिए	5
5	अन्य सरकारी अधिकारियों पर दबाव डालने के लिए	3
6	अनुचित पक्षपात करने के बदले	4
7	अन्य मामलों में	11
	कुल मामले	100

भ्रष्टाचार के कारण ही देश के भौतिक एवं मानवीय संसाधनों का दोहन भी अधिक कर देश के आर्थिक विकास पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। खातों की हेरा फेरी एवं कर चोरी से सरकार को राजस्व की हानि होती है। भ्रष्टाचार के ही कारण विभिन्न परियोजनाओं एवं विकास कार्यों को गति नहीं मिल पाती है। जन संसाधनों का भी निजी लाभ हेतु उपयोग होने लगता है देश के विभिन्न शासकीय विभागों एवं संस्थाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार परियोजनाओं के क्रियान्वयन में देरी एवं निम्न गुणवत्ता का कार्य होता है। पर्यावरणीय क्षति भी भ्रष्टाचार का अप्रत्यक्ष किन्तु गंभीर परिणाम है देश की सुरक्षा से संबंधित संस्थाओं एवं विभागों में भ्रष्टाचार से राष्ट्रीय सुरक्षा भी खतरे में पड़ सकती है। भ्रष्टाचार भारत की कोई नई समस्या नहीं है। कौटिल्य ने शासन पर लिखी अपनी पुस्तक 'अर्थशास्त्र' में गबन करने वाले और भ्रष्टाचार

करने के 40 तरीकों पर बात की है। भारत के प्रथम राष्ट्रपति ने भी प्रधानमंत्री को पत्र व्यवहार द्वारा चेतावनी दी थी, कि सरकार में लगातार भ्रष्टाचार बढ़ रहा है। सन् 1962 में कमेटी का गठन कर भ्रष्टाचार कम करने के सुझाव मांगे थे। सन् 1968 में पहली बार लोकपाल बिल संसद में आया था। तमाम कानूनों के बनने बाद भी भ्रष्टाचार लगातार बढ़ रहा था। जबकि विश्वस्तर पर मानने वालों का प्रतिशत 53 रहा है। 40 प्रतिशत लोगों का मानना था कि पिछले दो वर्षों में भ्रष्टाचार काफी बढ़ा है। 31 प्रतिशत लोगों का मानना है कि भ्रष्टाचार में कम बढ़ोत्तरी हुई है। विश्वस्तर पर देखा जाये तो पुलिस और न्यायपालिका दो ऐसे क्षेत्र हैं जहां सर्वाधिक भ्रष्टाचार व्याप्त है। पुलिस में 31 प्रतिशत लोगों ने रिश्वत देने की बात स्वीकार की वहीं न्यायपालिका में 24 प्रतिशत लोगों ने काम निकालने के लिये धन का प्रयोग किया।

तालिका क्रमांक - 5
संस्थाएं, क्षेत्र और भ्रष्टाचार से सताए लोगों का प्रतिशत

क्र.	क्षेत्र	प्रतिशत में	भारत में भ्रष्टाचार की स्थिति (अधिकतम अंक -5)
1	राजनीति	86	4.4
2	पुलिस	75	4.1
3	संसद/विधानमंडल	65	3.8
4	नीकरशाही	65	3.8
5	शिक्षा व्यवस्था	61	3.7
6	चिकित्सा और स्वास्थ्य	56	3.6
7	व्यापार एवं निजी क्षेत्र	50	3.4
8	न्यायपालिका	45	3.3
9	धार्मिक संगठन	44	3.3
10	सेना	23	2.5
11	गैर सरकारी संस्थाएं	26	2.9
12	मीडिया	28	3.2

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि लोगों ने राजनीतिक दलों को सबसे बड़ा भ्रष्ट संस्था करार दिया, इसके बाद की सबसे भ्रष्ट संस्थाओं में पुलिस और न्यायपालिका है। बीते समय में कई घोटाले उजागर होने के बाद भी सेना में भ्रष्टाचार का स्तर कम नहीं है। विश्व के 51 प्रतिशत देश ऐसे हैं जहां के राजनीतिक दलों को उनके देश की सबसे

भ्रष्ट संस्था बताया है। 55 प्रतिशत लोगों का मानना है कि सरकार बड़ी संस्थाओं की कठपुतली है जो केवल अपने हितों के लिये कार्य करती है। भारत के 36 प्रतिशत लोगों ने स्वीकार किया है कि उन्होंने सेवा प्राप्त करने के लिये रिश्वत दी है। वहीं 35 प्रतिशत लोगों का मानना है कि जल्दी कार्य निपटाने की प्रक्रिया हेतु रिश्वत दी।

तालिका क्रमांक - 6
विभिन्न संस्थाओं में सर्वेक्षण के आधार पर भ्रष्टाचार का प्रतिशत

क्र.	संस्थाएं	प्रतिशत
1	राजनीतिक दल	89
2	पुलिस	75
3	संसद एवं विधान मंडल	65
4	शिक्षा	61
5	सरकारी कर्मचारी	65

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि सबसे ज्यादा भ्रष्टाचार राजनीतिक दलों में तथा सबसे कम शिक्षा विभाग के क्षेत्र में देखने को मिलता है।

सर्वेक्षित 180 देशों में भारत का स्थान 72वाँ है।

तालिका क्रमांक - 7
सरकारी सेवाओं में रिश्वत देने वाले लोगों का प्रतिशत

क्र.	संस्थाएं	प्रतिशत
1	पुलिस	62
2	रजिस्ट्री और परमिट	58
3	यूटिलिटी	48
4	कर/कस्टम	41
5	न्यायपालिका	36
6	चिकित्सा एवं स्वास्थ्य	34
7	शिक्षा	48

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि सबसे ज्यादा रिश्वत पुलिस विभाग में तथा सबसे कम न्यायपालिका में ली जाती है किन्तु भ्रष्टाचार प्रत्येक विभाग में है। यह तालिका से स्पष्ट है।

भ्रष्टाचार एवं कालाधन आज के समाज का सबसे बड़ा शत्रु है, कानून चाहे कितना ही कड़ा क्यों न हो भ्रष्टाचार को रोकना एक गंभीर चुनौती है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री और नोबल पुरस्कार विजेता अमर्त्य सेन कहते हैं कि गरीबी दूर करना है तो भ्रष्टाचार को कम करना होगा इसके लिये तीन बातें प्रमुख हैं -

प्रथम - श्रम की प्रधानता, द्वितीय - अधिक रोजगार, तृतीय - आर्थिक दशा में सुधार। इनके अलावा भी शिक्षा का विकास, चुनावी धन व्यय पर रोक, कर चोरी के मामले में सख्त सजा, भ्रष्टाचार पर नियंत्रण, आय पर पूरा कर देने वाले कर्मचारियों, नेताओं व पेशेवर लोगों द्वारा संपत्ति की घोषणा करना अनिवार्य कर देना चाहिये, पत्रों एवं फाइलों का निपटारा निश्चित अवधि में

किया जाना चाहिये, दिये गये धन को सार्वजनिक हित में लगाना चाहिये जिन्हे सरकार की ओर से मान्यता प्राप्त हो जिनके नाम पंजीकृत हों। वांचू समिति की सिफारिश के अनुसार कृषि आय भी अन्य आय के रूप में आयकर के अधीन होनी चाहिये। संपत्ति एवं अचल संपत्ति के संबंध में पंजीकरण शुल्क कम किया जाना चाहिये। कर की चोरी को रोकने के लिये कर की उच्च दरों को कम करना चाहिये। सरकारी खरीद में पूर्ण पारदर्शिता लाना। संपत्ति के अभद्र प्रदर्शन एवं अपव्यय को रोकना, भ्रष्टाचार के मामले उजागर करने वालों को संरक्षण प्रदान करना आदि उपाय भ्रष्टाचार रोकने में काफी मददगार साबित हो सकते हैं।

कालाधन अर्थव्यवस्था के विकास में सदा ही बाधक रहा है तथा यह एक समानान्तर अर्थव्यवस्था को जन्म देता है। भ्रष्टाचार से समाज और व्यक्ति दोनों की आत्मा मर जाती है। इससे शासन और प्रशासन की नींव कमजोर पड़ जाती है। जिससे व्यक्ति, समाज और देश की प्रगति

की सभी आशाएँ और संभावनाएँ धूमिल पड़ने लगती हैं। कालेधन का विदेशी प्रवाह अर्थव्यवस्था को खोखला बना रहा है। यदि काले धन को समाप्त करना है तो सर्वप्रथम भ्रष्टाचार पर प्रहार करना होगा। भ्रष्टाचार को रोकने के लिये सरकारी नियम लागू करना पर्याप्त नहीं होगा बल्कि आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक जीवन में सच्चाई, ईमानदारी, देशभक्ति एवं नैतिकता को अपनाना होगा। भ्रष्टाचार पर चोट करने के लिये आत्मनियंत्रण ही सबसे बड़ा हथियार होगा। सरकारी विभागों एवं मंत्रालयों में यदि सभी अपने कार्यों में पारदर्शिता रखेंगे तथा जनता के प्रति जवाबदेही रखेंगे तो भ्रष्टाचार में अवश्य कमी आयेगी तथा सी.बी.आई. की स्वायत्तता तथा उसकी जनता के प्रति जवाबदेही होनी चाहिये। तब कहीं जाकर भ्रष्टाचार पर कुछ हद तक अंकुश लगाया जा सकता है। कालेधन को उत्पादक बनाकर ही देश की निर्माणात्मक, सुधारात्मक प्रक्रिया को त्वरित

गति प्रदान की जा सकती है। सकारात्मक सुधारात्मक तथा त्याग भावना एवं संतोष ही परम सुख वाला दृष्टिकोण ही इन समस्याओं का स्थायी हल प्रस्तुत कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. भ्रष्टाचार : समस्या और निदान - सी.एम.झा पृष्ठ 211
2. भारत सरकार कालेधन की रिपोर्ट 28 मार्च 2011
3. Corruption and Globalization - Shang JIn Wei
4. व्यवसायिक पर्यावरण - डॉ. एम.के.सिंह
5. भ्रष्टाचार - गुप्त कैलाशनाथ पृष्ठ - 1,24
6. रिपोर्ट कमेटी ऑन प्रिवेन्शन ऑफ करप्शन
7. भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन - एल.सी. जैन

अज्ञेय की कविताओं में व्यंग्य: विविध रूपों में

डॉ. हरप्रीत कौर

सहायक प्रोफेसर, राजकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, चण्डीगढ़



shodhshree@gmail.com

सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' बीसवीं शताब्दी के एक ऐसे विशिष्ट व्यक्तित्व के धनी हैं जिनकी प्रतिभा इन्द्रधनुष के रंगों के समान है। साहित्य जगत में आपका नाम बड़े आदर से लिया जाता है। उन्हें 'प्रयोगवाद' का 'शलाका-पुरुष' और 'नयी कविता का सूर्य' आदि अभिधाओं से युक्त किया जाता रहा है। अज्ञेय की हिन्दी साहित्य जगत में शीर्षस्थानीयता केवल प्रयोगवाद या नयी कविता के कारण नहीं है बल्कि उन्होंने साहित्य की सभी विधाओं अर्थात् कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना, ललित निबन्ध, डायरी, यात्रा-वृत्तान्त, सम्पादन आदि के माध्यम से साहित्य जगत को ज्यादा बड़े परिप्रेक्ष्य में समष्टिमूलक बनाया है। कहानीकार, निबन्धकार आदि इन सारी भूमिकाओं से होकर गुजरने के बाद भी उन्होंने यही कहा है कि मेरी जैसी दृष्टि है-उसकी जो विशिष्टता है और जो सीमा है- उसे देखते हुए मैं कवि ही रहूँगा, उपन्यासकार नहीं बनूँगा। 'अज्ञेय' का काव्य हमें एक ऐसी दुनिया में ले जाता है जिसका मूल्यांकन करने के लिए एक नयी दृष्टि अपेक्षित है। वे सेतु कवि हैं। जो छायावाद के स्वर्णयुग से लेकर नयी कविता और साठोत्तरी कविता की प्रवृत्तियों तक वे विंध्याचल की भाँति नज़र आते हैं। 'अज्ञेय' का व्यक्तित्व इतना प्रखर है जो आधुनिक भी है, नया भी और निरन्तर अडिग चलने वाला है। इसीलिए आप हिन्दी साहित्य का गौरव हैं।

व्यंग्य अभिव्यंजना की एक रोचक प्रणाली है। व्यंग्य विरोधी और आत्मीय दोनों के प्रति होता है। जैसे, तुलसी का 'खल बन्दना' प्रकरण और सूर की गोपियों का 'भ्रमरगीत' प्रकरण। उसके पीछे छिपे मानसिक उद्देश्य का लक्ष्य अपना अलग-अलग होता है। व्यंग्य में विनोद, चुहल, उपहास, युयत्सा, आक्रोश, खीझ, निन्दा, कटूक्ति कुछ भी हो सकता है। व्यंग्य का मूल आधार किसी विषय विशेष का होता है। जब किसी विषय या व्यक्ति के ऊपर हम कटाक्ष करते, ताना मारते, टीका-टिप्पणी करते हैं तो कहीं न कहीं हमारी मानसिकता उसके साथ ठीक नहीं बैठ रही होती। व्यंग्य दीर्घकालिक और तात्कालिक दोनों ही हो सकता है।

'अज्ञेय' का काव्य, सत्य और अर्थ की खोज का काव्य है। जीवन की अर्थवता की उपलब्धि ही उनकी काव्य-यात्रा का उद्देश्य है। उनकी मान्यता है कि भाषा की खोज द्विवेदी, गुप्त और प्रेमचन्द ने की, शब्द की खोज फन्त, निराला और हजारी प्रसाद द्विवेदी ने की और अर्थ की खोज नये कवियों और 'अज्ञेय' ने। अज्ञेय की कविताओं में व्यंग्य नमक की धुरी के समान है। अज्ञेय की व्यंग्य कवितायें सपाट बयानी और गम्भीर बानी दोनों ही कोटियों की हैं कभी वे तरस खाते हैं, तो कभी क्रोध पीते, कभी निरहीता पर मुस्कराते हैं, तो कभी जली-कटी सुनाते हैं, कभी मार-मार कर सहलाते हैं, तो कभी सहलाकर मारते हैं, कभी गधे को रेंकने के लिये आदेश कभी गधे की तरह रेंक। पीड़ा को व्यंग्य का रूप देकर कविता साहित्य बना देना अज्ञेय का गुण-धर्म है। अज्ञेय की व्यंग्य कविताएं अधिकांशतः परम्परा, रुढ़ि, छायावाद, समाज में प्रचलित अवैज्ञानिक धारणाओं के प्रति, वर्ग चरित्रों के प्रति, प्रभुता-सम्पन्न वर्ग आदि पर तीखा व्यंग्य करती हैं।

सामाजिक परम्पराओं के प्रति व्यंग्य

सामाजिक संस्कारों के कारण जो परम्परायें चली आ रही हैं, उनके प्रति व्यंग्य से काम लिया गया है। अज्ञेय की रचनाओं में समाज-बोध की स्थिति एक विशिष्ट रूप में दिखाई पड़ती है। अज्ञेय की कविता 'जन्म दिवस' इसका उद्घाटन करती है। अज्ञेय अपने जन्म को अपने पिता की पितृक्रम से मुक्ति मान लेते हैं क्योंकि उसे मात्रा नियति समझते हैं। 'जन्म दिवस' कविता में विचार पूर्ण व्यंग्य है। अज्ञेय पिता के माध्यम से प्राप्त जीवन की ओर संकेत करते हैं। चली आती हुई पितृक्रम परम्परा पर व्यंग्य है। वह सुखी मरेगा, क्योंकि वह जीवन की धजियाँ उड़ाता रहा है। जिनमें कवि चली आती हुई धरणाओं की ओर जीवन मूल्यों से विद्रोह करता है।

मैं मरूँगा सुखी
क्योंकि तुमने जो जीवन दिया था -
पिता कहलाते हो तो
जीवन के तत्त्व पाँच
चाहे जैसे पुंज-बद्ध हुए हों,
श्रेय तो तुम्ही को होगा-
उससे मैं निर्विकल्प खेला हूँ-
खुले हाथों उसे मैंने वारा है-
धजियाँ उड़ायी हैं।
तुम बड़े दाता हो।

वर्ग भेद

अज्ञेय ने समाज के वर्ग चरित्रा के पदों को खोलने का प्रयास भी किया है। वर्ग भेद, व्यवसाय, पेशा, जाति, धर्म, कर्म आदि को आधार बनाया है। इसीलिये कहीं पर तुलना की गई है, कहीं प्रतीकों का सहारा भी लिया है। 'शोषक भैया' कविता इसी कोटि में आती है। जिसमें शोषित, शोषक भैया से निवेदन करते हैं। इस निवेदन में बहुत ही तीखा व्यंग्य है।

डरो मत, शोषक भैया,
पी लो।
मेरा रक्त ताजा है
मीठा है
द्रव है।
पी लो, शोषक भैया
डरो मत।

इस पिलाने और पीने के पीछे बड़ी सम्बन्ध है, जो एक दूसरे को देखकर आँखों में खून भर लेता है।

महानगरीय सभ्यता

अज्ञेय ने अपनी कविताओं में महानगरीय सभ्यता के सच को उजागर किया है। लोग गाँव से नगर में आते हैं और भवनों का निर्माण कर स्वयं गंदी बस्तियों में रहते हैं। इसी तरह जब एक भोली-भाली ग्रामीण बाला नगर जाती है तो उसका किस प्रकार शोषण किया जाता है। 'अज्ञेय' ने अपनी कविता 'एक कली' के रूप में प्रस्तुत किया है।

यह कली,
जो देहात की गली में छुट-पुट अंधेरे में पली थी,
जो भोली-भाली थी,
शहर के चमचमाते राजपथ के प्रकाश में छली गई।

वह झरी नहीं,
यदि कहीं वह गई तो फिर उस बहाव से निकल नहीं सकी।
वह लहर में नहीं, भंवर में फँस गई।
वह काल के द्वारा इस ली गई।

'अज्ञेय' की कविताओं में नगरीय सभ्यता, यन्त्रीकरण और उच्च वर्ग के लिये विरोध के साथ-साथ तीखा व्यंग्य है। यह नगरीय संस्कृति मानवता को कुचलने एवं अपदस्थ करने के लिये तत्पर है।

हास्य-प्रधान व्यंग्य

कई कविताओं में अज्ञेय बड़े शिष्ट और सभ्य ढंग से हास्य-प्रधान व्यंग्यात्मक चुटकियाँ लेते दिखाई देते हैं। 'नयी कविता: एक सम्भाव्य भूमिका' नामक कविता जो उनकी कविताओं में कुछ अलग ढंग की है। इसमें कवि ने नयी कविता के आलोचकों पर तीखा व्यंग्य किया है।

और हम जीना नहीं चाहते
हमारे पाये सत्य के मसीहा तो
हमारे मरते ही बन्धु आप बन जायेंगे-
क्षण के अखण्ड पारवार का
आज हम आचमन करते हैं
और मसीहाई?
संकल्प हम उसका
करते हैं आपको
जम्बूद्वीपे भरत खंडे
अमुक शर्मणामया।

'अज्ञेय' की कविताओं में समाज के उस हर वर्ग पर व्यंग्य किया गया है। जिसने अपने मुख पर से सत्य को छुपाने का प्रयास किया है।

नगर जीवन पर व्यंग्य

अज्ञेय की कविताओं में कहीं न कहीं नगर जीवन की भीड़, संस्कृति, कुंठा, यांत्रिक दबाव और वणिग वृत्ति से अपनी निजता को समेट कर दूर भागने का प्रयास है। 'अज्ञेय' 'हरी घास पर क्षण भर' शीर्षक नामक कविता में इसी बात पर व्यंग्य करते हैं।

आओ, बैठो

तनिक और सटकर, कि हमारे बीच स्नेह भर का

व्यवधन रहे, बस

नहीं दरारें सभ्य शिष्ट जीवन की।

ग ग ग ग ग ग

नहीं सुने हम वह नगरी के नागरिकों से

जिनकी भाषा में

अतिशय चिकनाई है साबुन की।⁹

आदिम जीवन की गंध कवि-मन को आकर्षित करती है। दिखावे से, छल से कवि को नफरत होती है।

गांव के यथार्थ जीवन पर व्यंग्य

'अज्ञेय' की कविताओं में जीवन के हर क्षेत्र को देखा गया है। देश की छोटी-बड़ी समस्याओं पर व्यंग्य करके समाज को देश को जगाने का प्रयास भी है। कवि का कहना है वह देश हरा-भरा दिखाई देता है, किन्तु इससे यह अनुमान नहीं कर सकते कि गांव के लोग सुखी हैं। हरियाली ऊपरी है, उसके भीतर का यथार्थ बड़ा कटु है। जहां भूख और बेबसी का आलम है।

हरे भरे हैं खेत

मगर खलिहान नहीं

बहुत महलों का मान

मगर दो मुट्ठी धन नहीं।¹⁰

कवि का ध्यान उन उपेक्षित पर्वतीय गांव पर भी गया है जिनको सुनने वाला कोई नहीं।

नये कवि और नयी कविता पर व्यंग्य

प्रयोगवादी कविता और कवि के स्वरूप के निर्माण में अज्ञेय जी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उनकी 'नये कवि के प्रति' नामक कविता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह कविता अनेक विवादों का विषय बनी है। इस कविता में कवि केवल व्यंग्य ही नहीं कर रहा था, वरन् उसके पीछे वह आक्रोश भी निहित था, जिसका शाब्दिक निषेध करना उसको प्रयोगवादी कवि को, आत्मगौरव की रक्षा के लिए आवश्यक प्रतीत हुआ।¹¹

आ, तू आ

हैं, आ,

मेरे पैरों की छाप छाप पर रखता पैर

मुझे मुंह भर भर गाली देता-

आ, तू आ

मैं चला नहीं था पथ पर

पर मैं चला इसी से

तुझको जंगल में भी ये पद चिन्ह मिले हैं

कांटों पर ये एकोन्मुख संकेत लहू के,

बालू को ही लिखत मिटाने में ही

जिसको फिर से तू लिख देगा ।

जयी, युगनेता पथप्रदर्शक

आ, तू आ

ओ गतानुगामी।¹²

इस कविता की बड़ी तीखी प्रतिक्रिया हुई। राजेन्द्र किशोर ने इस कविता के उत्तर में 'नये कवि का वक्तव्य' लिखा। कई कवियों को ऐसा प्रतीत हुआ कि यह कविता किसी बाहर के प्रयोगवादी कवि के प्रति न होकर अपने भीतर के कवि को सम्बोधित करके लिखी गयी है। जिसे इस बात का अहं हो गया है कि प्रचलित कविता के लिए नयी कविता का नाम उसी ने सुझाया था।

काल्पनिक संसार में रहने वाले कवि पर व्यंग्य

बदलती जीवन स्थितियों को देखना, महसूस करना के तरीकों में यदि परिवर्तन नहीं आया तो कविता जीवन से कट जाएगी। यदि हम प्रेम की ही बात करें तो आज का प्रेम कालिदास के समय जैसा नहीं है। यह वह भी नहीं है जो प्रसाद और निराला के लिए था। नए अनुभव के प्रति अपने को न खोलने वाला, अपने ही बनाए काल्पनिक संसार में भटकने वाला टिपिकल कवि यहां कवि के व्यंग्य बाणों का निराणा बना है। 1954 में 'इंद्रधनुष रीढ़ि हुए ये' में संकलित कविता 'हमने पींधे से कहा एक बार' में फिर कवि की अपनी ही बनाई सुरक्षित दुनिया में रहने पर व्यंग्य बाण छोड़े गए हैं-

किंतु तुम (नभचारी) मिट्टी की ओर मत देखना,

किंतु तुम (गतिशील) जड़ें मत छोड़ना,

किंतु तुम (प्रकाश सुत) टोहना न कभी अन्धकार को,

किंतु तुम (रससिद्ध) कर्दम से नाता मत जोड़ना,

किंतु तुम (स्वयम्भू) पुष्टि की अपेक्षा मत करना।¹³

कवि यहां पर यही समझाने का प्रयास कर रहा है जीवन में नए को अपनाना कवि कर्म है। जैसे-जैसे बाह्य वास्तविकता बदलती है वैसे-वैसे हमारी सम्बन्ध जोड़ने की प्रणालियां भी बदलती हैं, और अगर नहीं बदलती तो हमारा संबन्ध टूट जाता है।

ईर्ष्यामिश्रित बूढ़ों पर व्यंग्य

'अज्ञेय' की व्यंग्य की यह विशेषता है कि उनकी मर्म-स्पर्शोभेदक दृष्टि ने समाज के उस वर्ग पर व्यंग्य किया है जिनसे समाज का या तो कोई वर्ग मस्त है या उनकी आचरणहीनता समाज के लिए श्रेयस्कर नहीं है। 'मरु और खेत' काका भतीजों की कविता है। विशाल खेत के बीच अपनी प्रभुता का ऐश्वर्य फैलाये मरु और इसके बीच छोटा सा खेत का टुकड़ा न केवल भौगोलिक मूर्त विधान है, परन्तु रेगिस्तानी ऐश्वर्य ओढ़े हुए समाज के वे धिनौने पुरुष हैं जिन पर कोई असर नहीं होता। वे समाज की नई उभर रही पीढ़ी को देख नहीं सकते। मरु खेत के चूना लगाने की फिराक में हैं-

मरु बोला:

हाय यह हास्यास्पद ममता
ममता ही सर्व दुख मूल है।
इस पर उस रजत केशी पसरे पड़े हुए खूसट
मरु को खेत ने जबाब दिया-
किन्तु काका, आपसे क्या कहूं और ----
नव सर्जना में जो
अपने को होम कर देते हैं आनन्द मग्न
उनकी तो दृष्टि और होती है।¹⁴

यह कविता, निकम्मे बूढ़े खूसटों की ईर्ष्यामिश्रित दृष्टि को भेदकर उसके भी पार निकल जाती है।

प्रतीकात्मक व्यंग्य

'अज्ञेय' की कविताओं में कहीं-कहीं प्रतीकात्मक व्यंग्य भी मिलता है। शब्दावली में प्रतीक भी सहित रहते हैं, जितने बोलचाल की शब्दावली में। कवि के खिचड़ी प्रयोगों में व्यंग्यात्मक इलकापन रहता है, किन्तु कभी-कभी ये व्यंग्य भी बड़े चुटीले होते हैं। 'सरस्वती पुत्रा' नामक कविता की पंक्तियों में प्रतीकात्मक व्यंग्य और भाषा के प्रति उनकी समन्वयात्मक दृष्टि का परिचय मिलता है।

बाहर वह
सोया-पाया मैला-उजला
दिन-दिन होता जाता व्यस्क
दिन-दिन धुँलाती आंखों से
सुस्पष्ट देखता जाता था
पहचान रहा था रूप
पा रहा और बूझता शब्द
पद दिन-दिन अधिकाधिक हकलाता था
दिन-दिन पर उसकी धिग्वी बंधती जाती थी।¹⁵

इन पंक्तियों में जहाँ प्रचलित शब्दों का स्वतन्त्रा प्रयोग है वहाँ संस्कृत के तत्सम शब्दों के प्रयोग ने कव्य की गंभीरता को सुरक्षित रखा है।

अनैतिक आचरण पर व्यंग्य

सामाजिक विडम्बनाओं के प्रति जितना विद्रूपमय व्यंग्य भाव नयी कविता में परिलक्षित होता है, वह हिन्दी साहित्य में अभूतपूर्व है। अज्ञेय की कई कविताओं में शहरी रहन-सहन पर व्यंग्य है। उनके आचरण पर व्यंग्य है। शहर के लोगों के अनैतिक आचरण पर बड़े ही कटाक्ष शब्दों पर व्यंग्य किया गया है। जिससे वहाँ का सत्य सामने आता है। 'साँप' कविता के माध्यम से उन्होंने इसी बात को व्यक्त किया है।

साँप ।

तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना भी तुम्हें नहीं आया
एक बात पूछूँ- (उत्तर दोगे?)
तब कैसे सीखा इसना
विष कहाँ पाया?"

'अज्ञेय' कहीं न कहीं शहर के लोगों की अनैतिकता, स्वार्थ भावना पर व्यंग्य करते हुए वहाँ के जीवन के सत्य को उजागर करते हैं। बाहर से चमकने वाला जीवन अन्दर से कितना खोखला है। यही इस जीवन का कटु सच है।

निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है अज्ञेय व्यंग्य के लिए तरह-तरह के रास्ते खोजते हैं। समाज की प्रत्येक समस्या पर आपने करास व्यंग्य किया है। कहीं वह शब्दों को संस्कृतगर्भा बना देते हैं, कहीं देशज, कहीं पर शुद्ध भारतीय का प्रयोग करते हैं। कभी सपाट बयानी करते हैं, तुलना करते हैं, चरित्रांकन करते हैं आदि में समाज के लिए भला देखते हैं। अज्ञेय का व्यंग्य कहीं पर तीखा, कहीं पर नर्म और कहीं पर कठोर हो जाता है अज्ञेय का व्यंग्य एक बहुत बड़ा हथियार है जो भागता नहीं समस्याओं को सहलाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ. नरेन्द्र देव वर्मा अज्ञेय और समकालीन काव्य, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1979, पृ. आमुख
2. डॉ. मदन गुलाटी अज्ञेय की काव्य साधना, सी. डी. पब्लिकेशन, करनाल, दो शब्द
3. डॉ. मदन गुलाटी अज्ञेय की काव्य साधना, - पृ. 14
4. डॉ. ओमप्रकाश अवस्थी 'अज्ञेय कवि' ग्रन्थम, कानपुर, 1977, पृ. 199
5. वही, पृ. 201-202
6. वही, पृ. 203
7. डॉ. मदन गुलाटी अज्ञेय की काव्य साधना, - पृ. 29

8. डॉ. केदार शर्मा अज्ञेय साहित्य प्रयोग और मूल्यांकन, अनुपम प्रकाशन, जयपुर, 1969, पृ. 220
9. सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी अज्ञेय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, पृ. 60
10. डॉ. मदन गुलाटी अज्ञेय की काव्य साधना, - पृ. 29
11. डॉ. नरेन्द्र देव वर्मा अज्ञेय और समकालीन काव्य, पृ. 48
12. वही पृ. 48
13. प्रणयकृष्ण अज्ञेय का काव्य प्रेम और मृत्यु, आधार प्रकाशन, पंचकूला, 2005, पृ. 60-61
14. डॉ. ओमप्रकाश अवस्थी 'अज्ञेय कवि' पृ. 204
15. डॉ. केदार शर्मा अज्ञेय साहित्य प्रयोग और मूल्यांकन, पृ. 218
16. सं. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी अज्ञेय, पृ. 60-61
17. 'अज्ञेय' चुनी हुई कविताएं, राजपाल, दिल्ली, 2006
18. कृष्ण, प्रणय अज्ञेय का काव्य प्रेम और मृत्यु, आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा), 2005
19. कुमार, डॉ. अरुण नई कविता: कथ्य एवं विमर्श, चित्रालेखा प्रकाशन, इलाहाबाद, 1988
20. कुलश्रेष्ठ, डॉ. मथुरेश नन्दन अज्ञेय का अन्तः प्रक्रिया साहित्य, ब्रजकिशोर कुलश्रेष्ठ प्रकाशन जयपुर-1984
21. मानवे, विश्वम्भर आधुनिक कवि, लोकभारती प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008
22. मिश्र, सं. बतीन्द्र जितना तुम्हारा सच है समग्र कविताओं से चयन-वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2011
23. मिश्र, डॉ. रामदरश आधुनिक हिन्दी कविता: सर्जनात्मक संदर्भ, इंद्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, 1986
24. सिंह, डॉ. विजयपाल हिन्दी साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, राधकृष्ण, नयी दिल्ली, 2011
25. तिवारी (सं) विश्वनाथ प्रसाद अज्ञेय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली
26. तिवारी, विश्वनाथ प्रसाद समकालीन हिन्दी कविता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2010
27. शर्मा, डॉ. ब्रजमोहन कवि अज्ञेय विश्लेषण और मूल्यांकन, इतिहास शोध संस्थान, 1993
28. शर्मा, डॉ. केदार अज्ञेय-साहित्य: प्रयोग और मूल्यांकन, अनुपम प्रकाशन, जयपुर, 1969
29. शर्मा, डॉ. शशि समकालीन हिन्दी कविता: अज्ञेय और मुक्तिबोध के सन्दर्भ में, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1995
30. उपाध्याय, करुणाशंकर आधुनिक कविता का पुनर्पाठ राधकृष्ण, नयी दिल्ली, 2011
31. वर्मा, डॉ. नरेन्द्र देव अज्ञेय और समकालीन काव्य, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1979
32. चतुर्वेदी, रामस्वरुप हिन्दी काव्य का इतिहास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2007
33. अवस्थी, प्रो. पुष्पिता आधुनिक हिन्दी काव्यालोचना के सौ वर्ष, राधकृष्ण, नयी दिल्ली, 2006
34. अवस्थी, डॉ. ओमप्रकाश 'अज्ञेय' कवि, ग्रन्थम, कानपुर, 1977
35. गुलाटी, डॉ. मदन अज्ञेय की काव्य साधना, सी. डी. पब्लिकेशन्स, करनाल
36. गर्ग डॉ. शेरजंग स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कविता में व्यंग्य, साहित्य भारती, दिल्ली, 1973

जैन सन्तों का पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में योगदान

डॉ. रवीन्द्र टेलर

सहायक आचार्य, मीलाना आजाद विश्वविद्यालय, जोधपुर



shodhshree@gmail.com

पर्यावरण जिसका शाब्दिक अर्थ होता है परि+आवरण अर्थात् हमारे चारों ओर का वातावरण अर्थात् जो हम अन्न, जल खाते जो प्राण वायु लेते, जिससे हमारा जीवन आगे बढ़ता यही पर्यावरण है। पर्यावरण के संरक्षण की बात जहाँ वैदिक धर्म में मिलती वही पृथ्वी को बचाने की बात महात्मा बुद्ध ने अपने शिष्य आनंद से कही। धरती को बचाने के उपदेश जहाँ ईसा मसीह ने दिये वहीं बात जैन तीर्थंकरों ने बढ़ चढ़कर कही।

महावीर स्वामी ने सदैव पर्यावरण के संरक्षण एवं परिवर्धन को आधार बनाकर अपने शिष्यों को उपदेश दिये जिसमें प्रकृति के साथ जवाब देही न रखने को प्राणी जगत के लिए खतरा बताया है।

जैन धर्म में दो हजार पांच सौ वर्ष पूर्व ही वनस्पति जगत में आत्मा के अस्तित्व को सिद्ध कर दिया था जिसे आज विज्ञान भी मानता है।

आचारंग, दशवैकालिक, मूलाचार, भगवती आराधना आदि समस्त जैन ग्रन्थों में षड्कायिक जीवों की हिंसा से विरत रहने का उपदेश दिया गया। पर्यावरण चेतना पशुपक्षियों और वनस्पति जगत से विशेष सम्बन्ध है।

जैन संत ऐसा मानते हैं कि प्रकृति के नियमों का उल्लंघन करने से हम नई-नई विपदाओं को आमंत्रित करते हैं। यह उल्लंघन प्रायः लालच और स्वार्थ की वजह से होता है।

पर्यावरण संरक्षण और जैन धर्म

जैन मुनियों ने सदैव पर्यावरण के बचाव हेतु प्रयत्न किये उनका मानना था कि सभी जीवों का प्रकृति से गहरा सम्बन्ध है। सभी एक दूसरे पर निर्भर हैं।

किसी एक के साथ भी हिंसा से पर्यावरण में गड़बड़ हो जाती है। इसी कारण जैन धर्म में अहिंसा सिद्धान्त सर्वोपरी है। जैन मुनियों ने अहिंसा आधारित वन्य संरक्षण पर बल दिया एवं जीवों की सुरक्षाएँ एक विशुद्ध पर्यावरण के निर्माण पर बल दिया। जैन संतों ने पृथ्वी के प्रदूषण के भी अनेक कारण बताएँ जिसमें कृषि कार्यों में काम में लिये जाने वाले रासायनिक उर्वरक जंगलों का अविरल कटाव एवं खनन तथा परमाणु परीक्षण भी पृथ्वी के विनाश के लिए उत्तरदायी बने हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के विशेषज्ञों ने कहा है कि कीटनाशक दवाओं के अंधा-धुंध प्रयोग से माताओं के दूध BHC के अल्फा बीटा गामा व डेल्टा आई सोमल मिले हुए है। पेसटीसाइड भी वर्षा जल के साथ घुलकर पृथ्वी में पहुँचते हैं व समुद्री जीवों के लिए खतरा बनते हैं। डी. डी. टी. के प्रयोग से कैसर यकृत में सूजन एवं पीलिया जैसे रोग आम हो गये हैं साथ ही इन कीटाणुनाशकों से लाखों पक्षी मर जाते हैं। खाद्य पदार्थों में मिलने से ये कीटनाशक दवाएँ गर्भपात एलर्जी एवं मानसिक रोग उत्पन्न कर देती हैं।

मिट्टी या भूमि पर्यावरण का महत्वपूर्ण अंग है। जैनधर्म की दृष्टि से वह एकेन्द्रिय जीव है इसमें चेतना है यह सांस भी लेती है और गंदगी को दूर करती है। मिट्टी का प्रदूषण वनस्पति और पशु-पक्षी तथा मानव जगत को प्रभावित करता है जहाँ मिट्टी लवणमय हो जाती है वहाँ वर्षा जल नीचे नहीं जा पाता और फसले भी नहीं उग पाती डी. डी. टी. नाइट्रोजन तथा फास्फोरस उपयोगी अवश्य है पर मिट्टी पर बुरा प्रभाव पड़ता है। सीसा, पारा, केडमियम आदि धातुएं मिट्टी पर फेंक दी जाती हैं जिससे प्रदूषण बढ़ जाता है।

जल प्रदूषण एवं जलकायिक जीव

जल एक प्राकृतिक स्रोत है पृथ्वी का दो तिहाई भाग जल होते हुए भी मानव उपयोग योग्य जल की मात्रा बहुत कम है अधिकांश जल समुद्री, जल है उपयोग भोग्य जल के स्रोत, धाराएं, झीले, नदियां, तालाब, जलाशय, संचित वर्षा जल झरने व कुएँ हैं। जल वस्तुतः जीवन है सर्वोपयोगी है इसलिए संरक्षणीय जैन संतो द्वारा जल के परिशोधन के निम्न उपाय बताए हैं :-

1. जल में विद्यमान क्लेशियम तथा मैग्नीशियम के कार्बोनेट और सल्फेटो को दूर करने की दृष्टि से जल को उबाल लेना सोडा आदि के द्वारा उसके क्षारत्व को कम कर देना।
2. पेयजल के स्रोतो, तालाब, नदी कुंआ आदि के चारों ओर दीवार बनाकर गंदगी से दूर रखना।
3. नदी, तालाबों आदि के आस-पास स्नान करना बस्त्रादि धोना वर्जित हो।
4. पेयजल के स्रोतो में पशुओं को न नहलाये।
5. कृषि कार्यों में कीटनाशक दवाओं का प्रयोग कम हो।
6. औद्योगिक जल को पेयजल स्रोतो से दूर रखा जाए।
7. जल में अणु परीक्षण बंद हो।
8. नदी-नालों के पास में कल-कारखानों को बंद किया जाए।

जल प्रदूषण से जल कायिक जीवों की हिंसा होती है आचरांग सूत्र में कहा गया है कि जो आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करता है। उसे जलीय चेतना को भी स्वीकार करना चाहिए। इसका कारण है जल द्रव है वह शस्त्र से प्रभावित नहीं होता उसमें अंधे या बहरे आदि की तरह अव्यक्त चेतना होती है और सभी जीवों के समान उसमें कष्टानुभूति होती है। आश्चर्य है लोग मान-सम्मान पूजा प्रतिष्ठा या जन्म मरण के दुःख से मुक्त होने के लिए लोग जीवों का आरंभ-समारंभ करते हैं।

पृथ्वी के नीचे ऊपर कूप, तालाब, नदी, सरोवर, पर्वतीय जल स्रोत, झरने, द्वीप, समुद्र और जलाशय सभी स्रोतो में औषधियां मिली रहती है इनमें स्नान करना स्वास्थ्यवर्द्धक होता है। ऐसे विशुद्ध जल में तीर्थंकर नेमिनाथ को नहलाया गया था। जल की शुद्धता एवं

उपयोगिता के बारे में जैन मुनियों ने अनेक बातें कही जैन परंपरा में जल के परिमित उपयोग पर बल दिया गया है उसे छानकर काम में लेने का विधान बनाया गया है। अनर्थ दण्ड नामक पाप को इससे जोड़कर जैनधर्म में पर्यावरण को और भी सुगठित कर दिया है। जैन धर्म में गंगा, नर्मदा, नदियों में स्नान करने से पाप धुलते हैं इस प्रकार के अंधविश्वास का भी खंडन किया है।¹

सूर्य और पर्यावरण

सूर्य हमारे पर्यावरण का अभिन्न अंग है वह समुद्र और नदी-नालों के पानी को भाप के माध्यम से सौंकर वर्षा करता है वहीं वर्षा खेती को फैलाती है और हमारे लिए पीने का पानी देती है पशु पक्षी एवं समूचा वनस्पति जगत, वायु जगत सूर्य की कृपा पर निर्भर है सूर्य, सौर मंडल का केन्द्र है ग्रह नक्षत्र उससे प्रभावित होते हैं। सौर विकिरणों का संबंध महामारी जैसी विकट बीमारियों और भूकंपों से रहता है। पृथ्वी का सारा मौसम सूर्य पर आधारित होता है।

सूर्य की तरह चन्द्रमा भी हमारे पर्यावरण को प्रभावित करता है। डॉ. फ्रेंक ब्राउन ने स्पष्ट किया है कि शुक्ल पक्ष में पीधे लगाने से उनमें बीस प्रतिशत की बढ़ोतरी होती है चन्द्रकलाओं से प्रभावित होकर हमारे शरीर पर भी चन्द्रकलाओं का प्रभाव पड़ता है। सूर्य किरण चिकित्सा आज कल लोकप्रिय होती जा रही है। प्राचीनकाल में इसका अच्छा प्रचार था। हमारा चैतन्य जगत उदगल तत्व से प्रभावित रहता है हमारा शरीर वाणी और मन भी पददलित है वर्ण, रंग, गंध, रस और स्पर्श उसमें रहते हैं। रंगचिकित्सा शरीर के साथ ही हमारी प्रकृति को परिवर्तित करने में भी सहायक बनती है। सूर्य की किरणों में सात रंग पाये जाते हैं इनमें से तीन रंग महत्वपूर्ण होते हैं नारंगी, हरा और नीला, लाल-पीला मिश्रित नारंगी रंग रक्त संचार में वृद्धि करता है। मांसपेशियों को स्वस्थ रखता है। गुर्दे और आंतों को प्रभावित करता है। इच्छाशक्ति को विकसित करता है। कफ जनित रोगों में लाभदायक होता है। स्रव्य रोग गठिया और पक्षाघात में गुणकारी है। यह खून में लाल कणों की पूर्ति करता है। मोटापा कम करता है और माँ के स्तन में दूध की वृद्धि करता है।

जैन संतों के अनुसार पीले और नीले रंग से मिश्रित हरा रंग नाड़ी संस्थानों तथा मस्तिष्क को बल देता है, मांसपेशियों का निर्माण करता है, मन को प्रसन्न करता है। प्राकृतिक रंग होने से यह मैत्री भावना को उत्पन्न करता है। स्वार्थ भाव को कम करता है यह रंग वातजनित रोगो पर अधिक लाभकारी होता है। मलेरिया, नेत्र रोग, चर्म रोग, सूखी खांसी, अल्सर, मधुमेह, कैंसर, सुजाक, रक्त चाप आदि रोगों में भी कार्यकारी है।² जैन संत ऐसा भी बताते हैं कि नीला रंग अम्लीय होता है यह कीटाणुनाशक है। जलन को शांत करता है आध्यात्मिक विकास में सहायक होता है। मन को शांत और शिथिल करता है। इस रंग का प्रयोग विशेषतः पित्त जनित रोगों पर होता है सिरदर्द, शरीरदाह, रक्तचाप, टॉसिल, डायरिया, मिर्गी, पीलिया आदि रोगों में उपयोगी है।

जैन संत ऐसा भी मानते हैं कि दवा जिस रंग की बनानी होती हो उसी रंग की कांच की बोटल में दवा भरकर रखनी चाहिए। रंग चिकित्सा में मानसिक एकाग्रता एवं ध्यान का अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है इस प्रकार सूर्य के माध्यम से रंग चिकित्सा व्यक्तित्व विकास की दृष्टि से एक महत्वपूर्ण अंग है इससे पर्यावरण तो विशुद्ध होता ही है उसके साथ ही भाव चिकित्सा भी हो जाती है। सूर्य के अतिरिक्त चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु, वरुण और प्रजापति का भी उपयोग किया जा सकता है।

अग्नि प्रदूषण और जैनधर्म

जैन संत अग्निकायिक जीवों में चेतना मानते हैं इसलिए जैन मुनि विजली का उपयोग नहीं करते। पर्यावरण की दृष्टि से सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि हम यह निश्चित कर ले कि अग्नि में भी जीव होता है आचारांग में यह बताया गया कि अग्नि में क्योंकि ऊष्मा शक्ति होती है प्रकाश शक्ति होती है इंधन के होने से उसकी वृद्धि बढ़ती-घटती रहती है, इसलिए उसका अस्तित्व है।

वैज्ञानिकों के अनुसार भी प्राण वायु ऑक्सीजन के बिना अग्नि प्रज्वलित नहीं हो सकती इसलिए जैन संत अग्निकायिक जीवों की हिंसा से विरत रहता है वायुमण्डल में प्रदूषण को देखते हुए तीर्थंकर महावीर का यह उपदेश बड़ा सार्थक हो जाता है कि जो लोग अब्भाईक्खी से अत्ताण पुनः अब्भाईक्खी अर्थात् अग्निकायिक जीवों को पीड़ित करना स्वयं को पीड़ित करना है।

वायु प्रदूषण और जैन धर्म

वायु में वायुकायिक जीव रहते हैं इसलिए जैन मुनियों को पंखे से भी हवा करना विहित नहीं माना गया है। इसी तरह पसीने से लतपत होने पर हवा आने मार्ग पर रुक जाना चन्दन, खस आदि गंध द्रव्यों की सुगन्धी इसकी ज्वाला और प्रतिपक्ष वायु से भी वायुकायिक जीवों की हिंसा होती है। पैरों को पीट-पीटकर चलने से उत्पन्न वायु, धौकनी से उत्पन्न वायु, गीले कपड़ों के निचोड़ने से उत्पन्न वायु डकार या उच्च वास से गत वायु, पंखा डालने से उत्पन्न वायु ये वायुकायिक जीवों को कष्ट पहुंचाती है। वायु की महत्ता को देखते हुए तीर्थंकर महावीर ने वायु को एकेन्द्रिय जीव माना और उसमें व्याप्त चेतना के अस्तित्व का निर्धारण किया। आचारांग के शस्त्र परिज्ञों के सम उद्देश्य में वायु की सजीवता का प्रतिपादन किया गया है और ये भी कहा गया है कि यदि व्यक्ति की आध्यात्मिक चेतना जाग्रत हो गई है तो वह वायुकायिक हिंसा से विरत रह सकता है।

ध्वनि प्रदूषण और जैनधर्म

जैनदर्शन में शब्द को पुद्गल का पर्याय माना गया है क्योंकि वह किसी स्कंद विशेष से टकराने पर उत्पन्न होता है वह आकाश का गुण नहीं होता है पुद्गल द्रव्य का विकार है तीर्थंकर महावीर ने वायुकायिक हिंसा से बचने के लिए जो उपदेश दिये वे बड़े महत्वपूर्ण हैं उन्होंने वाद्य ध्वनि को भी निषेध किया। जैन मुनि बताते हैं कि ध्वनि दो प्रकार की होती है:- (1) श्रव्य और (2) पराश्रव्य। श्रव्य तो सुनी जाती है पर पराश्रव्य नहीं सुनी जाती। श्रव्य ध्वनियों की तीव्रता स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती है पर पराश्रव्य ध्वनि तरंगों का उपयोग स्वास्थ्य के सुधार में उपयोगी है जैन मुनि ऐसा मानते हैं कि रंग, प्रकाश और

ध्वनि का पारस्परिक घनिष्ठ संबंध है। इन तीनों में प्रय कम्पन एवं तरंगे हैं। इन तरंगों से ध्वनि विज्ञान से संगीत की उत्पत्ति हुई है।

तीर्थंकर महावीर ऐसा मानते हैं कि संगीत ही वीरों में नया उत्साह भरता है युद्धकाल में ऐसे समय लाल रंग की प्रमुखता होती है। पशु-पक्षी वनस्पति जगत सभी संगीत से प्रभावित होते हैं। संगीत ऐसा प्रभावी होता है कि इससे पशुओं का दूध बढ़ जाता है वनस्पति शीघ्र पुष्पित और फलित हो जाती है इन ध्वनियों में हरे रंग की प्रधानता होती है। आज का भौतिक विज्ञान भी इसे स्वीकार करता है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि जैनाचार्यों ने वायुमंडल को प्रदूषित होने से बचा लेने का अथक प्रयत्न किया है उन्होंने स्वच्छ हवा में रहना स्वरूप रहने का सर्वोत्तम उपाय माना है। हवा में चार तत्व होते हैं प्राण वायु, शुद्ध वायु, मिश्रित वायु और जल के सूक्ष्म परमाणु। प्रदूषित वायु स्वास्थ्य के लिए बड़ी हानिकारक होती है धुआं, गैस, धूल, सड़ते हुए पेड़-पौधों की गैस आदि से हमारा वायुमंडल दूषित हो जाता है और उसमें जब हम श्वास लेते हैं वह स्वास्थ्य के पतन का कारण बनता है।

जैनाचार्यों ने वनस्पति सम्पदा को सुरक्षित रखने का सर्वाधिक कार्य किया। महावीर ने स्पष्ट कहा है कि जो वनस्पति कायिक जीवों की हिंसा करवाता है या अनुमोदन करता है वह स्वयं इसके लिए अहितकर है। जैनों की इस परम्परा ने ही उन्हें शान्त, अहिंसक और उदारक बनाया है। जैनाचार्यों के अनुसार वनस्पति जगत सर्वाधिक विस्तृत है इससे उसके संरक्षण पर अधिक जोर दिया गया।¹⁰

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. भागचन्द्र जैन - जैन धर्म और पर्यावरण, पृ. सं. 110, न्यू भारती बुक कार्पोरेशन, लाडनू, 2000
2. डॉ. नरेन्द्र भानावत - जैन संस्कृति और राजस्थान, पृ. सं. 79, सम्यक ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर, 2002
3. नत्थुलाल गुप्ता - पर्यावरण एवं जैन धर्म, पृ. सं. 96, भारतीय ज्ञान पीठ प्रकाशन, दिल्ली, 1973
4. मोहनलाल कणोतिया - सूर्यकिरण चिकित्सा अथवा रंग चिकित्सा, पृ. सं. 27, आध्यात्म साधना केन्द्र प्रकाशन, महारौली, 1993
5. मुनिरुप चंद्र - जैन आगम एवं वनस्पति, पृ. सं. 203, जैन विश्व भारती, लाडनू, 1996
6. डॉ. प्रेम सागर जैन - जैन शोध एवं समीक्षा, पृ. सं. 50, जैन शोध विद्यापीठ, महावीर जी, राजस्थान, 1993
7. समुरे चन्द्र दिवाकर - अहिंसा, पर्यावरण एवं विश्वशान्ति, पृ. सं. 22, अहिंसा प्रचार समिति, कलकत्ता, 1986
8. डॉ. बशिष्ठ नारायण - जैन धर्म में अहिंसा, पृ. सं. 74, सिन्हा सोहनलाल जैन धर्म प्रचारक समिति, अमृतसर, 1998
9. मदन मोदी - श्रमण संस्कृति एवं पर्यावरण संरक्षण, पृ. सं. 21, मनु प्रकाशन, मनु टाइम्स, कार्यालय, उदयपुर 1987
10. डॉ. लक्ष्मीचन्द्र जैन - जैन परम्परा एवं प्रदूषण, पृ. सं. 54, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, 1975

महात्मा फुले - विचार दर्शन एवं सत्यशोधक समाज

डॉ. तनुजा मेलकानी,

व्याख्याता, एम. बी. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हल्द्वानी, उत्तराखण्ड



shodhshree@gmail.com

व्यक्ति, उसका जीवन तथा जीवनकाल की आंतरिक तथा बाह्य परिस्थितियाँ उसके विचार-दर्शन का निर्माण करने में सहायक होती हैं। परिस्थितियों के प्रति की गई क्रिया-प्रतिक्रिया से ही दार्शनिक विचार अस्तित्व में आते हैं और उनके प्रति व्यक्ति की दृढ़ आस्था बनती है।

ऐसी ही एक महान आत्मा ज्योतिबा फुले थे। उनके दार्शनिक विचारों का परिचय, उनके काव्य, भाषणों, लेखों और रचनाओं में उपलब्ध होता है। उनके दार्शनिक विचारों का आधार उनका आत्मचिंतन और जीवनानुभव है। वेद व कर्मकांडों तथा धर्मशास्त्रों की अपने ढंग से आलोचना करने और उन्हें असत्य मानकर अस्वीकार कर देने के उपरान्त ही उन्होंने अपना दार्शनिक चिंतन विकसित किया था। यदि कहा जाये कि ज्योतिबा के दार्शनिक विचार व्यावहारिक व यथार्थपरक हैं और उनका आधार मानवता की भावना है तो अनुचित न होगा। ज्योतिबा के विचार-दर्शन का सूत्रवाक्य 'सत्यमेव जयते' था और उन्होंने जीवन में सत्य को सर्वाधिक महत्व दिया। उनके सत्यशोधक समाज की आधारभूमि सत्य ही है।

प्रस्तुत शोधपत्र में ज्योतिबा के दार्शनिक विचारों का परिचय दर्शनशास्त्र के विभिन्न पक्षों के आधार पर दिया जा रहा है।

जीव, जगत व ईश्वर संबंधी विचार :

ज्योतिबा के दार्शनिक विचार उनके अपने चिंतन एवं अनुभव के परिणाम हैं। फुले जी की ईश्वर व धर्म-सम्बन्धी मान्यताओं का परिचय देते हुए हरि नरके द्वारा संपादित ग्रन्थ 'महात्मा फुले: साहित्य और विचार' में सदा कन्हाड़े लिखते हैं कि भगवान का अस्तित्व और भगवान के विभिन्न अवतारों के सम्बन्ध में पुराण-ग्रंथों में संकलित कहानियां कितनी झूठी, बनावटी व हास्यास्पद हैं, यह बात फुले जी ने अपने ढंग से जनसाधारण को प्रचलित भाषा में अवश्य बताई, किन्तु उन्होंने यही प्रस्थापित किया कि सृष्टि और सृष्टि में विभिन्न प्राणीमात्र का निर्माण करने वाला कोई अवश्य है, उसका कोई रूप नहीं, उसका कोई अवतार नहीं, वह केवल सत रूप में ही है। फुले जी ने उसको निर्मिक के नाम से प्रस्तुत किया। निर्मिक ही सत्य है, सत्य की उपासना ही निर्मिक की उपासना है। हिन्दू, इस्लाम, ईसाई आदि जितने भी धर्म हैं, उन धर्मों से गौरवान्वित सभी देवी-देवता मानव-कल्पित हैं और उनसे सम्बन्धित सभी धर्मग्रन्थ मानव-रचित हैं। फुले जी ने स्पष्ट रूप में कहा कि किसी भी धर्मग्रन्थ की रचना भगवान ने नहीं की।

'अखण्डादि' काव्य रचना के विभाग : एक में ज्योतिबा ने ईश्वर को सभी का निर्माता स्वीकार करते हुए लिखा है -सभी का निर्माता है एक स्वामी, उसका डर मन में, रखो सभी।

अपने दत्तक पुत्र यशवंत ज्योतिराव फुले के इस प्रश्न के उत्तर में कि सौरमण्डल तथा हम जिस पृथ्वी पर बसते हैं, उसका निर्माणकर्ता कौन है, ज्योतिबा फुले ने कहा कि दसों दिशाओं में से एक दिशा की भी हम खोज करते चले तो उसका अंत नहीं पा सकेंगे। यदि हजारों बरस भी हम उस दिशा की खोज किया करें,

उसका अंत नहीं पा सकेंगे।

ज्योतिबा के उत्तर से स्पष्ट है कि फुले जी ईश्वर के निराकार रूप पर विश्वास करते थे। ज्योतिबा की 'सार्वजनिक सत्य धर्म' पुस्तक है, जो उनकी मृत्यु के उपरान्त प्रकाशित हुई। इसमें उनके धर्म, कर्मकाण्ड व ईश्वर सम्बन्धी विचारों का सार तत्व है और वही उनके विचार-दर्शन का आधार भी है।

आत्मा सम्बन्धी चिरप्रचलित धारणा के वे समर्थक नहीं थे। इसे वे शोषण का एक तरीका मानते थे। उनके इस तर्क का उल्लेख एन. जी. पवार ने इन शब्दों में किया है : आत्मा अर्थात् स्पिरिट से जुड़ा दर्शन पुनः शोषण का एक यन्त्र है। कहा जाता है कि आत्मा अमर है और मृत्यु के उपरान्त यह ब्रह्म का अंश हो जाती है। ब्राह्मणों को ब्रह्म से विशेष लगाव रहा है क्योंकि ब्रह्म और ब्राह्मण शब्द समानार्थी की भाँति व्यवहृत होते हैं। आत्मा की श्रेष्ठता का सिद्धांत ब्राह्मणों की स्वार्थ-सिद्धि के लिए बनाया गया है। शूद्रों की आत्मा को ब्राह्मणों की आत्मा की तुलना में निरुपमाना गया है। ब्राह्मणों की आत्मा भाग्यशाली है और इसलिए यह शूद्रों की आत्मा की तरह परिवर्तित नहीं हो सकती। इसका भाग्य सर्वथा निर्धारित है और इसके रूप-परिवर्तन की कोई संभावना नहीं है। इस प्रकार सम्पूर्ण मनुस्मृति आधारहीन है और उन जातियों के शोषण का अस्त्र है जो ब्राह्मण नहीं हैं। ज्योतिबा के सम्बन्ध में पहले ही संकेत किया जा चुका है कि उनके दार्शनिक विचारों का आधार धर्मग्रन्थ व शास्त्र नहीं अपितु उनका अपना चिन्तन एवं उनके निजी अनुभव थे। अतः ज्योतिबा के ईश्वर, जीवजगत तथा आत्मा सम्बन्धी विचार सर्वथा अपने ढंग के तथा मानवता के अनुरूप हैं।

ज्योतिबा ईश्वर की उपासना, पूजा या नाम-स्मरण के सम्बन्ध में यही कहते थे कि मनुष्य द्वेषरहित होकर, धर्म-अधर्म का विचार कर ईश्वर को अपने मन में रखते हुए अपने कर्तव्य का पालन करे तो यही कार्य उपासना है, पूजा है। पूजा या उपासना के नाम पर बाहरी दिखावा, ढोंग, माला जपना, नैवेद्य चढ़ाना, तिलक लगाना आदि वे अनावश्यक मानते थे।

सत्य, ज्ञान व अज्ञान

फुले जी ने अपनी काव्य रचनाओं तथा सम्बोधनों में सत्य तथा सत्याचरण सम्बन्धी विचार यत्र-तत्र व्यक्त किये हैं। उनके दार्शनिक विचारों से सम्बन्धित सर्वाधिक महत्वपूर्ण वृत्ति 'सार्वजनिक सत्य धर्म' पुस्तक है, इसमें उन्होंने सत्य के सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त किया है -

सत्य सभी का मूल भवन है, वही सभी की माँ का घर है।

ज्योतिबा फुले सत्य के अनुयायी थे। वे उन्हें मानते थे जो अकारण किसी को सताए नहीं, जो किसी को उसके अधिकारों से वंचित न करे, किसी को हानि न पहुंचाए। उसे ही सत्य का अनुयायी कहा जा सकता है। फुले जी की इसी मान्यता को धनंजय कीर ने इन शब्दों में

व्यक्त किया है : जो संसार के किसी भी प्राणी को अकारण नहीं सताते वे सत्य के अनुयायी हैं। वे जो व्यक्तिगत रूप में या संगठित रूप में दूसरों के प्रति द्वेष नहीं रखते वे सत्य के अनुयायी हैं। वे जो दूसरों को उनके अधिकारों से वंचित नहीं करते अथवा हानि नहीं पहुंचाते, वे सत्य के अनुयायी हैं।

महात्मा ज्योतिराव फुले का जीवन व्यावहारिक सत्य के एक प्रयोक्ता का जीवन था। सत्य में उनकी अगाध निष्ठा थी। सत्य ही उनके जीवन का आधारभूत सिद्धांत तथा वैचारिक दर्शन था।

महात्मा ज्योतिबा तर्कविहीन तथा मानवतावादी विचारों के विरुद्ध बनाई गयी व्यवस्था को अज्ञानियों की देन मानते थे तथा ज्ञानी उनके अनुसार वही है जो मनुष्य मात्र को ईश्वर की संतान मानता हो। वे ज्ञान-अज्ञान की कसौटी मानव द्वारा मानव के प्रति किये जानेवाले समानता, न्याय और नैतिकता के व्यवहार को मानते थे।

मानव, जन्म-मृत्यु तथा पुनर्जन्म

ज्योतिबा फुले के समग्र साहित्य के अध्ययन-अनुशीलन के आधार पर कहा जा सकता है कि उनके सम्पूर्ण विचार-दर्शन का केंद्र-बिंदु मानव व मानवता की भावना है। ज्योतिबा ने शूद्रादि-अति शूद्रों की शिक्षा तथा उन्हें समानता का अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष किया, स्त्री-शिक्षा तथा विधवाओं की स्थिति सुधारने की दिशा में कार्य किया, उच्च वर्णों के तर्कविहीन सिद्धांतों का विरोध किया तथा किसानों की स्थिति सुधारने के लिए संघर्ष किया। 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना व 'सार्वजनिक सत्यधर्म' पुस्तक आदि सभी के मूल में उनके मानव तथा मानवता सम्बन्धी विचार ही हैं; यही उनके विचार-दर्शन की धुरी है।

ब्रजलाल वर्मा ने ठीक ही लिखा है : ज्योतिबा के विचार का सार ही था समग्र मानवता के प्रति करुणा और वृत्ता का भाव। उन्होंने जहाँ ब्राह्मणों को फटकारा वहीं शूद्रों को ललकारा और कहा कि उनको परिश्रमी होना चाहिए।

मनुष्य को जन्म देने वाले ईश्वर के सम्बन्ध में उन्होंने 'अखण्डादि' पुस्तक में लिखा है -

निर्माता की निर्मिति, मानव सकल, दिया बुद्धि बल, कम
ज्यादा।

मृत्यु के सम्बन्ध में उनके विचार स्पष्ट हैं। ज्योतिबा मृत्यु को ध्रुव सत्य मानते थे जबकि पुनर्जन्म में उन्हें कभी विश्वास नहीं रहा। वे मानते थे कि पुनर्जन्म की भ्रांत धारणा को मान्य बनाकर ब्राह्मणों व पंडित-पुरोहितों ने खूब शोषण किया है।

आचार-नीति

ज्योतिबा फुले ऐसी आचार-नीति के समर्थक थे जो मानवता की भावना के अनुरूप हो, और बिना किसी भेदभाव के सभी उसका पालन करें। यशवंतराव द्वारा पूछे गए एक प्रश्न कि आचार-नीति

कैसे कहा जाए और इसका पालन करने वाला कौन है, का उत्तर उन्होंने इन शब्दों में दिया है - हम सबके उत्पत्तिकर्ता को संतोष देने के लिए जो कोई भी सर्वजन हितकारी सत्य का भय मन में रखकर अन्य मानव बन्धुओं के साथ वैसा ही आचरण करता हो, उसे ही नीति कहना चाहिए, फिर ऐसा आचरण करनेवाला चाहे ईसाई हो, चाहे मुसलमान हो, चाहे सत्यशोधक समाजी हो अथवा गाँव का कोई अनपढ़ गंवार हो, वही नीतिमान है।

धर्म-सम्बन्धी विचार

ज्योतिबा धर्म के विरोधी नहीं थे। फुले जी धर्म के नाम पर चल रहे अधर्म के विरोधी थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि किसी भी समाज की नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति के लिए धर्म की अत्यंत आवश्यकता है। किन्तु इस धर्म का आधार विषमता नहीं होना चाहिए, न ही उसमें अंधश्रद्धा और अर्थहीन कर्मकाण्ड का स्थान रहना चाहिए।

धार्मिक विषमता और विभेद के विरोधी ज्योतिबा ने अपनी काव्यकृति 'अखण्डादि' के विभाग : एक में लिखा भी है -

मानव के धर्म न हों अनेक, निर्माता वही एक। जोती कहे।

धर्म के लक्षणों पर भी आपने प्रकाश डाला। ज्योतिबा ने धर्म के लक्षणों का उल्लेख इन शब्दों में किया है - भगवान एक है। उस पर विश्वास करना, सत्यमार्ग पर चलना, अपने आचरण को पवित्र रखना, जाति-प्रथा को समाप्त करना, स्त्री-पुरुष को समान अधिकार प्रदान करना, उनको शिक्षित बनाना, सभी लोगों में भातृभाव उत्पन्न करना ही धर्म के मुख्य लक्षण और लक्ष्य हैं।

पाप-पुण्य

उनका मानना था कि मानव द्वारा मानव के प्रति मानवता और समानता का व्यवहार करना चाहिए। ऐसा न करने वाला व्यक्ति पापी कहलाएगा, अतः जो आचरण आपको अच्छा नहीं लगता ऐसा आचरण दूसरे के प्रति भी नहीं करें। आपके विचार में मानवता की सेवा करते-करते आत्मोत्सर्ग कर देना ही पुण्य है।

इस दार्शनिक विश्लेषण के उपरांत यह कहना उचित होगा कि महात्मा ज्योतिबा ने अपने चिन्तन के आधार पर विशिष्ट दार्शनिक विचारों का प्रतिपादन किया और इन्हीं विचारों को आपने अपनी संस्था 'सत्यशोधक समाज' का आधार बनाया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मुरलीधर जगताप (1993), युगपुरुष महात्मा फुले - महात्मा फुले चरित्र साधने समिति, मुम्बई, पृ. 125
2. डॉ. वृजलाल वर्मा (1993), सामाजिक क्रान्ति के ज्योति स्तम्भ महात्मा ज्योतिराव फुले, भावना प्रकाशन, कानपुर, पृ. 181
3. डॉ. एन. जी. पवार (1999) भारतीय सामाजिक क्रान्ति के जनक: महात्मा ज्योतिराव फुले बुक एन्क्लेव, जयपुर। पृ. 77
4. धनञ्जय कीर (2000) भारतीय सामाजिक क्रान्ति के जनक: महात्मा ज्योतिराव फुले, पापुलर प्रकाशन, बम्बई, पृ. 251-252
5. वेदकुमार वेदालंकार, हिन्दी अनुवाद (1994) मूल मराठी लेखक: महात्मा ज्योतिराव फुले सार्वजनिक सत्य धर्म पुस्तक, महात्मा फुले चरित्र साधने समिति, मुम्बई, पृ. 55

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति जागरूकता, संवेदनशीलता तथा विधिक चेतना के स्तर का अध्ययन



shodhshree@gmail.com

डॉ. कल्पना पारीक

वरिष्ठ प्रवक्ता, श्री स्वरूप गोविन्द पारीक स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, जयपुर

मीना यादव

शोधार्थी (SRF), राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

जानवरों के लिए किया जाने वाला कोई भी अच्छा काम उतनी ही प्रशंसा के लायक है जितना कि किसी इंसान के लिए। किसी भी जानवर के साथ की गई निर्दयता उतनी ही बुरी होती है, जितनी कि किसी इंसान के साथ (हजरत मोहम्मद)।

पशु कल्याण से तात्पर्य है कि किस तरह एक जानवर उन स्थितियों से समायोजन करता है, जिनमें वह रहता है, एक पशु कल्याण या आनन्द की स्थिति में माना जाता है, यदि वह स्वस्थ है, आरामदेह स्थिति में है, उत्तम पोषण प्राप्त करता है, सुरक्षित है, स्वभाविक प्रवृत्ति के अनुसार अपना व्यवहार प्रदर्शित करने में सक्षम है। यदि वह पीड़ादायक स्थिति जैसे दर्द, भय, कष्ट में नहीं है तो वह पशु कल्याणकारी स्थिति में माना जाता है।

एक अच्छे पशु कल्याण की स्थिति में उसे बीमारियों से बचाव, पशु चिकित्सक सेवाएँ, उचित आश्रय, सही प्रबंधन, पोषण, भोजन एवं दयालु/सभ्य तरीकों से व्यवहार करना, मानवीय तरीके का इस्तेमाल करते हुए बध न किया जाना शामिल है। उपरोक्त स्थितियों के अतिरिक्त सदाचारी तरीके से, यदि अति आवश्यक हो तो दया मृत्यु प्रदान करना भी पशु कल्याण का ही एक भाग है।

पशुकल्याण जागरूकता से तात्पर्य ऐसी चेतना या ज्ञान से है जो पशु अर्थात् (वह कोई भी जीवित प्राणी जो मानव प्रजाति के अलावा है) के कल्याण अर्थात् (सही भोजन, जल, आवास, प्रबंधन, व्यवहार, सुरक्षा) की प्रक्रिया की जानकारी देता है। जिस चेतना या व्यवहार क्रिया द्वारा पशुओं की पीड़ा का आभास किया जाये तथा उसका निदान करने का ज्ञान हो ताकि पशु कल्याण किया जा सके वहीं पशु कल्याण जागरूकता है।

पशु कल्याण के लिए सभी देशों के अपने कुछ नियम व कानून हैं जिनका पालन अनिवार्यतः सभी के लिए जरूरी है। भारत में इसके लिए Prevention of Cruelty to Animals (PAC) पशु क्रूरता निवारण अधिनियम-1960 का उल्लेख है जो पशुओं पर अत्याचार व क्रूरता की रोकथाम करता है तथा पशु कल्याण को बढ़ावा देता है। (PAC) का प्रमुख ध्येय है- पशुओं को अनावश्यक पीड़ा से मुक्ति दिलवाना व ऐसा होने से रोका जाना है।

PAC Act के Section 3 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह यह सुनिश्चित करे कि उसके आस-पास सभी जानवरों की उचित देखभाल हो तथा वह दर्द रहित जीवन बिताये।

इसी तरह PAC (पशु क्रूरता निवारण अधिनियम) के अनुच्छेद-11 में यह निहित है कि पशुओं पर किसी भी तरह की क्रूरता या अत्याचार एक अपराध है जिसमें सजा का प्रावधान है जो जुर्माना या कारावास या दोनों को मिलाकर दी जा सकती है।

पशु क्रूरता निवारण अधिनियम 1960 के अनुच्छेद 26 के अनुसार यदि कोई व्यक्ति प्रदर्शनी अथवा मनोरंजन के लिए किसी जानवर का इस्तेमाल बिना सेक्शन 22 के अन्तर्गत पंजीकरण करवाये

करता है तो वह रु. 500 या उससे ज्यादा अथवा 3 माह तक की कैद का भागी होगा।

इसके अतिरिक्त यह ऐसे कई अनुच्छेदों का उल्लेख करता है जिनसे पशुओं पर क्रूरता की अत्याचार की रोकथाम हो सके।

पशु कल्याण बोर्ड (Animal Welfare Board) भारत - पशु कल्याण बोर्ड के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं:-

- जीव जन्तु क्रूरता निवारण अधिनियम 1960 के प्रावधानों को लागू करना और समय समय पर इस कानून में किये जाने वाले संशोधनों तथा प्राणी (पशु) जगत के कल्याण हेतु नीति निर्धारण करने के मामले में सरकार को परामर्श देना।
- प्राणियों (जानवरों) पर क्रूरता की रोकथाम करने वाले संगठनों तथा प्राणी जगत के कल्याण के लिए सक्रिय संगठनों को मान्यता देना और शरण स्थलों एवं पशु चिकित्सालयों की स्थापना, पशु जन्म नियंत्रण कार्यक्रम इत्यादि परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता देना।
- पशुओं के साथ मानवीय व्यवहार करने की शिक्षा देना और पशुओं को अनावश्यक कष्ट एवं पीड़ा देने के विरुद्ध जनमत जाग्रत करने के लिए प्रोत्साहन देना।

अध्ययन की आवश्यकता

शिक्षा किसी भी आधुनिक, सभ्य, उन्नत और विकसित कहे जाने वाले समाज का अनिवार्य लक्षण है, इसके बिना प्रगति कभी पूर्ण और बहुआयामी नहीं हो सकती। शिक्षा ही बालकों में नैतिक गुणों का संचार कर उन्हें दया, करुणा, अहिंसा, चेतना, न्याय, अन्याय, सही-गलत, सत्य असत्य तथा उचित-अनुचित से अवगत करवाती है। समय परिवर्तन का पर्याय है जो निरन्तर चलता रहता है। समय के साथ प्राचीन कालीन शिक्षा व वर्तमान शिक्षा पद्धति में बहुत अंतर परिलक्षित होता है। आज के परिप्रेक्ष्य में शिक्षा विद्यार्थी को उपाधि तो प्रदान करती है लेकिन विद्यार्थी अपने आस-पास के वातावरण, नैतिक मूल्यों के प्रति चेतना विहिन होता जा रहा है। विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति, समाज के प्रति, जीव मात्र के प्रति तथा असहायों के प्रति सही जिम्मेदारी का अहसास करवाना आवश्यक है तभी वह भारत एक करुणामय देश है की परिकल्पना को साकार कर सकेंगे। इसी भावना को ध्यान में रखकर कि विभिन्न क्षेत्रों के, विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों की पशु कल्याण के प्रति कितनी जागरूकता, संवेदनशीलता व विधिक चेतना है, का अध्ययन करने के लिए यह लघु शोध तैयार किया गया है ताकि विद्यार्थियों में पर्यावरण व पशु कल्याण के प्रति रुझान विकसित किया जा सके जिसे वे उन्हें बचाकर परिस्थितिकी तंत्र में संतुलन लाने की ओर सकारात्मक कदम बढ़ा सकें।

शोध अध्ययन के उद्देश्य-

प्रस्तुत शोध निम्नलिखित उद्देश्यों पर आधारित है-

- शहरी व ग्रामीण माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति जागरूकता, संवेदनशीलता व विधिक चेतना के स्तर का अध्ययन करना।

- वर्तमान समय में पशु कल्याण में ग्रामीण व शहरी माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की भूमिका का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएं

- प्रस्तुत शोध की प्रकृति महत्व व विशेषताओं को ध्यान में रखकर शोधार्थी द्वारा निम्न शून्य परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया है-
- ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति जागरूकता, संवेदनशीलता तथा विधिक चेतना के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
- ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में पशु कल्याण से संबंधित सामान्य जागरूकता के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
- ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति संवेदनशीलता के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
- ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों में पशु कल्याण से संबंधित विधिक चेतना के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अध्ययन में प्रयुक्त विधि

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त न्यादर्श

प्रस्तुत शोध कार्य में न्यादर्श के रूप में जयपुर जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र से माध्यमिक स्तर के (कक्षा 9 में अध्ययनरत) विद्यालयों के 100 विद्यार्थियों (50 विद्यार्थी ग्रामीण क्षेत्र + 50 विद्यार्थी शहरी क्षेत्र) का चयन किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत शोध के अध्ययन हेतु शोधार्थी द्वारा स्वनिर्मित प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। इस उपकरण में 50 कथन थे। सभी 50 कथनों में 3 बिन्दु रखे गये (1) सहमत (2) तटस्थ (3) असहमत, (सहमत, तटस्थ तथा असहमत में क्रमशः 3, 2, 1 अंक दिये गये।

प्रदत्तों का संकलन एवं विश्लेषण-शोधार्थी ने जयपुर जिले के माध्यमिक स्तर के विद्यालयों के 100 विद्यार्थियों (50 विद्यार्थी ग्रामीण क्षेत्र + 50 विद्यार्थी शहरी क्षेत्र) पर अभिवृत्ति मापनी परीक्षण पत्र प्रशासित कर प्रदत्तों का संकलन किया। संकलित प्रदत्तों के परिकल्पनाओं के अनुसार विश्लेषण हेतु मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी. परीक्षण जैसी सांख्यिकी विधियों का प्रयोग किया गया है।

परिकल्पना-1

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में पशुकल्याण के प्रति जागरूकता, संवेदनशीलता तथा विधिक चेतना के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 1

श्रेणी संख्या	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाप विचलन (S.D.)	टी मूल्य (t-value)	सार्थकता स्तर
ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी	50	108.58	4.590	-7.070	अस्वीकृत
शहरी क्षेत्र के विद्यार्थी	50	124.26	14.996		

$$dt = N_1 + N_2 - 2 = 50 + 50 - 2 = 98$$

.05 स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 1.98 .01 सार्थकता स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 2.63

परिकल्पना-2

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में

पशुकल्याण के प्रति सामान्य जागरुकता के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 2

श्रेणी संख्या	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाप विचलन (S.D.)	टी मूल्य (t-Value)	सार्थकता स्तर
ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी	50	87.24	2.520	-6.104	अस्वीकृत
शहरी क्षेत्र के विद्यार्थी	50	42.86	6.003		

$$dt = N_1 + N_2 - 2 = 50 + 50 - 2 = 98$$

.05 स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 1.98 .01 सार्थकता स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 2.63

परिकल्पना-3

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में

पशुकल्याण के प्रति संवेदनशीलता के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 3

श्रेणी संख्या	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाप विचलन (S.D.)	टी मूल्य (t-Value)	सार्थकता स्तर
ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी	50	36.38	2.482	-6.942	अस्वीकृत
शहरी क्षेत्र के विद्यार्थी	50	41.78	4.909		

$$dt = N_1 + N_2 - 2 = 50 + 50 - 2 = 98$$

.05 स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 1.98 .01 सार्थकता स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 2.63

परिकल्पना-4

ग्रामीण व शहरी क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों में

पशुकल्याण से संबंधित विधिक चेतना के स्तर के मध्यमानों में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका 4

श्रेणी संख्या	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाप विचलन (S.D.)	टी मूल्य (t-Value)	सार्थकता स्तर
ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी	50	34.96	2.356		
शहरी क्षेत्र के विद्यार्थी	50	39.62	6.509	-4.760	अस्वीकृत

$$dt = N1 + N2 - 2 = 50 + 50 - 2 = 98$$

.05 स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 1.98 .01 सार्थकता स्तर पर 'टी' का अपेक्षित मूल्य = 2.63

शोध निष्कर्ष एवं सुझाव

तालिका 1, 2, 3 व 4 का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि सभी तालिकाओं में t का प्राप्त मूल्य t तालिका मूल्य के दोनों स्तरों (.05, .01) से अधिक है। अतः सभी निराकरण योग्य परिकल्पनाएं अस्वीकृत की जाती हैं। इसका तात्पर्य यह है कि ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्र के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति सामान्य जागरूकता, संवेदनशीलता तथा विधिक चेतना के स्तर में असमानता होती है। सभी तालिकाओं में ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की अपेक्षा शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों का मध्यमान उच्च पाया गया अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों की अपेक्षा शहरी क्षेत्र के विद्यार्थियों में पशु कल्याण के प्रति अधिक जागरूकता देखने को मिलती है। ग्रामीण स्तर पर पशु कल्याण के प्रति जागरूकता बढ़ाने के लिए पशु कल्याणकारी संस्थाओं को प्रत्येक समुदाय में आगे आना होगा। आज भारत सरकार भी SPCA को प्रत्येक जिले में बढ़ाने को प्रोत्साहित कर रही है। कई स्वयंसेवी संस्थाएँ भी इस क्षेत्र में कार्यरत हैं। आज एनिमल प्लेनेट, नेशनल जियोग्राफिक एवं डिस्कवरी जैसे चैनल पशुओं व पर्यावरण के प्रति जागरूकता बढ़ाने में सहायक हैं परंतु इनका शहरी क्षेत्र के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में भी बाधा रहित प्रसारण होना चाहिए व बालकों में भी इन कार्यक्रमों के प्रति उत्साह जगाना होगा। इससे बच्चों में ना केवल जागरूकता बढ़ेगी, अपितु यह हमारे जीवन में पशुओं का स्थान व

उन्हें दया, प्रेम व सम्मान देना भी सीखेंगे। विद्यालयों में पशु कल्याण क्लब बनाने पशु कल्याण कार्यक्रम आयोजित करने से भी विद्यार्थियों व अन्य में जानवरों से संबंधित सभी मुद्दों पर एक विशाल दृष्टिकोण पनपेगा। यह कार्य सही शिक्षा व पशु कल्याण के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने के दायित्व से ही संभव है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. <http://www.naiaonline.org/articles/article/what-is-animal-welfare-and-why-is-it-important#sthash.mhAA6ctQ.dpbs>
2. <http://awbi.org/Animal-welfare-board-of-india>
3. <http://bamu.ac.in/dept/zoology/1.%20Prevention%20of%20cruelty%20to%20animals%20act.%201960.pdf>
4. <http://www.awbi.org/awbi/pdf/Act%20&%20Rules%20-%20English.pdf>
5. <https://www.change.org/p/stop-animal-abuse-amend-the-prevention-of-cruelty-to-animals-act-1960>
6. http://www.austlii.edu.au/au/legis/nsw/num_act/poactaa2012n69467.pdf Prevention of Cruelty to Animals Amendment Act 2012 No 69
7. https://www.deakin.edu.au/_data/assets/pdf_file/0008/281888/poacta-updated-2012-pdf.pdf

राजकीय एवं स्ववित्तपोषित प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की अपने शिक्षाक्रम के प्रति जागरूकता तथा शिक्षण अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन

ऋचा अग्रवाल

शोध छात्रा, दयालबाग एजुकेशनल इन्स्टीट्यूट दयालबाग, आगरा, (उत्तरप्रदेश)

डॉ. सरिता अग्रवाल

सहायक प्रोफेसर, मानव रचना कॉलेज ऑफ एजुकेशन, फरीदाबाद, (हरियाणा)



shodhshree@gmail.com

शिक्षक राष्ट्र का निर्माता है ये कथन पूर्णतया यथार्थ है। शैक्षिक व राष्ट्रीय उद्देश्यों को मूर्त रूप देने का चुनौतीपूर्ण कार्य शिक्षक ही करता है। राष्ट्र की आर्थिक उन्नति में शिक्षक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से योगदान देता है। प्रत्यक्षतः अपने द्वारा पढ़ाए गए पाठ्यक्रम से तथा अप्रत्यक्षतः अपने व्यवहार, अभिवृत्ति, मूल्य, सम्बन्ध, छात्रों में रुचि आदि के रूप में। इस प्रकार एक शिक्षक अपने कार्य तथा व्यवहार से देश के भावी कर्णधारों का निर्माण करता है। यह आवश्यक है कि शिक्षक योग्य, कुशल तथा शिक्षण में रुचि रखने वाला हो तभी वह देश को सही दिशा में उन्नति हेतु अग्रसर कर सकता है। अतः एक योग्य शिक्षक निर्माण हेतु उसे प्रशिक्षण देने की आवश्यकता अनुभव की जाती है। अमेरिकी शिक्षाशास्त्री किलपैट्रिक ने कहा कि शिक्षक-प्रशिक्षण में शारीरिक, मानसिक दोनों क्रियाएँ सम्मिलित हैं अतः एक प्रशिक्षित शिक्षक अपने व्यवसाय में अधिक योग्य सिद्ध होता है। इसके विपरीत एक अप्रशिक्षित शिक्षक के लिए यह एक जोखिम भरा कार्य है और जब वह अपने कार्य में असफल होता है तो उसमें नकारात्मक अभिवृत्ति का उदय होता है। शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम का उद्देश्य भावी शिक्षकों में सकारात्मक शिक्षण अभिवृत्ति एवं जागरूकता को विकसित करके उनके व्यवहार में इस प्रकार परिवर्तन लाना है जिससे वह राष्ट्रीय शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति में सफल हो सकें।

वर्तमान में शिक्षक शिक्षा के गिरते हुए स्तर को उठाने हेतु प्राथमिक शिक्षक-शिक्षा के स्तर में सुधार की आवश्यकता है, तभी उच्च शिक्षा का स्तर सुदृढ़ हो सकेगा। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए गाँधी जी ने बुनियादी शिक्षा का सम्प्रत्यय प्रस्तुत किया था और बेसिक प्रशिक्षण कॉलेज अस्तित्व में आए। उत्तर प्रदेश में सर्वप्रथम इलाहाबाद में प्राथमिक विद्यालय शिक्षकों हेतु बेसिक अध्यापक प्रशिक्षण कार्य प्रारम्भ किया गया।

सन् 1986 से पूर्व भारत में प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु राजकीय तथा वित्तपोषित संस्थाएँ ही कार्य कर रही थी परन्तु राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया कि प्राथमिक प्रशिक्षण को स्ववित्तपोषित बनाया जाये। परिणामस्वरूप वर्तमान में भारत में शिक्षक-प्रशिक्षण हेतु राजकीय, वित्तपोषित एवं स्ववित्तपोषित संस्थाएँ कार्य कर रही हैं। उत्तर प्रदेश में स्ववित्तपोषित संस्थानों को प्राथमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण की जिम्मेदारी कुछ समय पूर्व प्रदान की गई है। अतः प्रश्न उठता है कि क्या राजकीय और स्ववित्तपोषित प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाएँ छात्रों को जागरूक करने और उनमें स्वस्थ शिक्षण अभिवृत्ति निर्माण में सुदृढ़ भूमिका अदा कर रही हैं?

हम प्रतिदिन समाचार पत्रों में पढ़ते हैं कि शिक्षक द्वारा छात्र को प्रताड़ित किया गया, सरकारी संस्थानों में शिक्षक स्वयं शिक्षण करने के स्थान पर किसी अन्य व्यक्ति को कुछ मूल्य देकर संस्थान में शिक्षण हेतु भेज देते हैं इस प्रकार की घटनाओं के अध्ययन से शोधार्थी को अनुभव हुआ कि शिक्षकों में स्वस्थ शिक्षण अभिवृत्ति का स्थान व्यावसायिक अभिवृत्ति ने ले लिया है और अधिकांशतः छात्र केवल व्यवसाय प्राप्ति की

इच्छा से शिक्षक-प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। साथ ही अनेक बार सत्रोपरान्त भी उन्हें अपने शिक्षाक्रम का सम्पूर्ण ज्ञान तथा शिक्षाक्रम के विभिन्न कार्यक्रमों के उद्देश्य एवं महत्व का ज्ञान भी नहीं हो पाता है।

डॉ. सैयद ने कहा था जब तक लोगों में अध्यापक बनने की इच्छा तथा जागरुकता थी, प्रशिक्षित अध्यापकों की संख्या माँग से अधिक नहीं थी तब तक स्थिति उतनी उग्र नहीं थी जितनी कि आज है। अतः उन्होंने दिल्ली के सेन्ट्रल इन्स्टीट्यूट ऑफ एजुकेशन में छात्रों के चयन हेतु शिक्षण अभिवृत्ति परीक्षा को रखने का सुझाव दिया। परन्तु उत्तर-प्रदेश में बी. टी. सी. छात्रों का चयन प्रतिशत (मैरिट) के आधार पर किया गया है, किसी प्रवेश परीक्षा के आधार पर नहीं। अतः शोधार्थी को अपना यह प्रयास सार्थक एवं औचित्यपूर्ण लगा।

अध्ययन के उद्देश्य

1. प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति का लिंग तथा संस्था के सन्दर्भ में

तुलनात्मक अध्ययन करना।

2. प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की अपने शिक्षाक्रम के प्रति जागरुकता का लिंग तथा संस्था के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना

1. प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति तथा अपने शिक्षाक्रम के प्रति जागरुकता में लिंग तथा संस्था के आधार पर कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।

अध्ययन हेतु न्यादर्श

अध्ययन की प्रकृति एवं समय सीमा को ध्यान में रखते हुए आगरा जिले के राजकीय प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान (DIET) तथा स्ववित्तपोषित प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में अध्ययनरत 120 प्रशिक्षणार्थियों 60 महिला एवं 60 पुरुष को सोदेश्य न्यादर्शन विधि द्वारा न्यादर्श में सम्मिलित किया गया। जिनका विवरण निम्न प्रकार है-

सारिणी सं. 1 अध्ययन न्यादर्श

क्र.सं.	प्रशिक्षण संस्थान	प्रशिक्षणार्थी	
		महिला	पुरुष
1.	राजकीय संस्थान	30	30
2.	स्ववित्तपोषित संस्थान	30	30
	कुल प्रशिक्षणार्थी	60	60

अध्ययन विधि एवं उपकरण

अध्ययनार्थ वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। विद्यार्थियों की शिक्षक अभिवृत्ति तथा शिक्षाक्रम जागरुकता जानने हेतु क्रमशः डॉ. एस. पी. अहलूवालिया द्वारा निर्मित शिक्षक अभिवृत्ति मापनी तथा स्वनिर्मित शिक्षाक्रम जागरुकता प्रश्नावली का प्रयोग किया गया।

शोध अध्ययन की उपलब्धियाँ

शोध समस्या के परिप्रेक्ष्य में संकलित किए गए प्रदत्तों के मध्यमान, प्रामाणिक विचलन, टी मान के विश्लेषण के उपरान्त प्राप्त शोध

उपलब्धियों को निम्नांकित क्रम में प्रस्तुत किया गया है-

1. प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति का लिंग तथा संस्था के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन।

राजकीय एवं स्ववित्तपोषित प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति का तुलनात्मक अध्ययन करने हेतु शोधार्थी द्वारा न्यादर्श की शिक्षण अभिवृत्ति के प्राप्तांकों से संस्थाओं व लिंग के क्रम में मध्यमान, प्रमाप विचलन, टी अनुपात निकाला गया जिन्हें तालिका संख्या 2 में दर्शाया गया है।

सारिणी सं. 2 प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति का मध्यमान, प्रमाप विचलन व टी मान

क्र.	संस्थान	न्यादर्श	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी				
1.	राजकीय	महिला	30	232.5	228.75	36.96	36.96	0.84	0.53
		पुरुष	30	224.5					
2.	स्ववित्तपोषित	महिला	30	220	226.50	27.38	30.42	1.85	
		पुरुष	30	234					

तालिका सं. 2. के आधार पर राजकीय संस्थाओं की महिला प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति पुरुषों से मध्यमान के आधार पर उच्च प्राप्त की गई। परन्तु टी का मान 0.84 ज्ञात किया गया। स्ववित्तपोषित संस्थाओं में अध्ययनरत महिला प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति पुरुष प्रशिक्षणार्थियों से मध्यमान की दृष्टि से निम्न है तथा टी मान 1.85 है। राजकीय तथा स्ववित्तपोषित संस्थाओं में अध्ययनरत महिला, पुरुष प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति सामान्य स्तर की है व टी का मान 0.53 ज्ञात किया गया। अर्थात् कहा जा सकता है कि विभिन्न समूहों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं पाया गया, परन्तु मध्यमान के आधार पर स्ववित्तपोषित

संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति राजकीय के प्रशिक्षणार्थियों से कम थी।

2. प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की अपने शिक्षाक्रम के प्रति जागरूकता का लिंग तथा संस्था के सन्दर्भ में तुलनात्मक अध्ययन करना।

प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता के अध्ययन के लिए अनुसंधायक द्वारा स्वनिर्मित शिक्षाक्रम जागरूकता मापनी को प्रशिक्षणार्थियों पर प्रशासित कर परीक्षण प्राप्तांकों के आधार पर निम्न आंकड़े प्राप्त किए गए-

सारिणी सं. 3 प्राथमिक शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की अपने शिक्षाक्रम के प्रति जागरूकता का मध्यमान, प्रमाप विचलन व टी मान

क्र.	संस्थान	न्यादर्श	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी				
1.	राजकीय	महिला	30	29.03	28.83	4.40	4.98	2.81	0.53
		पुरुष	30	25.63					
2.	स्ववित्तपोषित	महिला	30	28.83	26.83	4.93	4.5	2.12	
		पुरुष	30	26.37					

तालिका सं. 3 के आधार पर कहा जा सकता है कि राजकीय संस्थाओं में अध्ययनरत महिला प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता पुरुषों से मध्यमान के आधार पर उच्च है। टी का मान 2.81 ज्ञात किया गया। स्ववित्तपोषित संस्थाओं में अध्ययनरत महिला प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता पुरुष प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता से मध्यमान की दृष्टि से उच्च है। टी मान 2.12 प्राप्त किया अर्थात् महिलाएँ जागरूक अधिक हैं। राजकीय संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता मध्यमान के आधार पर स्ववित्तपोषित के प्रशिक्षणार्थियों से मध्यमान की दृष्टि से उच्च प्राप्त हुई। टी का मान 2.87 था अतः कह सकते हैं कि राजकीय संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थी स्ववित्तपोषित की अपेक्षा अधिक जागरूक हैं।

अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष

परीक्षण से प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण एवं व्याख्या के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष निम्न हैं-

1. प्राथमिक शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों में शिक्षण अभिवृत्ति सामान्य व सकारात्मक थी। अर्थात् शिक्षण में सामान्य रुचि रखने वाले प्रशिक्षणार्थी ही अधिकांशतः शिक्षण व्यवसाय की ओर आकृष्ट होते हैं। परिणामस्वरूप वे समाज व राष्ट्रीय परिवर्तन की ओर विशेष रूप से प्रयासरत नहीं होते हैं।
2. प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति में लिंग एवं संस्था के आधार पर सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है। इन निष्कर्षों के

कारण रूप में कहा जा सकता है कि व्यक्ति की शिक्षण अभिवृत्ति लिंग तथा संस्था द्वारा विशेष प्रभावित नहीं होती है।

3. शिक्षाक्रम जागरूकता के दृष्टिकोण से राजकीय तथा स्ववित्तपोषित प्राथमिक शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं के प्रशिक्षणार्थियों में सामान्य स्तर पाया गया। अर्थात् प्रशिक्षणार्थी अपने शिक्षाक्रम के प्रति विशेष जागरूकता या सजगता नहीं रखते हैं।
4. प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता में संस्था के परिप्रेक्ष्य में अन्तर पाया गया। स्ववित्तपोषित संस्थाओं में बी. टी. सी. पाठ्यक्रम का यह प्रारम्भिक वर्ष होना इस निष्कर्ष का सम्भावित कारण हो सकता है।
5. लिंग क्रम में प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षाक्रम जागरूकता में अन्तर पाया गया। सम्भवतः महिलाएँ अपने अध्ययन तथा उपलब्धियों के प्रति पुरुषों की अपेक्षा अधिक चेतन्य होती हैं।

3. शोध अध्ययन की शैक्षिक उपादेयता

शोध अध्ययन की सार्थकता उसकी व्यावहारिक उपादेयता पर आश्रित होती है इसके अभाव में अनुसंधान पूर्णतः महत्वहीन प्रतीत होता है। यद्यपि न्यादर्श का आकार बहुत छोटा था परन्तु इससे प्राप्त संकेतों के आधार वर्तमान शोध की शैक्षिक उपादेयता को अग्रांकित रूप में वर्णित किया गया है।

1. शिक्षण संस्थाओं द्वारा प्रशिक्षणार्थियों का चयन शिक्षण अभिवृत्ति से युक्त करें। इसके लिए प्रशिक्षणार्थियों का चयन न केवल ज्ञान अपितु शिक्षण अभिवृत्ति परीक्षण के आधार पर भी

किया जाना चाहिए तथा ऐसे शिक्षाक्रम का विकास करना चाहिए कि प्रशिक्षणार्थियों को सकारात्मक शिक्षण अभिवृत्ति से युक्त बनाया जा सके।

2. शिक्षकों का उत्तरदायित्व है कि वे प्रशिक्षणार्थियों की शिक्षण अभिवृत्ति को जानकर उसे सकारात्मक बनाने हेतु प्रयास करें जिससे भावी जीवन में उनका कार्य सरल हो सके साथ ही उन्हें अपने शिक्षाक्रम के उद्देश्यों तथा महत्व का समय समय पर स्मरण कराते रहना चाहिए।
3. प्रशिक्षणार्थियों को शिक्षण के प्रति अपनी अभिवृत्ति को सकारात्मक व उच्च बनाने का प्रयास करना चाहिए। इसके लिए उन्हें अपने शिक्षाक्रम से पूर्ण रूप से अवगत होना चाहिए, उसके उद्देश्य, महत्व, आवश्यकता के प्रति जागरूक रहना चाहिए।
4. राजकीय संस्थानों को मॉडल स्कूल की तरह कार्य करना चाहिए अर्थात् स्ववित्तपोषित संस्थानों के प्रारम्भिक वर्ष में उन्हें पर्याप्त निर्देशन देना चाहिए तथा समय समय पर शिक्षकों को स्ववित्तपोषित संस्थानों में जाकर प्रशिक्षणार्थियों का मार्गदर्शन किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अहलूवालिया एस. पी. (2003), टीचर एटिट्यूड इन्वेन्टरी नेशनल साइकोलॉजिकल कॉरपोरेशन कचहरी घाट आगरा।
2. कॉल, लोकेश (2010), मैथडलॉजी ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, विकास प्रकाशन, नई दिल्ली।
3. किलपैट्रिक, डब्ल्यू. एच. (1954.), शिक्षा में शिक्षक की भूमिका, मैकमिलन एण्ड कम्पनी, न्यूयॉर्क।
4. कुमार, अश्री, डॉ. अजय (2010), हिमाचल प्रदेश के भावी शिक्षकों में पर्यावरण जागरूकता, <http://www.oppapers.com/cssays/environmenta>

wareness.amongpraspocitiveachers/287879

5. गुप्ता, एस. पी. (2010), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद (उ. प्र.)।
6. गुप्ता, संगीता एवं मोहन्ती, डॉ. ए. के. (2009), भावी शिक्षकों की शिक्षण व्यवसाय, कक्षाकक्ष शिक्षण तथा छात्र केन्द्रित अभ्यास के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन, जनरल ऑफ टीचर एजुकेशन एण्ड रिसर्च, नई दिल्ली, वर्ष 4, अंक 2, पृ. सं. 66-76।
7. चन्द्रवधन, एम. सुचिषा ए. (2008), बी. एड. विद्यार्थियों में मानवाधिकार शिक्षा की जागरूकता, रिसर्च हाइलाइट्स, तमिलनाडु, वर्ष 18, अंक 4, पृ. सं. 239-245।
8. चित्रा, जे. उमा (2007), शिक्षकों की पर्यावरण जागरूकता का अध्ययन, एक्सपेरिमेंट्स इन एजुकेशन पब्लिशर्स बाई एस. आई. टी. यू. कॉन्सिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च, चितलापक्कम, चेन्नई, वर्ष 35, अंक 11 पृ. सं. 223-226.
9. एन. सी. टी. ई.ए प्रोग्राम ऑफ एक्शन, मिनिस्ट्री ऑफ ह्युमन रिसोर्स डिवेलपमेन्ट, अगस्त, 1986।
10. ऑरिस, एन. (2011). दि परसेप्शन ऑफ टीचिंग एज ए प्रोफेशन बाई तुर्किश ट्रेनी टीचर्स: एटिट्यूड टूवाइ बीन्ग अ टीचर. इन्टरनेशनल जनरल ऑफ ह्युमैनिटीज एण्ड सोशल साइन्स, 1(4) 83.87।
11. मलिकी, एम्मेस. (2013). एटिट्यूड टूवाइ दि टीचिंग प्रोफेशन ऑफ स्टूडेंट प्रॉम दि फेकल्टी ऑफ एजुकेशन, नाइगर डेल्टा यूनिवर्सिटी, इन्टरनेशनल जनरल ऑफ सोशल साइन्स रिसर्च, वर्ष 1, अंक 1, पृ. सं. 11.18।
12. त्रिवेदी, आर. पी. (2012). अ सटडी ऑफ एटिट्यूड ऑफ टीचर्स टूवाइ टीचिंग प्रोफेशन टीचिंग एट डिरेण्ट लेवल, इन्टरनेशनल मल्टीडिसिप्लिनरी ई-जनरल वर्ष 1, अंक 5, पृ. सं. 24.30। www.shodhprakashan.com

वेद व पुराण में अश्व का वृत्तान्त

डॉ. अनुराधा टाक

व्याख्याता, थीर तेजा महिला महाविद्यालय, मारवाड मंड्या, नागौर



shodhshree@gmail.com

वै वैदिक कालीन आर्यों के जीवन में घोड़े का महत्वपूर्ण स्थान था अश्व अपनी तीव्र गति के कारण प्राचीनकाल में ही अत्यधिक लोकप्रिय बन गया था। घोड़े के रथ ने प्राचीन आर्यों के जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए थे मानव मात्र के लिए ही नहीं बल्कि देवताओं के लिए भी प्रिय बन गया जैसे संसार में घोड़े की कई की नस्ल है वैदिक काल के लोग अश्वों में अत्यधिक रुचि लेते थे यहाँ तक कि ऋग्वेद में अश्वों पर 60 से अधिक सन्दर्भ मिलते हैं। यजुर्वेद में भी 121 प्रकार के घोड़ों के शारीरिक अंगों का उल्लेख मिलता है यदि हम अन्य सन्दर्भों की ओर ध्यान दें तो ब्राह्मण ग्रन्थ व उपनिषदों में भी अश्वों का उल्लेख मिलता है, यास्क के समय व्याख्याकर्ताओं द्वारा लिखी गयी विधियों के प्रयोगात्मक विवरण को महत्व दिया गया है।

अश्व को प्राचीन काल में सायन के नाम से जाना जाता व व्याप्तम् शब्द से उसकी व्याख्या की गई है। कुछ पुराणों में अश्व के गुणों, बीमारियों और उपायों का वर्णन किया गया है। रामायण में अश्व के सम्बन्ध में व्यापक क्षेत्रवार वर्गीकरण किया गया है। अर्यशास्त्र में हम देख सकते हैं कि अशवाध्यक्ष को शाही सम्मान प्राप्त था।

वृहतसंहिता में भी अश्व की आयु व आकृति के विषय में गहन चिन्तन दर्शाया गया है, युक्तिकल्पक के यात्रा युक्ति अध्याय में अश्वों से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं पर रोचक वर्णन किया गया है।

वेदों में अश्व

गाय व बँल्लो के साथ-साथ अश्व को भी वेदों में अत्यधिक उत्तम पशु की श्रेणी में रखा गया है। कुछ मंत्रों में घोड़ों की इच्छाओं को व्यक्त किया गया है। वेदों में अश्व के रंग, प्रकार, विभिन्न अंगों के अवयवों का अलग-अलग अध्यायों में वर्णन है वही अश्व को बलिदान, लक्ष्य व उद्देश्य प्राप्ति के रूप में प्रयुक्त किया गया है। उदाहरण के लिए अग्नि और अश्विन की वैदिक ऋचाओं में अश्व के समान तुलना की गई है। उषा, मरुतु, सूर्यसूक्त में वैदिक अश्व के प्रतीकात्मक चरित्र को प्रयुक्त किया गया इसी तरह वैदिक अध्यायों में अश्व के बलिदान को नजदीकी से विचारों और प्रस्तुतीकरण से जोड़ा गया है। यजुर्वेद में अश्व के बलिदान से सम्बन्धित 108 मंत्र रचे गये हैं।

1. ऋग्वेद :- एम.एस. श्रीधर के अनुसार अश्वों की विभिन्न जातियों, रंगों का वर्णन ऋग्वेद में उपलब्ध है। सबसे श्रेष्ठ प्रकार के घोड़े को ऋग्वेद में सवत्स के नाम से जाना जाता है। उनको हरि, इन्द्रहरि के साथ जोड़ा गया, "नियुक्त प्रशस्ती" में एक विशेष प्रकार के घोड़े की प्रजाति जिसे रोहित नाम से जाना जाता था। एक युवा घोड़े को वर्षास्व के नाम से तथा स्त्री अश्व को तीव्र गति से धावन करने वाली योग्य पशु प्रजाति का माना गया है। स्वस्थ घोड़े हवा में तैरती तलवार व उड़ते हुए तीर के समान होते थे। प्रशिक्षित घोड़ों के अयाव व सुन्दर काठी के घोड़ों को अर्यञ्जी के नाम से सम्बोधित किया

जाता था।

एक घोड़ी को अश्ववदवा व गर्भिणी घोड़ी को वृष्णावती कहा जाता था, एक कुंवारी कन्या की तुलना घोड़ी से कि गई जिसे रोहिताश्व कहा गया वैदिक लोग यह घोषणा करते थे कि वे घोड़ों की सहायता के साथ ही शत्रुओं का सामना करने में समर्थ थे वही युद्ध के लिये जाते समय राजा व योद्धा अपने साथ घोड़ों के लिए पर्याप्त भोजन रखते थे।

ऋग्वेद में कहा गया है कि जिस देवता ने सर्वप्रथम घोड़े पर सवारी की है, हविभक्षण करने के लिये आये है। वैदिक देवता इन्द्र सबसे शक्तिशाली घोड़ों के स्वामी थे। इन्द्र की अश्वपति व उषा सूक्तों में आकर्षक घोड़ी के साथ तुलना की गई है।

वैदिक लोग ईश्वर से प्रार्थना करते थे कि उन्हें स्वस्थ घोड़ों के झुंड व रोग मुक्त घोड़े प्रदान करें। इसके अलावा घोड़े रथों की दौड़ में काम में लिये जाते थे और राज्य कल्याण के लिए किये गये अश्वमेध यज्ञ में भी प्रयुक्त किये जाते थे, वेदों में अक्र नाम का शब्द प्रयुक्त हुआ है जिसका प्रयोग घुड़सवार के लिए अश्वपति के रूप में किया गया है।

ऋग्वेद में प्रतीकात्मक चरित्र में घोड़े को देखा गया है, सूर्यदेव के रथ में सात घोड़ों को जुता हुआ बताया है। सूर्य को वायुमण्डल का घोड़े कहा गया है, सूर्य के घोड़े बलशाली, गुणशाली, भ्रमणशाली कभी न थकने वाले धरती के चक्कर लगाने वाले वर्णित किये गये है।

ऋग्वेद के प्रथम अध्याय में उषा को सूर्य रथ में नियंत्रित करते हुए बताया गया है, मरुत देवता के घोड़े कभी थकते नहीं उनकी अदम्य गति के कारण तीव्र गति से हवा में जाने का वर्णन है। इस प्रकार घोड़े के धार्मिक महत्व के दृष्टिगत होता है। ऋग्वेदिक ब्राह्मण काल में क्षत्रिय राजा विजय प्राप्ति के बाद अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान करता था।

2. **यजुर्वेद:-** यजुर्वेद के अध्याय 22 से 25 में अश्वों के बलिदान का सुन्दर मंत्रों में गायन किया गया है। उदाहरण के लिए यजुर्वेद संहिता में पशुओं के विवरण के साथ बलिदानी घोड़ों का विभिन्न घटनाओं के साथ वर्णन किया है। ए.स.पी. सिंह कहते हैं कि उदाहरण के लिए कार्जी गर्दन वाली बकरी को अग्नि के साथ प्रस्तुत करती थी। उनको घोड़े के ललाट पर बांधा गया था, एक भेड़ सरस्वती को समर्पित थी जिसे घोड़े के शरीर अग्रभाग पर उसको बांधा गया, एक काली व सफेद बकरियों के जोड़े जो अश्विन को समर्पित थी उसको जबड़ों के नीचे बांधा गया, इसी तरह दूसरे सफेद व काली बकरी का जोड़ा सोम पूषन को समर्पित थी उसको उसकी नाभी से बांधा गया। एक सफेद पशु जो सूर्य को समर्पित था उसे घोड़े के दाहिने पार्श्व पर बांधा गया था काले व सफेद पशु जो यम को समर्पित था उसे

बायें पार्श्व पर बांधा गया था। एक पशुओं का जोड़ा जो वायु को समर्पित था। उसको उसकी पूंछ से बांधा गया था इस बलिदान में 21 बली वेदियों को काम में लिया जाता था जिसमें 16 पशु एक दूसरे से बंधे हुये होते थे और 17 मध्य में इन सभी पशुओं को यह माना जाता था कि यह अश्व की स्वर्ग की यात्रा में उसके सहयोगी के रूप में साथ देंगे। वास्तव में अश्व को प्रजापति का प्रतिनिधि माना जाता था जबकि दूसरे जानवरों को अन्य देवताओं के प्रतिनिधि के रूप में जाना जाता था संहिता के अनुसार अश्व को दैवीय स्वरूप समझा जाता था जिसके क्षेत्राधिकार में स्वर्ग ब्रह्माण्ड के कर्म व व्यापकता समाहित थी।

एम.एस. श्रीधर का मानना है कि 50 या 50 से अधिक कांडीकाओं में घोड़ों की प्रशंसा की है विशेष रूप में अश्वमेध यज्ञ में यह घोड़े अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे, अश्वों को सोम व वाजपेय यज्ञों की दक्षिणा दी जाती थी, घोड़े की पहचान प्रजापति व आदित्य जैसे दैवीय शक्तियों के साथ रहने वाले प्राणी के रूप में देखा जाता था। वही घोड़ों के शरीर के 121 अंगों का वर्णन किया गया है, घोड़ों को लाजा नामक भोजन दिया जाता था, यह भोजन घोड़े के शरीर को मजबूत रखता था। घोड़े के बलिदान के लिए एक स्थान का निर्माण किया गया जिसे "अग्निसिंघाना" नाम दिया गया, यह बहुत ही पावन स्थल माना गया। घोड़े के बलिदान के समय घोड़े के द्वारा किये गये कार्यों का उल्लेख किया गया है। कहा जाता है कि घोड़ा अपने पर सवार व उसकी पत्नी का पूर्ण रूप से ध्यान रखता है और उन्हे उचित स्थान पर पहुंचाता था अपने कर्तव्यों के लिए दैवीय शक्तियों से युक्त अश्व मनुष्य के विभिन्न कर्तव्यों को सहन करता था यह भी जाना जा सकता है कि घोड़े इस पृथ्वी पर दैवीय अवतरण है। नदी और महासागर इसके माता-पिता कहलाते हैं, ऐसा विश्वास किया जाता है कि घोड़ा उड़ने में भी समर्थ था जैसे अश्वसितवृत में लिखा है।

3. **अथर्ववेद:-** अथर्ववेद में घोड़ों के लिए तीन शब्द प्रयुक्त हुये हैं अश्व, वाजीन, अश्व, घोड़े को बांधने के लिए रस्सी का प्रयोग किया जाता था जिसे अश्वबंधिनी कहा जाता था। अथर्ववेद के एक मन्त्र में घोड़ों को गाँवों व उनके बछड़ों का रक्षक माना गया है। इन्द्र को अश्वपति कहा गया है। इन्द्र को हरिया भी कहा जाता है। अथर्ववेद में बताया है कि घोड़े रथ के हजारों पहियों को खींचते थे।

पुराणों में अश्व

भारतीय पौराणिक इतिहास के विशाल शोध में यह सामने आया कि हमारे पूर्वज अश्व में बहुत रुचि रखते थे, गरुड पुराण अग्निपुराण, मत्स्य पुराण में अश्व के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की गई है :-

1. अग्निपुराण :- 208 वें अध्याय में धनवन्तरी घोड़ों के प्रबन्धन की और उसकी बीमारियों से सम्बन्धित विज्ञान के सार का वर्णन करते हैं। धर्म, अर्थ व काम की उपलब्धि प्राप्त करने हेतु एक राजा को अश्व प्राप्त करना चाहिए।

घोड़े की सवारी का उचित समय, घुड़सवारी की योग्यताएँ, घोड़े के शरीर पर अवस्थित विभिन्न देवता, अश्व हेतु बोली जाने वाली प्रार्थना, घोड़े के प्रबन्धन में साम, दाम दण्ड व भेद की राजनीतिक युक्तियाँ, कीड़े मकोड़े व मक्खियों के दंश के विरुद्ध सुरक्षा कवच, अश्वों का प्रशिक्षण, अश्वों के प्रकार (भद्र, मण्ड, मृग/सर्किण) अश्वों का वर्ग (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र) का वर्णन इस अध्याय में विस्तार से किया गया है।

➤ 289 वें अध्याय में शालिहोत्र ने अश्वों की विशेषताओं तथा रोगों के इलाज का वर्णन किया है। एक अश्व जिसके कम संख्या में दंत हो, दंत रहित हो जो भयानक दिखता हो, दार युक्त खुर हो, एक सींग हो, तीन रंग को हो, बाघ जैसा गंधे जैसा या राख जैसा रंग हो, जिसका रंग अच्छा ना हो, त्वचा पर सफेद दाग हो, जिस पर प्रायः कीबे सवारी करते हो, जिसकी आवाज गंधे के समान हो, आंखे बन्दर के समान, गुदा काली हो, नयुने काले व नुकीले हो, तीतर के जैसा रंग हो जिसके पैर पर सफेद दाग हो, स्याई छल्लों से रहित और छल्ले अशुभता को प्रदर्शित करे, उन्हे अपेक्षित करना चाहिए।

➤ यह अध्याय घोड़े के शुभ व अशुभ चिन्हों, पेट दर्द, अपच, थकावट, पेचिस, कफ, बुखार, सूजन, जीभ पर लकवा, फोड़ा, नेत्र जनित पीड़ा, घाव खुजली आदि से सम्बन्धित है।

➤ 290 वां अध्याय घोड़ों की बीमारी के इलाज हेतु प्रोपराईटरी अधिकारों से सम्बन्धित है, शालिहोत्र घोड़ों के लिए तीन प्रकार के प्रोपराईटरी अधिकारों का उल्लेख किया है। दैनिक, सर्वाधिक वैकल्पिक जो घोड़ों की बीमारियों का इलाज करते हैं।

2. मत्स्यपुराण :- 126 वें अध्याय में (सूर्य रथ वर्णनम्) सुत ने सूर्य व चन्द्रमा की गति करने के दौरान सूर्य व चन्द्र अश्व का वर्णन किया है, इस प्रकार सूर्य अपने घोड़ों के द्वारा तेजी से खींचे जाने वाले रथ पर गति करता है और दिन की समाप्ति पर अपने घर लौट जाता है, उसके रथ में हमेशा भूरे हरे पीले रंग के अश्व जुते रहते हैं। अपनी हजारों किरणों से वह पानी पीता है और इसे खींचने से रोक देता है जब यह संतुष्टी के बिन्दु से गुजरता है फिर वह इसे पुनः वर्षा के रूप में छोड़ देता है।

सूर्य दिन व रात की एक अवधि में अपने सात अश्वों द्वारा खींचे जाने वाले एक पहिये के रथ पर सवार होकर संसार के सात महाद्वीपों व सातों समुद्रों के ऊपर से जल्दी से जाता है। सूर्य के रथ में जुते हुए ये सात घोड़े सात छन्द हैं तो अपनी स्वेच्छा से रूप धारण कर लेते हैं। अपनी इच्छानुसार वे जाते हैं, उनकी

गति वायु के समान है, उनका रंग थोड़ा भूरा पीला सा है, वे ब्रह्मा की शान का वर्णन करते हैं। ऐसे रथ पर सवार होकर सूर्य एक में पृथ्वी की परिक्रम करता है, कल्प के शुरुआत में ही इन घोड़ों को जोत दिया गया था। महाप्रलय के अन्त तक सूर्य इस पर चलता रहेगा, इस प्रकार उनके द्वारा अप्सराएँ उसके चारों ओर नृत्य करते हैं।

इस प्रकार सूर्य को पक्षियों की भांति उड़ते हुए उन घोड़ों के द्वारा ले जाया जाता है, ठीक उसी तरह चन्द्रमा भी अनेक रूपों में चक्कर लगाता है जो अनेक तिथियों में विभक्त है। चन्द्रमा के रथ में तीन पहिये हैं और दोनो सितों पर घोड़े जुते हुए हैं, चन्द्रमा की उत्पत्ति रथ, अश्व व सारथी सहित जल से हुई। यह रथ सुन्दर मालाओं से सुसज्जित है और तीन पहियों पर आरुह शानदार सफेद घोड़े जुते हुए हैं। ये फूर्तिले दैवीय अश्व जो चन्द्रमा के रथ में जुते हुए हैं, संख्या में दस हैं, सुन्दर अशुशवा इसका सारथी है अश्व सीप की भांति सफेद दिखाई देते हैं और एक ही रंग के हैं जो रथ को खींच रहे हैं। आज, गिपथ, वर्षा वाजी, नर, हय, अनुसुमन, सप्तधातु, हंसा व व्योमर्ग नामक दस अश्व चन्द्रमा के रथ सम्बन्धित हैं इस प्रकार यह देवताओं के पितरों से घिरा हुआ आगे बढ़ता रहता है।

3. गरुडपुराण :- गरुड पुराण के 201 वें अध्याय में धनवन्तरी घोड़े आयुर्वेद को व्यक्त कर चुके हैं जिसमें अश्वों के इलाज का वर्णन बताया गया है, गरुड पुराण के अनुसार वे अश्व जिनके कौए के सामन चोंच, काली जीभ, भाजु के जैसा चेहरा साथ ही गर्म तातु तीखें दांत या कम व अधिक संख्या में दांत हो या एक अंडकोष के साथ पैदा हुआ हो या अंडकोषिय ट्यूमर से पीड़ित हो, विकृत पीठ हो, बटे हुए खुर हो या बिल्ली के जैसे पांच हो या बाघ की तरह धारियां हो, त्वचा पर फोड़े के निशान हो, साथ ही जो आकार में बहुत छोटा हो अथवा जिनकी आंखे बिल्ली या बन्दर के समान हो उसे अशुभ मानना चाहिए। बुराईयों के विरुद्ध सुरक्षा करने के तरीके नासूर के प्रकार घावों की अशुद्धता को साफ करने का मिश्रण, बात, पित व कफ की बीमारियों व उनका इलाज भी इसमें वर्णित किया गया है।

गरुड पुराण के अनुसार - घोड़े को थोड़ी भी चोट लग जाए तो उसे गुगल व खीर देनी चाहिए, यदि अश्व कुष्ठ नामुर या लंगड़ेपन का शिकार हो तो उसे त्रिफला का स्वाथ (घोल) देना चाहिए, यदि वह खराब पाचन क्रिया या गंठिया से पीड़ित हो तो उसे गोमूत्र देना चाहिए यदि वह बात पित से पीड़ित हो तो उसे गाय का दूध व मक्खन देना चाहिए। यदि वह दुबला पतला है तो उसे भोजन में मांस भी देना चाहिए।

पतझड़ या गर्मी की सुबह के दौरान अश्व को पांच फलों का पाउडर बनाकर घुड़सी व मक्खन देना चाहिए। यदि अश्व

तुरन्त अपने रंग को एकाकर कर ले और साथ ही मर जाए तो तुरन्त ही यह समझ ले। कि कोई महामारी है। 203 वें अध्याय में श्री हरि कहते की जब धृतकुमारी की पत्तियों को नमक के साथ मिलाया जाता है तो वह घोड़े की खुजली को मिटा देता है।

4. **विष्णु धर्मोत्तर पुराण:-** विष्णु धर्मोत्तर पुराण के भाग द्वितीय में अश्व सम्बन्धित कई अध्याय हैं, अध्याय 2 में अश्व, लक्षण में घोड़े की आकृति का वर्णन मिलता है, अध्याय 46 अश्वचिकित्सा में घोड़े की बीमारियों को वर्णन है व अध्याय 47 अश्वसेन्द्रिक कर विधान में घोड़ों के शान्ति के लिए विभिन्न विद्याओं का प्रस्तुतीकरण है।

अश्व जो मानव जाति के जीवन हेतु एक आवश्यक अवयव है। यही कारण है कि वेदों से लेकर रामायण, महाभारत, पुराण तथा उनके उपजीव्यत्व में लिखे गये नैषध रघुवंशम् आदि महाकाव्यों में अश्वों व

उनके पालन संचालन से सम्बन्धित ज्ञान हमें प्राप्त होता है जो हमारे लिये महत्वपूर्ण है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋग्वेद - मण्डल 1, अनुवाद 22, शुक 163
2. यजुर्वेद - श्री हरिवंशपुराण में पंखधारी घोड़े का उल्लेख मिलता है। अध्याय 22, श्लोक सं. 21
3. अथर्ववेद - अनुवाद 6, काण्ड 19, युक्त 53, मन्त्र 1,
कालो अध्वो वहति सत्तरश्मिः सहस्राक्षो अजरो भूमिररेतः।
तमा रोहन्ति कवयो विपचित्तस्तस्य चक्रा भुवनानि विश्वाः॥१॥
4. अग्निपुराण : अध्याय 208 में
5. मत्स्य पुराण : अध्याय 126 में
6. गरुड पुराण : अध्याय 201 में

भारत-पाकिस्तान के सामरिक हित : दक्षिण एशिया के विशेष संदर्भ में

फकरुद्दीन खान

शोधार्थी, दक्षिण एशिया अध्ययन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर



shodhshree@gmail.com

दक्षिण एशियाई क्षेत्र के सम्बन्ध में किसी सर्वमान्य अवधारणा का अभाव रहा है फिर भी समान्यतः इस एशिया महाद्वीप के दक्षिण में, भौगोलिक दृष्टि से हिमालय की महान पर्वत श्रृंखलाओं तथा हिन्द महासागर तक विस्तृत, प्राचीन काल से सभ्यता एवं सांस्कृतिक रूप से सम्बद्ध आठ सम्प्रभु राष्ट्र-भारत, पाकिस्तान, बंगलादेश, नेपाल, भूटान, मालदीव, श्रीलंका तथा अफगानिस्तान के समूह के रूप में व्यक्त किया जाता है। इस क्षेत्र के अधिकांश राष्ट्र लम्बे समय तक ब्रिटिश साम्राज्य के अधीन थे। अपने औद्योगिक उत्पादों के लिए बाजार की तलाश में ब्रिटेन ने सम्पूर्ण उपमहाद्वीप को न केवल अपने राजनीतिक नियंत्रण में रखा बल्कि इनके अर्थव्यवस्था को भी अपने अनुरूप व्यवस्थित किया। इस क्षेत्र के नेपाल जैसे भू-आबद्ध देश जो ब्रिटिश साम्राज्य से काफी सीमा तक स्वतंत्र स्थिति में थे, अपने आर्थिक अस्तित्व के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवादी शक्ति पर आश्रित थे, क्योंकि उनकी जीवन रेखा ही ब्रिटेन द्वारा नियंत्रित थी। इस प्रकार 19 वीं और 20 वीं शताब्दी के मध्य तक ब्रिटिश उपस्थिति इस क्षेत्र के देशों की विकास प्रक्रिया के निर्धारण में सबसे महत्वपूर्ण कारक थी। ब्रिटिश सेनाओं की वापसी के पश्चात् भी इन देशों ने अपनी अर्थव्यवस्था एवं व्यापारिक संस्थाओं को एक दूसरे से पूरी तरह अलग रखने का प्रयत्न किया। जिससे पारस्परिक क्षेत्रीय व्यापार को प्रोत्साहन नहीं मिल सका। दूसरा महत्वपूर्ण सामाजिक-आर्थिक कारक, जिसने इस क्षेत्र के देशों के आपसी सम्बन्ध निर्धारण की प्रक्रिया को प्रभावित किया-ब्रिटिश शासन के अधीन एक देश के व्यक्तियों का उच्चतर जीवन परिस्थितियों की तलाश में दूसरे देशों में स्थानान्तरण था। इससे ब्रिटिश शासन की समाप्ति के पश्चात्, उपमहाद्वीप के विभाजन के फलस्वरूप उत्पन्न, शरणार्थियों की समस्या ने मुख्यतः भारत एवं पाकिस्तान के अन्तर्-सम्बन्धों को प्रभावित किया। दक्षिण एशियाई क्षेत्र के दो सर्वाधिक महत्वपूर्ण राष्ट्र होने के कारण दक्षिण एशियाई शान्ति एवं सुरक्षा काफी सीमा तक भारत एवं पाकिस्तान के आपसी सम्बन्धों पर ही निर्भर रही हैं। इसके साथ ही साथ सांस्कृतिक कारकों जैसे-भाषा, धर्म आदि की भी दक्षिण एशियाई अन्तर्-सम्बन्धों के निर्धारण कारकों में विशिष्ट भूमिका रही है। इसके अतिरिक्त बाह्य शक्तियों के हस्तक्षेप ने भी दक्षिण एशियाई अन्तर्-सम्बन्धों को प्रभावित किया। मध्य-पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के बीच महत्वपूर्ण सामारिक स्थिति के कारण यह क्षेत्र महाशक्तियों के लिये विशेष रूप से आकर्षण का केन्द्र रहा है। चीन में साम्यवादी शासन की स्थापना के पश्चात् नेतृत्व की उसकी आकांक्षा ने भी इस क्षेत्र की राजनीति को प्रभावित किया। दक्षिण एशियाई क्षेत्र में साम्यवादी प्रसार को सीमित करने तथा खाड़ी क्षेत्र एवं दक्षिण-पूर्व एशिया में अपने राजनीतिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये अमेरिका ने अपनी विदेश नीति में इस क्षेत्र को विशेष महत्व प्रदान किया।

देश की सुरक्षा पर राष्ट्र-नीति का महत्वपूर्ण उद्देश्य रहा है। जिससे की सामारिक हित की पूर्ति हो सके। सुरक्षा का तात्पर्य सिर्फ सीमा सुरक्षा से ही नहीं बरन् आन्तरिक सुरक्षा से भी है, क्योंकि यह संवैधानिक रूप से निर्मित आर्थिक एवं राजनीतिक स्वरूपों की सुरक्षा से सम्बद्ध है और साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में भी

कार्यकलाओं में स्वतन्त्रता के उपयोग का प्रभावशाली माध्यम है। अतः सुरक्षा मुख्य रूप से राज्य विशेष की सैनिक और आर्थिक शक्ति का प्रतिबिम्ब है।¹

सुरक्षा का अर्थ और उसके सन्दर्भ यदि व्यापक हैं तो वह अपने आप में असुरक्षा को जन्म देते हैं। अमेरिकी पर राष्ट्र-नीति के संचालक जब प्रजातन्त्र की सुरक्षा को अपनी सुरक्षा से जोड़ते हैं तब अमेरिकी हित अधिक व्यापक हो जाते हैं और इस अर्थ में असुरक्षा की भावनी इसी क्रम में उत्पन्न होती है। इन स्थितियों में सुरक्षा समिति या क्षेत्रीय अर्थ अधिक उपयोगी लगता है। भारतीय सन्दर्भों में दक्षिण एशिया सन्दर्भ में सुरक्षा मुख्य रूप से सुरक्षा के विचार और भी अधिक प्रासंगिक हैं। इन अर्थों में भारत की सीमाएँ चीन और पाकिस्तान से जुड़ी हैं और सुरक्षा के अर्थों में अधिक संवेदनशील हैं।

सुरक्षा की बहस मूलतः तकनीकी विकास के साथ जुड़ी हुई है। इस दृष्टि से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में सुरक्षा के सारे विचार को सन् 1945 में अणु शक्ति के विकास ने और आगे चलकर विकसित तकनीकी शस्त्र में बदल दिया है। अब सुरक्षा परम्परागत और अणु शक्ति के क्षेत्र में एक साथ चाहिए। इस प्रतिस्पर्धा में सुरक्षा न केवल अधिक खर्चीली हो गई है, बल्कि वह दो स्तरों पर अलग-अलग दृष्टिगोचर होती है। सुरक्षा प्रतिस्पर्धा का एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह भी है कि सुरक्षा की प्रतिस्पर्धा में किस स्तर पर भाग लिया जाए। सुरक्षा के प्रश्न पर केवल राष्ट्रीय सन्दर्भ ही नहीं बरन् अन्तर्राष्ट्रीय सन्दर्भों में भी प्रभावित होती हैं। भारत के अपने अर्थों में क्षेत्रीय सन्दर्भ विशेषकर दक्षिण एशिया से जुड़ा जो मुख्यतः अमेरिका और चीन के बाह्य हस्तक्षेप से प्रभावित होता है। हाल में सुरक्षा के सन्दर्भ में भारत और पाकिस्तान के अणु शक्ति के दर्जे को प्राप्त करने में बदलता है। दोनों राज्यों की सुरक्षा प्राथमिकताएँ निरन्तर बदलती हैं और उसके साथ-साथ तनाव भी।

भारत के आकलन में इस दृष्टि से संकटकालीन न्यूनतम लागत के सिद्धान्त के लिए यह आवश्यक है कि हमारी उन सभी सम्पदाओं का उपयोग होना चाहिए जो कि आर्थिक विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं, साथ ही यह भी आवश्यक है कि जनसंख्या वृद्धि एवं अर्थव्यवस्था के अन्य पहलुओं पर ध्यान रखा जाए। भारत के संविधान के अनुसार यदि कोई सरकार अपने देश की सुरक्षा के लिए अधिक खर्च करना चाहे तब भी वह सम्भव नहीं है। अर्थात् सीमाओं की रक्षा के लिए किसी बड़े सुरक्षा कार्यक्रम को संचालित नहीं कर सकती है। इसका कारण है कि यदि इस संवैधानिक स्वरूप के आधार पर देश की सुरक्षा के आधार पर अधिक खर्च करने लगे तो हमारी आन्तरिक सुरक्षा गम्भीर रूप से कमजोर हो सकती हैं। जब संविधान आधारित, राजनीतिक, आर्थिक व्यवस्था से जनता का बना बड़ा भाग शुब्ध हो सकता है। शुब्ध होने के कारण आन्तरिक सुरक्षा का संकट उत्पन्न हो सकता है जैसे कि चीन में हो गया था।

परन्तु आर्थिक विकास की आवश्यकता और विशेषकर पिछड़ेपन का यह अर्थ नहीं हो सकता कि भारत किसी शक्ति विशेष से जुड़ जाए, क्योंकि इस तरह का कोई कदम हमारी आन्तरिक और बाह्य सुरक्षा को कई तरह से कमजोर कर सकता है। यह कहा जा सकता है कि शक्ति गुट उस देश की दिशा निर्धारित नहीं कर सकता, बल्कि वह तो राज्य में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से ऐसी शक्तियों को बढ़ावा देता है। जो प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था को संकट में डाल सकती है। इस क्रम में एक यथार्थ यह है कि विभिन्न सैन्य संगठनों से जुड़ने वाले कोई भी एशियाई राज्य अपनी आन्तरिक व्यवस्था में राजनीतिक और आर्थिक स्थिरता प्राप्त नहीं कर सके। इस तरह बाह्य सुरक्षा भी सैनिक गठबन्धन के कारण कई तरह से खतरे में पड़ सकती है, क्योंकि यह राष्ट्र की बाह्य सम्प्रभुता का क्षरण है।

1980 का दक्षिण एशियाई राजनीतिक परिदृश्य किसी भी रूप में भारतीय हितों के अनुकूल नहीं था। अफगानिस्तान में रुसी हस्तक्षेप, पाकिस्तान द्वारा परमाणु शक्ति प्राप्त करने के प्रयास तथा हिन्द महासागर में बड़ी शक्तियों की बढ़ती हुई शस्त्र प्रतिस्पर्धा क्षेत्रीय वातावरण को प्रभावित कर रही थी। यद्यपि 1972 के पश्चात् रुस-अमेरिकी सम्बन्धों में आये तनाव शैथिल्य की स्थिति ने हिन्द महासागर क्षेत्र में महाशक्तियों की शक्ति प्रतिस्पर्धा सीमित होने की सम्भावनाये उत्पन्न की थी परन्तु अफगानिस्तान में रुसी सेनाओं के प्रवेश ने इन समस्त सम्भावनाओं को समाप्त कर नव शीतयुद्ध का प्रारम्भ कर दिया। श्रीमती गांधी के पुनः पदासीन होने के पश्चात् अफगानिस्तान संकट के सन्दर्भ में भारत को पहली बार संयुक्त राष्ट्र के अन्दर जनवरी, 1980 में 17 देशों के उस प्रस्ताव पर अपनी राय देनी थी जिसमें सोवियत कार्यवाही की भर्त्सना की गई थी तथा अफगानिस्तान के क्षेत्र से रुसी सेनाओं के तत्काल, बिना शर्त, पूर्व वापसी की मांग की गई थी। अफगानिस्तान समस्या के परिप्रेक्ष्य में भारत-पाकिस्तान सम्बन्धों में तनाव महसूस किया गया विशेषतः उस स्थिति में जब अमेरिका पाकिस्तान के माध्यम से दक्षिण एशियाई राजनीति कर रहा था इस समस्या के परिप्रेक्ष्य में अमेरिका ने पाकिस्तान को व्यापक सैन्य सहायता का प्रस्ताव रखा था। कार्टर प्रशासन ने पाकिस्तान के लिये 400 मिलियन डालर की सैनिक सहायता एवं आर्थिक सहायता का प्रस्ताव रखा था जिसे जनरल जिया यह कह अस्वीकार कर दिया कि इससे उनकी सुरक्षा आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होगी, इस्लामी बम की अवधारणा उस समय भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद का एक अन्य आधार थी। यह अवधारणा भारत के साथ-साथ सम्पूर्ण दक्षिण एशियाई हितों के प्रतिकूल थी। भारतीय उपमहाद्वीप में इसका सबसे अधिक प्रभाव भारत पर पड़ता तथा बाध्य होकर भारत को भी सैन्य प्रतिस्पर्धा में सम्मिलित होना पड़ता जो इनके आपसी सम्बन्धों के साथ-साथ क्षेत्रीय सुरक्षा के लिये भी हानिकारक था।

भारत के सामने सुरक्षा की दृष्टि से तीन चिन्ताएं मुख्य हैं, जिनमें वैश्विक सामरिक सुरक्षा चुनौती, दूसरा दक्षिणी एशियाई परिप्रेक्ष्य में सामरिक सुरक्षा चुनौती, तीसरी आन्तरिक चुनौती। भारत की तरह किसी राष्ट्र के क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य में उसके पड़ोसी राष्ट्रों से सम्बन्धों की प्रकृति एवं स्थिति का बड़ा महत्व होता है। यदि सम्बन्ध मधुर और परस्पर मैत्रीपूर्ण हैं तो सुरक्षा परिदृश्य शान्त एवं स्थायी होता है। परन्तु यदि सम्बन्ध तनावपूर्ण एवं शत्रुतापूर्ण हैं तो सुरक्षा परिदृश्य स्वातेजिक एवं सामरिक आघातों की दृष्टि से संघर्षपूर्ण एवं अस्थिर होता है।

भारत सदा से ही अपने पड़ोसी राष्ट्रों के साथ मैत्रीपूर्ण एवं सहयोग पूर्ण सम्बन्धों की स्थापना एवं प्रगति में विश्वास रखता है, क्योंकि इससे रक्षा एवं सुरक्षा सम्बन्धी चुनौतियों को कम करने का अवसर प्राप्त होता है तथा राजनीतिक एवं अन्य सम्बन्धों को मजबूत करने का काल शुरु होता है। वर्तमान समय में भारत सहयोग बढ़ाने तथा तनावों को कम करने का प्रयास कर रहा है। तथा इसके लिए विभिन्न प्रकार के क्षेत्रों की खोज की जा रही है। जिनमें पड़ोसी राज्यों के साथ समान, उभयनिष्ठ एवं परस्पर संबंधी हितों का सृजन किया जा सके, जिससे क्षेत्रीय स्तर पर एक ऐसे वातावरण का निर्माण किया जा सके जो भारत को आर्थिक एवं सैनिक दृष्टि से शक्तिशाली राष्ट्र बनाने में सहायक एवं अनुकूल हो सके। परन्तु विगत वर्षों में जिस तीव्र गति से अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम में परिवर्तन हुए हैं, उनका तात्कालिक एवं दीर्घकालिक प्रभाव एशिया पर पड़ा है। अमेरिका द्वारा प्रस्तावित एवं प्रतिपादित वैश्विक आतंकवाद विरोधी युद्ध, जनसंहार के आयुधों एवं परमाणु तकनीक तथा सामग्री का अवैध प्रसार, प्रक्षेपास्त्र तकनीक प्रसार एवं विकास जैसे मुद्दों का सीधा सम्बन्ध भारतीय सुरक्षा के क्षेत्रीय परिदृश्य से है। यदि हम भारत के क्षेत्रीय स्वरूप को मात्र दक्षिण एशिया या सार्क देशों तक ही सीमित न रखा जाये तो। अफगानिस्तान में अमेरिका उपस्थिति के बावजूद भी मादक पदार्थों के उत्पादन, व्यापार, आतंकवादी गुटों एवं समूहों में अपेक्षाकृत कमी नहीं आई है। इसका सीधा प्रभाव भारतीय सुरक्षा पर पड़ रहा है। पाकिस्तान स्थित कट्टरपंथी समूहों द्वारा हाल ही में जिस प्रकार से सेना का विरोध किया जा रहा है। उससे स्पष्ट होता है कि भविष्य में इन समूहों द्वारा भारत विरोधी बड़ी कार्रवाई से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

यदि हम भारत के क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य का अवलोकन करें तो हमें उस अर्ध चन्द्र को ध्यान में रखना चाहिए जो अदन से प्रारम्भ होकर दक्षिण पूर्व एशिया तक जाता है। मध्य एशिया तथा अफ्रीका का पूर्वी तट भी इसी क्षेत्र के हितों से जुड़े हैं। पश्चिम एशिया ऊर्जा के साधन तेल की दृष्टि से सबसे समृद्ध क्षेत्र है और इस क्षेत्र से भारत भारी मात्रा में तेल आयात करता है। दूसरे, योग्य जनशक्ति के कारण रोजगार का बड़ा क्षेत्र है, जिससे भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा की प्राप्ति होती है। तीसरे, यह क्षेत्र हमारी यूरोप की ओर जाने वाली संचार रेखा पर

स्थित है। दुर्भाग्यवश यह क्षेत्र अनेक कारणों से अस्थिर क्षेत्र के रूप में बना हुआ है। फिलिस्तीन समस्या का निदान न निकालना इस क्षेत्र में तनाव एवं आतंकवाद का कारण बना है।

दक्षिण पूर्व एशिया बाजार एवं निवेश की दृष्टि से भारत के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इन्डोनेशिया, दक्षिण वियतनाम तटीय क्षेत्र और म्यानमार से तेल आयात का एक विकल्प भी भारत को मिलता है। पूर्वी एशिया तथा प्रशान्त महासागर से अमेरिका जाने वाला प्रसिद्ध परिवहन एवं संचार मार्ग इसी क्षेत्र से होकर गुजरता है। यह क्षेत्र आसियान संगठन सफलता से स्थिरता वाला क्षेत्र है। हाल में विपेशकर इन्डोनेशिया में कट्टरपंथी का प्रभाव बढ़ा है और उनके पश्चिमी एशिया के सशस्त्र गुटों से सम्पर्क है। यह राज्य भारत निकोबार द्वीप समूह से सबसे निकट पड़ोसी राष्ट्र है। यद्यपि भारतीय नौसेना मलक्का की खाड़ी में भारतीय हितों की रक्षा में सलग्न है, फिर भी निकोबार की महत्वपूर्ण स्वातेजिक स्थिति का लाभ उठाने की आवश्यकता है। म्यांमार भारत के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण राष्ट्र है क्योंकि इसकी सीमायें भारत से मिलती हैं तथा चीन म्यांमार के साथ अपने आर्थिक एवं सैनिक सम्बन्धों को सुदृढ़ बना रहा है। इससे भविष्य में किसी भारत-चीन संघर्ष की स्थिति में रक्षा सम्बन्धी गम्भीर चुनौतियाँ उत्पन्न हो सकती हैं।

पाकिस्तान की तरफ से किसी भी सम्भावित हमले से सुरक्षा के लिये तैयारी रखना। दूसरा चीन के सैनिक दबाव का निराकरण करना। उपरोक्त सुरक्षा सम्बन्धी चिन्ताओं में जहां तक चीन का तात्कालिक है, वहां उससे सुघरते हुये सम्बन्धों से कम से कम एक मनोवैज्ञानिक दबाव तो कम हुआ है। अमेरिका के साथ-साथ तनाव बढ़ने के बाद उनकी बदलती हुई दक्षिण एशियाई नीति के कारण भारत की उत्तरी सीमा से कुछ पहाड़ी डिवीजनों को हटाकर अन्यत्र अधिक खतरे वाले क्षेत्र में लगाना सम्भव हुआ है। लेकिन खतरे का राजनीतिक प्रबन्ध या सामरिक ब्यूह रचना सम्पूर्ण सुरक्षा के दो अंग मात्र है।

हालाँकि अटल बिहारी बिहारी वाजपेयी की लाहौर बस यात्रा (फरवरी 1999) के सम्बन्धों में तनाव का तापमान कुछ कम हुआ है, क्योंकि पोखरन विस्फोट (मई 1998) के बाद दोनों के रिश्तों में सुधार की प्रक्रिया उलट गई थी, जिसे इन्द्रकुमार गुजराल ने आगे बढ़ाया था। नवाज शरीफ और श्री वाजपेयी की बातचीत से सम्भावनाओं के द्वार खुले। प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी की लाहौर बस यात्रा (22 फरवरी, 1999) के दौरान लाहौर घोषणा पत्र पर दोनों प्रधानमन्त्रियों के हस्ताक्षर करने से ऐसा लगा कि दोनों देशों के एक दूसरे के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप न करने, शिमला समझौते का पालन एवं बैलेस्टिक मिसाइलों के परीक्षण की अग्रिम सूचना तथा परमाणु परीक्षण आगे न करने की अपनी प्रतिज्ञा पर जब तक कायम रहेंगे तब तक कि राष्ट्रीय हितों के विरुद्ध कोई असाधरण परिस्थिति पैदा न हो जाये परन्तु कारगिल युद्ध ने (मई से जुलाई 1999) लाहौर घोषणा पत्र की बचनबद्धता को चकनाचूर कर दिया। क्योंकि

बाजपेयी ने लाहौर की यात्रा इस विश्वास के साथ की थी कि दोनों पड़ोसी देश पुरानी कटुता को भुलाकर दोस्ती का एक नया अध्याय शुरू करेंगे और दक्षिण एशिया में प्रगति का एक नया मार्ग प्रशस्त होगा। पाकिस्तान ने नियंत्रण रेखा का उल्लंघन कर घुसपैठियों के साथ अपने फौजियों को पठानी वेश-भूषा में, कारगिल क्षेत्र में भेजकर विश्वासघात का काम किया। घुसपैठियों को कारगिल, बटालिक, द्रास आदि क्षेत्रों से खदेड़ने के लिये भारतीय सेना को जो उनसे युद्ध करना पड़ा, उसमें लगभग 1000 अधिकारियों एवं जवानों को शहीद होना पड़ा। सन् 1971 में पाकिस्तान के साथ जो युद्ध हुआ उसमें भी न तो इतने लोग मारे गये और न इतने घायल हुये। हालांकि कारगिल में करारी सैनिक हार के बाद पाकिस्तान सरकार, सेना और उसकी गुप्तचर एजेंसी आई.एस.आई. कश्मीर में आतंकवाद को बढ़ावा देने में लगे हुये हैं।

पाकिस्तान का दूसरा कदम भारतीय परम्परागत सैनिक श्रेष्ठता के विरुद्ध परमाणु आयुधों का निर्माण करना है। इस क्षमता से पाकिस्तान द्वारा भारत के विरुद्ध अलगावादी समर्थन के बदले सैनिक कार्रवाई, या प्रतिकार दण्ड देने को प्रतिरोधित करेगी। कारगिल संघर्ष से स्पष्ट हो जाता है कि पाकिस्तान की परमाणु धमकी के बावजूद भी भारत ने सीमित स्तर पर सैन्य कार्रवाई को संचालित किया। सम्भवतः बाध्य होकर पाकिस्तान को भारत के साथ अनुकूल परिस्थिति विकसित करने की आवश्यकता पड़ी। भारत-पाक सम्बन्धों के बीच अनेक ऐसे सिद्धान्तिक विवाद के आधाम विद्यमान है कि वर्तमान में किये जा रहे सकारात्मक एवं परस्पर विश्वास बढ़ाने के उपाय, कितने सफल होंगे यह बताना कठिन है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि अमेरिका कितने दबाव का प्रयोग इन दोनों राष्ट्रों पर करता है। फिर भी भारत को अपनी सीमाओं की रक्षा एवं तैयारी को मजबूत रखना है, किसी भी आकस्मिक घटना का सामना करने के लिए।

भारतीय क्षेत्रीय सुरक्षा परिदृश्य में चीन का स्थान एवं भूमिका बहुत ही निर्णायक होती हैं। भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित चीन की परमाणु क्षमता, बढ़ती सैनिक क्षमता एवं अर्थव्यवस्था तेजी से प्रगति कर रही है। मजबूत अर्थव्यवस्था एवं औद्योगिक क्षमता भारत की स्वातेजी के महत्वपूर्ण घटक हैं। भारत-चीन दोनों बड़े स्थल शक्ति वाले राष्ट्र हैं। ऐतिहासिक काल से ही चीन की नीति एक साम्राज्यवादी एवं विस्तारवादी राज्य की रही है। दोनों राष्ट्रों के बीच सीमा विवाद के समाधान की सम्भावनाओं के बावजूद भी चीन की बढ़ती सैनिक एवं आर्थिक शक्ति भारत की सुरक्षा के लिए चिन्ता का विशय है। चीन की राजनीतिक महत्वकांक्षा, विश्व व्यवस्था में एक शक्तिशाली केन्द्र के रूप में स्थापित होने की है, साथ ही चीन एशिया की एक मात्र शक्ति का रूप ग्रहण करना चाहता है, उसकी इस क्षेत्रीय राजनीतिक इच्छा की पूर्ति में भारत की रक्षा और आर्थिक प्रगति एक चुनौती है। चीन ने पाकिस्तान को परमाणु और प्रक्षेपास्त्र तकनीकी

प्रदान की और मकराना के तट पर खादर तथा पसनी बन्दरगाहों और सैनिक केन्द्रों को विकसित करने में सहायता भी प्रदान कर रहा है। म्यानमार के साथ मिलकर कोको द्वीप पर अपना एक राडार केन्द्र विकसित कर रहा है। जो कि अन्दमान निकोबार, द्वीप समूह के निकट है। चीन तिब्बत में अपने परमाणु आयुधों की तैनाती कर रहा है। नेपाल, बंगलादेश, श्रीलंका में परिवहन एवं संचार मार्गों का निर्माण कर रहा है जो कि उनकी भारत की घेरे बन्दी की दीर्घकालीन स्वातेजी के दूसरे महत्वपूर्ण घटक हैं।

चीन 12% प्रतिवर्ष की दर से प्रगति कर रही विश्व की सबसे तेजी से विकसित हो रही अर्थव्यवस्था है और ऐसा अनुमान किया जाता है कि वह 2020 तक अमेरिका को पीछे छोड़ देगा। भारत अपनी 8 से 9% की विकास दर के साथ दूसरी महत्वपूर्ण अर्थव्यवस्था के रूप में सामने आ रहा है। जो अगले 10 से 15 वर्षों के भीतर विश्व की चौथी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था वाला राष्ट्र होगा। आगामी वर्षों में भारत चीन के बीच संघर्ष की सम्भावना कम है क्योंकि दोनों अपने आर्थिक, राजनीतिक और सैनिक रूपान्तरण के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा कर रहे हैं। हिमालय की सीमा पर शक्ति सन्तुलन दो राष्ट्रों में बँटा है तथा चीन सीमावर्ती क्षेत्रों में अपनी सम्भार तन्वीय आवश्यकताओं को बढ़ाकर तथा विकसित कर भारत के विरुद्ध परम्परागत संघर्ष में अपनी श्रेष्ठता को बनाये रखना चाहता है। भारत चीन के बीच संघर्ष की सम्भावना 21 वीं सदी के दूसरे या तीसरे दशक में उत्पन्न होने की सम्भावना है। जिसमें सीमा पर या हिन्द महासागर में चीन के विरुद्ध संघर्षरत होना पड़ सकता है। यह सब इन दोनों राष्ट्रों के मध्य सम्बन्धों, अमेरिका-रूस की भूमिका तथा जापानी प्रभाव पर निर्भर होगा।

ताइवान, चीन और अमेरिका के बीच संघर्ष एवं तनाव का एक मूल कारण है और इन दोनों के भविष्य में सम्बन्धों पर निर्भर करेगा, क्योंकि प्रजातान्त्रिक ताइवान की चीन में मिलने की कोई इच्छा नहीं है। ताइवान ने चीन के साथ व्यापारिक सम्बन्धों को बढ़ा रखा है तथा चीन में पूंजी निवेश भी कर रहा है तथा साथ ही साथ सैनिक शक्ति को सुदृढ़ कर रहा है ताकि चीन की मुख्य भूमि से किसी भी आक्रामक कार्रवाई का सामना कर सके। क्या चीन ताइवान के एकीकरण के लिए सैनिक साधनों का सहारा लेगा, यदि ऐसा हुआ तो अमेरिकी हस्तक्षेप की सम्भावनाएं उत्पन्न होंगी। इस मुद्दे पर चीन-अमेरिका संघर्ष की कोई सम्भावना नहीं है। परन्तु फिर भी किसी कारण इनके बीच अविश्वास उत्पन्न होगा, तो वह दक्षिण एशिया की सुरक्षा को निश्चित रूप से प्रभावित करेगा। यदि अफगानिस्तान और ईराक में अमेरिकी हितों की पूर्ति हो जाती है, तो अमेरिका-भारत के बीच बढ़ता सहयोग चीन की क्षेत्रीय प्रभुत्ववादी नीति के लिए एक खतरा उत्पन्न हो जायेगा। ऐसी स्थिति में चीन और पाकिस्तान के नजदीक सम्बन्धों में प्रगति होगी और जो पाकिस्तान को भारत के विरुद्ध किसी गलत कदम उठाने को प्रोत्साहित कर सकती है। भारत के

सुरक्षा परिदृश्य के लिए ऐसे कारकों को सावधानी पूर्वक व्याख्या एवं विवेचना की आवश्यकता है और भारत चीन के बड़े संघर्ष की सम्भावना वायु तथा हिन्द महासागर क्षेत्र में होने की सम्भावना है, थल पर बड़े युद्ध की सम्भावना स्थलाकृति के दुर्गम एवं कठिन होने के कारण कम होगी। चीन ने तिब्बत में अपनी 9 या 10 डिविजन की सैनिक शक्ति को सदैव बनाये रखेगा तथा वे युआन, सिचुआन, किंगडै तथा जियांग-जियांग स्थित अतिरिक्त सैनिक केन्द्रों से भी सहायता प्राप्त कर सकता है। इसके साथ चीन ने तिब्बत में वायु सैनिक केन्द्रों, परिवहन तथा संचार के मार्गों के विकास, सभी मौसमों में प्रयोग के लिए अनेक हवाई पट्टियों का निर्माण कर चुका है तथा रेल मार्ग द्वारा भी तिब्बत को जोड़ा जा चुका है। लाहसा तक रेल पाइप लाइन को बिछाने का कार्य पूरा हो चुका है। चीन अपने बैलेस्टिक प्रक्षेपास्त्रों का तीव्र गति से आधुनिकीकरण कर रहा है। डी.एफ. 41 तथा डी. एफ. 42 नामक प्रक्षेपास्त्रों को पहले ही विकसित कर चुका है जिनकी मारक क्षमता 8000 किमी. से 10000 किमी. तक है। इसके साथ पनडुब्बियों से छोड़े जाने वाले जे.एल. 2 नामक बैलेस्टिक प्रक्षेपास्त्रों के विकास का कार्य प्रगति पर है। हिन्द महासागर क्षेत्र में वह पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका, म्यानमार में नौ सैनिक केन्द्र प्राप्त करना चाहता है जो वायु सैनिक सुविधाओं से भी सम्पन्न हो। अलगे कुछ वर्षों में चीन "नीले समुद्र वाली नौसेना" की क्षमता से सुसज्जित हो जायेगा।

सोवियत विघटन के बाद पाँच नये गणतन्त्रों का जन्म हुआ। तजाकिस्तान, तुर्कमेनिस्तान और उजबेकिस्तान का जन्म हुआ। प्रत्येक गणतन्त्र अपनी राष्ट्रीय पहचान की समस्या से प्रस्त है। इस क्षेत्र का भौगोलिक महत्व यह है कि यह क्षेत्र रूस, मध्यपूर्व, दक्षिण एशिया और पूर्व एशिया से जुड़ा है। अपनी आन्तरिक दुर्बलताओं के कारण ये राष्ट्र अपने पड़ोसी सैनिक शक्तियों के साथ गठबन्धन कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में मध्य एशिया का स्वातंत्र्य परिदृश्य चुनौतीपूर्ण हो जायेगा और उसका सीधा प्रभाव पूरे एशिया की सुरक्षा पर पड़ेगा। नृजातीय एवं धार्मिक तनाव, ऊर्जा की राजनीति तथा सभी बड़ी शक्तियों के हित इस क्षेत्र से जुड़े हैं, जो एशिया से जुड़े हैं।

नवम्बर 2004 के अन्त में वियतनाम में चीन के प्रधानमंत्री वेन जियाबाओ एवं प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के बीच द्विपक्षीय मुद्दों पर सार्थक बातचीत हुई। दोनों देश भूमंडलीकरण से होने वाली लाभों को अपनी आर्थिक प्रगति के लिये अपरिहार्य मानते हैं। परन्तु जहाँ भारत स्वाभाविक रूप से एशिया में स्वयं को चीन के समकक्ष रखता है, वहीं चीन अपनी तुलना केवल अमेरिका से करता है। दक्षिणी एशिया में पाकिस्तान के परमाणु एवं मिसाइल कार्यक्रम को सहायता प्रदान करके स्ट्रेटिजिक प्रेशर प्वाइंट बनाना इसी प्रयास का हिस्सा है। इसने भारत को क्षेत्रीय सुरक्षा चिन्ताओं के चक्रव्यूह में इतना उलझा दिया कि वह वैश्विक स्तर पर अपनी क्षमता एवं योजना के अनुरूप सशक्त भूमिका नहीं निभा पाया है। इसके बावजूद अन्य एशियाई

देशों नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका तथा मालद्वीप में चीन ने ऋण एवं सहायता की कूटनीतिक अपनाकर सामरिक रूप से भारत को घेरने के प्रयासों को जारी रखा है।

दक्षिण एशिया में पाकिस्तान के सामरिक हित

पाकिस्तान की परराष्ट्रनीति का मुख्य तत्व भारत विरोध है। भारत को आशा थी कि विभाजन के बाद शांति स्थापित हो जायेगी, परन्तु भारत की इन आशाओं पर पानी फिर गया। इसका एक अच्छा उदाहरण यह है, कि पाकिस्तान ने अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु अक्टूबर 1947 में कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। आरम्भ से ही पाकिस्तान भारत के साथ शत्रुता का व्यवहार करता आ रहा है। यद्यपि भारत ने पाकिस्तान द्वारा किये गये आक्रमण को सुरक्षा-परिषद के सामने प्रस्तुत किया, परन्तु तब तक पाकिस्तान ने कश्मीर का बहुत बड़ा हिस्सा अपने कब्जे में कर लिया था। 1954 में पाकिस्तान 'आंग्ल-अमरीका' गुट द्वारा बनाये गये संगठनों में सम्मिलित हो गया, जिसके फलस्वरूप सुरक्षा-परिषद में आंग्ल-अमरीकी गुट ने पाकिस्तान समर्थक दृष्टिकोण अपनाया, इसलिए पाकिस्तान का झुकाव पश्चिमी गुट की ओर और भी अधिक हो गया। इतना सब कुछ हो जाने के बाद भी पाकिस्तान अपनी हरकतों में कोई परिवर्तन नहीं लाया और पाकिस्तान ने यह ऑकलन किया कि चीन के साथ 1962 के सीमा संघर्ष के पश्चात् भारत गिरे मनोबल और दुर्बल सैन्य शक्ति वाला देश रह गया है। पाकिस्तान ने परिस्थिति अनुकूल समझ कर, अगस्त 1965 में दूसरी बार कश्मीर को हस्तगत करने की योजना बनाई कूट-नाम "आपरेशन जिब्राल्टर" था। अप्रैल 1965 में पाकिस्तान ने अमेरिकी पैटर्न टैंकों एवं आधुनिक अमेरिकी उपकरणों का प्रयोग करते हुए कच्छ के रन पर हमला बोल दिया तथा कई स्थानों पर अधिकार कर लिया। मई 1965 में, कारगिल क्षेत्र में भी युद्ध विराम का अतिक्रमण करने का असफल प्रयास किया। फिर पाकिस्तान ने छम्ब-जौरिया क्षेत्र में हमला बोल दिया। पाकिस्तानी सेना ने राजस्थान में भी सीमा का अतिक्रमण किया। अन्ततः 1965 में पाकिस्तान ने भारत पर सम्पूर्ण आक्रमण कर दिया। इसी नीति का पालन करते हुए पाकिस्तान ने 1971 में एक बार फिर भारत पर आक्रमण किया, यद्यपि इसमें पुनः पाकिस्तान को पराजय झेलनी पड़ी।

पाकिस्तान आज भी अपनी हरकतों से बाज नहीं आ रहा है, और निरन्तर भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करता जा रहा है। आज भी भारत में आतंकवादियों को भेजना एवं उनको हथियारों आदि की लगातार आपूर्ति करना तथा भारत के आंतरिक मामलों में गतिरोध उत्पन्न करना, उसका मुख्य उद्देश्य बना गया है। भारत के शत्रु देशों से वह मित्रता बढ़ाने में भी लगा हुआ है। अतः इससे स्पष्ट होता है, कि पाकिस्तान की विदेश-नीति पूरी तरह भारत-विरोधी है।

1971 के युद्ध के समय पाकिस्तान को अमेरिका से भरपूर सहायता

प्राप्त हुई, जबकि सोवियत संघ ने आवश्यकता पड़ने पर पुनः भारतीय पक्ष का समर्थन किया और इससे स्पष्ट हो गया कि सोवियत संघ का भारत को समर्थन देना ही नहीं था, बल्कि यह भी था कि पाकिस्तान में जो सोवियत विरोधी दो शक्तियाँ (अमेरिका तथा चीन) क्रियाशील थीं उनको एक चेतावनी भी थी। जब 1979 में अफगानिस्तान समस्या सामने आई तब से न तो पाकिस्तान और न ही सोवियत संघ एक दूसरे से संतुष्ट हो पा रहे थे। सोवियत संघ यह चाहता था कि पाकिस्तान अपने यहाँ से अमेरिकी इशारे पर चलने वाले मुजाहिद्दीन विद्रोहियों का समर्थन न करे, परन्तु पाकिस्तान ऐसा नहीं कर रहा था। अतः अभी भविष्य में पाकिस्तान और सोवियत संघ के सम्बन्ध सामान्य से अच्छे नहीं हो पायेंगे।

पाकिस्तान और चीन

पाकिस्तान ने अपने संगठन में शामिल करने की नियत के कारण पहले ही 1950 में साम्यवादी चीन को मान्यता दे दी थी और सामान्य राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये थे। जैसे ही पाक नीतियों से साम्यवादी विचारों के प्रति विरोधी स्वर मुखरित हुए उसने सीटो (SEATO) की सदस्यता ग्रहण की, तो चीन उससे नाराज हो गया और पाकिस्तानी-प्रवृत्ति की आलोचना की। धीरे-धीरे पाकिस्तान और चीन के सम्बन्धों में सुधार हुआ। ज्यों-ज्यों भारत और चीन के सम्बन्ध तनावपूर्ण हुए, त्यों-त्यों पाकिस्तान और चीन के सम्बन्ध मधुर होते रहे।

1962 में भारत पर जब चीन ने आक्रमण किया तो पाकिस्तान ने उसका समर्थन किया। एशिया में भारत की स्थिति को कमजोर करने के लिये एवं चीन के साथ अपने सम्बन्ध सुधारने के लिये 1963 में पाकिस्तान ने चीन के साथ एक सीमा समझौता करके कश्मीर का एक बड़ा भू-भाग उसे प्रदान कर दिया। चीन की स्थिति को मजबूत करने हेतु चीन से पाकिस्तान तक सड़क बनाने का समझौता भी पाकिस्तान ने किया और चीन से तमाम सैनिक सहायता प्राप्त करके उसके बदले चीन को अपने यहाँ सैनिक सुविधायें भी प्रदान की।

1965 के युद्ध के समय भारत का विरोध करके चीन ने पाकिस्तान को अपना समर्थन दिया। चीन ने पाकिस्तान की प्रत्येक उस नीति का समर्थन भी किया जो भारत विरोधी हो अथवा भारत को किसी भी प्रकार क्षति पहुँचा सके। अतः दोनों में भारत विरोधी षड्यन्त्र के साथी होने की मैत्री का पुट है। पाकिस्तान के विदेश मंत्री तथा कूटनीतिज्ञ चीन की यात्राओं के द्वारा तथा चीनी शिष्टमंडलों को पाकिस्तान बुलाकर अपनी मैत्री का इजहार कर रहे हैं। यह भी समाचार है, की पाकिस्तान को आणविक क्षमता प्रदान करवाने में अपना सम्पूर्ण सहयोग दे रहा है जिसके अन्तर्गत 500 चुम्बकीय छह्ले भी दिये गये हैं।

पाकिस्तान और अफगानिस्तान

भारत की तरह अफगानिस्तान भी पाकिस्तान का सीमावर्ती राष्ट्र है।

दोनों राष्ट्रों में धार्मिक आधार पर समानता है, लेकिन फिर भी पाकिस्तान और अफगानिस्तान में अच्छे सम्बन्ध नहीं स्थापित हो पाये हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि पाकिस्तान के द्वारा चलाये जा रहे, आन्दोलन से वह कभी संतुष्ट नहीं हो पाया है। इसके अतिरिक्त दोनों राज्यों में 'ड्यूरेण्ड सीमा-रेखा' भी सीमा-विवाद का कारण है।

अफगानिस्तान द्वारा पख्तूनिस्तान की माँग का पाकिस्तान द्वारा लगातार विरोध व आलोचना की जाती रही है। पाकिस्तान चाहता था कि अमेरिका इस मामले को अपनी दादागिरी से दबा दे, परन्तु अमेरिका जानता था कि ऐसा करना उसे मंहगा पड़ेगा और सोवियत रूस अफगानिस्तान में आ बैठेगा। पाकिस्तान ने अफगानिस्तान के विरुद्ध सीटो में आवाज उठाई, परन्तु ईरान व टर्की ने यहाँ उसकी एक न सुनी।

1965 के युद्ध के समय पाकिस्तान को अफगानिस्तान से अपने समर्थन तथा भारत के विरोध की आशा थी, परन्तु उसकी यह मंशा पूरी नहीं हो सकी, बल्कि उल्टे अफगानिस्तान ने भारत का पक्ष लिया और पाकिस्तान को आक्रमणकारी बताया। वयोवृद्ध स्वतंत्रता सेनानी तथा सम्माननीय नेता सीमांत गान्धी खान अब्दुल गफार खाँ ने पाकिस्तान विरोध हेतु आन्दोलन किया पर भुट्टो ने अदूरर्शिता दिखाकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया, किन्तु बाद में जनरल जिवा ने उन्हें रिहा कर दिया। चीन और अमेरिका के इशारे पर अफगान विरोधी कार्यवाहियों करके पाकिस्तान ने अफगानिस्तान से अपने सम्बन्ध बिगाड़ लिये हैं। इधर पाकिस्तान में अफगान शरणार्थी आ गये, जिन्हें (विरोधी संगठन मुजाहिद्दीन) अमेरिका ट्रेनिंग देता रहा, परन्तु इससे पाकिस्तान पर आर्थिक बोझ बढ़ गया। अफगानिस्तान में रुसी सेनाओं की उपस्थिति के कारण पाकिस्तान उस समय अफगानिस्तान में कुछ भी नहीं कर पा रहा था। अतः पाकिस्तान 'बुरे फंसे' की कहावत को चरितार्थ कर रहा था। इस समय पाकिस्तान और अफगानिस्तान के सम्बन्ध पुनः बेहद तनावपूर्ण स्थिति में हैं। अफगानिस्तान के वर्तमान राष्ट्रपति नुरहानुद्दीन रब्बानी और पाक प्रशिक्षित तालीबान कट्टरवादी गुटों में जोरदार संघर्ष जारी है।

अप्रैल 1992 में मुजाहिद्दीन विद्रोहियों ने लगभग सफलता प्राप्त कर ली थी। पाकिस्तान में 1992 से लगभग 14 वर्ष पूर्व आये शरणार्थी धीरे-धीरे अपने बतन की ओर रवाना हो गये। इससे पाकिस्तान को सबसे ज्यादा खुशी होनी स्वाभाविक थी। अफगानिस्तान में अब आगे किस प्रकार के हालात होंगे और नयी सम्भावित सरकार किस प्रकार की नीति अपनायेगी उसी के आधार पर दोनों पड़ोसी राष्ट्रों के सम्बन्ध पनपेंगे। इस समय पाक के अफगानिस्तान में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप से सम्बन्धों में सुधार की सोच दूर होती जा रही है।

पाकिस्तान की परमाणु नीति में भी उसके खुफिया संगठन (आई. एस. आई.) की पूरी पकड़ है अर्थात् वैदेशिक मामलों पर अपना पूरा एकाधिकार रख पाने में यह खुफिया संगठन पूर्णतः सक्षम है। अलग-

अलग क्षेत्रों में अलग-अलग कार्यवाहियों को अंजाम देने के लिए इसके अनेक उपसंगठन भी कार्यरत हैं। संक्षेप में तुलना की जाये तो जैसे नाजी गेस्टापो, सोवियत संघ में के. जी. बी. तथा अमेरिका में सी. आई. ए. जैसे संगठन कार्य करते हैं। ठीक इसी प्रकार पाकिस्तान में आई. एस. आई. कार्य करता है। आई. एस. आई. की अवधारणा इस्लाम धर्म पर आधारित है, इसलिए अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु विश्व के किसी भी देश में अपने अभियानों को अंजाम दे सकता है।

पाकिस्तान ने भारत समेत दुनिया के अनेक देशों में आतंकवाद एवं अलगाववाद को बढ़ावा दिया है। अब इसके लिए पाकिस्तान को न केवल पश्चिमी देशों से ही, बल्कि मुस्लिम देशों से भी चेतावनी मिल रही है और चीन ने भी इसका संकेत किया है। आज स्थिति यह है कि पाकिस्तान स्वयं ही विभाजन के कगार पर पहुँच गया है। सिंध के मुजाहिरों का कहना है कि वे अलग प्रान्त बनाकर ही दम लेंगे। और तभी न्याय हो सकता है। इस प्रकार पाकिस्तान ने अपनी विदेश नीति का एक आधार बनाया है, भारत को खत्म करना, जो कि गलत ही नहीं बल्कि घातक धारणा है, इससे सम्बन्ध सामान्य तो दूर, तनावपूर्ण अधिक होते जा रहे हैं।

पाकिस्तान की परराष्ट्रनीति के सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि वह एक तरफ तो हथियार बटोरने में लगा है और दूसरी ओर प्रशिक्षित कश्मीरी युवकों को भारत की सीमा में भेजने का प्रयास कर रहा है। अभी हाल में ही उसे अमरीका से अरबों डालर के हथियार मिलने का वायदा भी पूरा हो रहा है। दूसरी ओर काहुटा स्थित परमाणु केन्द्र के लिए चीन से भारी मात्रा में उत्पाद सामग्री तथा कल-पुर्जे प्राप्त हुए हैं। चीन का जहाज पाकिस्तान पहुँच भी गया है। इन सभी हथियारों को बटोरने के बाद अब पाकिस्तान फिर भारत विरोधी प्रचार में लग गया है। उसकी असली समस्या है प्रशिक्षित गुमराह युवकों को कश्मीर में धुसेड़ने की, क्योंकि उसे यह अन्दाजा हो गया है कि भारत सरकार जम्मू-कश्मीर में चुनाव कराने को कृतसंकल्प है। पाकिस्तान को यह पता है, कि यदि जम्मू कश्मीर में चुनाव हो जाते हैं तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान का भारत-विरोधी प्रचार दम तोड़ जाएगा। लगातार तीस दिन सीमा पर गोलाबारी चली, एक व्यक्ति सीमा में घुसने की कोशिश करता हुआ मारा भी गया। आखिर संसदीय चुनाव सम्पन्न हो गए और पाक अपने इरादे पूरे नहीं कर पाया।

पाकिस्तान की रक्षा-नीति का मूल आधार भारतीय उपमहाद्वीप में सैनिक दबाव बनाये रखना है। पाकिस्तान भारत के प्रति विरोधी रवैया अपनाकर तथा मुस्लिम कट्टरतावाद को बढ़ावा देकर इस्लामिक विश्व का मसीहा बनने के लिये उतावला है। पाकिस्तान की रक्षा नीति भारत की सामरिक, आर्थिक राजनैतिक व भौगोलिक दृष्टि के साथ ही अमरीकी नीति को देखकर तैयार की जाती रही है। कोई भी राष्ट्र अपनी रक्षा-नीति राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर तैयार करता है। पाकिस्तान

भारत को अपना मोहरा बना कर एशिया महाद्वीप में बड़ी शक्तियों को विशेष रूप से अमेरिका को इसी कारण गले लगाता रहा है। यद्यपि उसकी आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्था विघटित हो रही है, किन्तु भारत विरोधी अभियान चलाकर वहाँ के नेता व शासक अवाम को सदैव गुमराह करते रहे हैं। पाकिस्तान की रक्षा-नीति हमेशा आक्रामक नीति के रूप में प्रमाणित हुई हैं। जुल्फिकार अली भुट्टो का यह कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि "भारतीय नीति का प्रत्येक कदम पाकिस्तान का गला घोटने के लिये उठाया गया है और पाकिस्तान को समाप्त करना ही भारत की नीति है।" यह कथन तनाव और कटुता का प्रतीक तो है ही, साथ ही साथ उसकी रक्षा-नीति का मूल आधार है भी। प्रारम्भ से ही पाकिस्तान ने अपनी रक्षा-नीति इस तरह से तय की थी कि भारत को मुकाबले में कमजोर किया जा सके और यही कारण है कि उसकी रक्षा की नीति का महत्वपूर्ण अंग परमाणु बम हासिल किया जाना रहा है। पाकिस्तान की आन्तरिक राजनीति की बनावट ही ऐसी है कि घूम फिर कर केन्द्र में भारत विरोध आ जाता है। इसके अतिरिक्त इस आर्थिक आधार के युग में पाकिस्तान की स्थिति दयनीय है। इसलिये अपनी जनता का ध्यान बंटाने के लिए भारत विरोधी भावनाओं को भड़काता रहता है। इसी के तहत ही परमाणु परीक्षण किये।

पाकिस्तान की रक्षा-नीति के कारण सम्बन्धों में आपसी सौहार्द की बात तो दूर, सब कुछ इतना उलझता जा रहा है कि आमने-सामने बैठ कर बातचीत की पहल भी नहीं हो पा रही है। वास्तविकता यह है, कि पाकिस्तान के निर्माण में जिस भारत-विरोध की भूमिका थी, उसी की निर्णायक भूमिका पाकिस्तान के संचालक में भी है। आज स्थिति यह हो गई है कि पाकिस्तान का कोई भी नेता भारत विरोध मुखर किये बिना राजनीतिक सत्ता के नजदीक नहीं आ सकता। यही कारण है कि राजनेताओं एवं शासकों द्वारा पाकिस्तान की रक्षा-नीति भारत को प्रमुख लक्ष्य मानकर ही सुनिश्चित की जाती है।

पाकिस्तान की रक्षा-नीति का मूल आधार भारत विरोधी राष्ट्रों से दोस्ती रखकर अपनी आर्थिक एवं सैनिक संपदा को सुदृढ़ बनाने का प्रयास करना है। पाकिस्तान की पूर्व प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो ने यह वक्तव्य दिया था कि भारत-पाक के बीच तीसरा युद्ध छिड़ सकता है। "यह महज एक धमकी है। पाकिस्तान को पिछले युद्धों का अच्छा खासा अनुभव है यह सारी दुनिया जानती है कि यदि तीसरा युद्ध हुआ तो पाकिस्तान को भारी नुकसान उठाना पड़ेगा। पाकिस्तान में भावना विरोधी कट्टरवादिता ही राजनीति का आधार बन गई है आज लगभग हर पाकिस्तानी का मानना है कि भारत पाकिस्तान के टुकड़े कर देना चाहता है, और दूसरी ओर लगभग प्रत्येक भारतीय की सोच है कि पाकिस्तान कश्मीर को हड़पने के लिये तत्पर है। अब भी भारत विरोधी आतंकवादी व अलगाववादी कार्यवाहियों में उसका प्रत्यक्ष या परोक्ष हाथ रहता है।

कश्मीर के सम्बन्ध में पाकिस्तानी रक्षा-नीति हमेशा ही चीन और

अमेरिका द्वारा सुनिश्चित की गयी रक्षा-नीति होती है। एक ओर चीन चाहता है कि पाकिस्तान ने अधिकृत कश्मीर का जो 2,050 वर्ग मील क्षेत्र उसे दे दिया है उसकी वापसी की बात न उठे दूसरी ओर अमेरिका का उद्देश्य है कि अधिकृत कश्मीर का गिलगित का भू-भाग उसे मिल जाये, ताकि जिस तरह गिलगित से साम्राज्यवादी ब्रिटेन कभी पूरे एशिया की निगरानी करता था उसी तरह अमेरिका भी इसे अपना निगरानी क्षेत्र बना ले। 1962-63 में भारत ने एक ऐसा प्रस्ताव और नक्शा प्रस्तुत किया था, जिसमें उसने अधिकृत कश्मीर के अलावा 1,500 वर्ग मील क्षेत्र पाकिस्तान को देकर समझौते की पेशकश की थी और यह कार्य ब्रिटेन तथा अमेरिका के परामर्श के आधार पर किया गया था, परन्तु पाकिस्तान ने इसे अस्वीकार कर दिया था। इस तरह कश्मीर समस्या भारत-पाक के बीच सबसे बड़ा मुद्दा बन गयी है, पाकिस्तान इसको लेकर परमाणु युद्ध तक की धमकी दे रहा है।⁹

पाकिस्तान के आन्तरिक नीति-निर्धारण में उसकी सेना अहम भूमिका निभाती रही है। पाकिस्तान अभी तक यह निश्चित नहीं कर पाया है कि वह दक्षिण एशिया का भाग है या मध्य पूर्व एशिया का। वास्तव में पाकिस्तान अपनी पहचान को अभी तक स्पष्ट ही नहीं कर पाया है, यही कारण है कि भारत-पाक सम्बन्धों में सुधार नहीं हो पाता है। पाकिस्तान को तमाम हरकतों के लिये शह अमेरिका से मिलती है। यह सही बात है कि शीत युद्ध समाप्त हो गया है, लेकिन अमेरिका के हित पाकिस्तान को लेकर बचे हुए हैं। उसके कई कारण हैं- सबसे पहला महत्वपूर्ण कारण यह है कि पाकिस्तान इस्लामिक आतंकवाद का नियंत्रण केन्द्र बन गया है। अमेरिका नहीं चाहता है, कि पाकिस्तान को अलग रखकर इस्लामिक आतंकवाद की आफत मोल ले। अमेरिका के हित पाकिस्तान को लेकर अभी भी मौजूद है। पाकिस्तान अभी भी अमेरिका के साथ सामरिक गठबन्धन में जुड़ा हुआ है। चीन का महाशक्ति के रूप में उभरना भी अमेरिका की बेचैनी के साथ-साथ पाकिस्तान से भी भविष्य में अपने सम्बन्ध सुमधुर ही चाहता है। इसी कारण प्रेसलर कानून में संशोधन करना चाहता था और पाकिस्तान के परमाणु बम और आतंकवादी गतिविधियों में लिप्त होने के खुलासे के बावजूद खुलकर विरोध नहीं कर पाता है।

पाकिस्तान ने आई. एस. आई. खुफिया एजेंसी को भी बहुत अधिक बढ़ावा दिया है, जिनके पास बहुत बड़ी मात्रा में हथियार एवं साज सामग्री है। शायद पाक रक्षा-व्यय में इस कारण बढ़ोत्तरी कर रहा है और यह अब उसकी मजबूरी बन गई है। लन्दन स्थित सेण्टर फार डिफेन्स के क्रिस स्मिथ की पुस्तक में लिखा है कि "पाकिस्तान में आई. एस. आई. ने अपनी निजी राष्ट्रीय और विदेश नीति बना रखी है। जिसके तहत कश्मीर और पंजाबी आतंकवादी गुटों को 80 के दशक के आरम्भ से ही हथियार और प्रशिक्षण दिया जा रहा है।"¹⁰ आई. एस. आई. के पास अब भी भारत व पाकिस्तान को अस्थिर

बनाने लायक हथियार है।"

पाकिस्तान ने अपनी रक्षा में अप्रत्याशित बढ़ोत्तरी करने के साथ ही आई. एस. आई. का संजाल जो भारत फंसाने के लिये फैलाया, वह स्वयं अब उल्टा उसके जाल में निरन्तर फंसता जा रहा है। स्थिति यह है कि सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत में पाकिस्तान का रक्षा खर्च उपएशियाई देशों में 15वें स्थान पर है। पाकिस्तान का बढ़ता रक्षा व्यय अब उसकी राजनीतिक मजबूरी भी है, क्योंकि वहां के शासन में सेनाओं की सक्रिय भूमिका रहती है। अमेरिका एवं कट्टरवादी मुस्लिम राष्ट्रों से घन केवल रक्षा मामलों को जुटाने के लिये मिलता है। पाकिस्तान पहले भी चीन से एम-11 प्रक्षेपास्त्र ले चुका है। परमाणु रियेक्टर लेने को तैयार है तथा अपनी तोपों व वायुयानों का चीन की सहायता से आधुनिकीकरण कर रहा है।

वर्तमान में पाक तमाम सुरक्षा कार्यक्रमों तथा हथियारों की खरीद - फरोहत में चीन का सहयोग ले रहा है। पाकिस्तान को चीन हथियारों के मामलों में तकनीकी तौर पर सबल रहा है, वह पाक को रक्षा के संदर्भ में अनेक अन्य तरह से शिक्षण-प्रशिक्षण भी दे रहा है। इसी कड़ी में नये प्रक्षेपास्त्र भी तैनात किये हैं। अब वह अपने परमाणु परीक्षण भी कर चुका है।¹¹

इस प्रकार पाकिस्तान की रक्षा-नीति राष्ट्रीय तत्व को ध्यान में रखकर कम, भारतीय स्थिति को विरोध में दिखाकर ज्यादा सुनिश्चित की गयी है। रक्षा-नीति सैन्य कूटनीति से अपनाई जा रही है। पाकिस्तान की रक्षा-नीति यथार्थ से अति दूर और भारत विरोधी मानसिकता से अधिक ग्रस्त है। उल्लेखनीय है कि शीत युद्ध की समाप्ति के बाद जहाँ भारत सहित विश्व के प्रतिरक्षा व्यय में गिरावट आई है, वहीं पाकिस्तान के रक्षा-व्यय में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। इससे स्पष्ट है कि भारत विरोधी मानसिकता से ग्रस्त होने के कारण रक्षा पर इतना भारी व्यय न केवल पाकिस्तान के आर्थिक विकास की संभावनाओं को धूमिल करेगा, बल्कि उसकी राष्ट्रीय एकता व अखंडता को भी भारी आघात लगेगा। दोनों देशों के तुलनात्मक सकल घरेलू उत्पाद में रक्षा-व्यय की तालिका से स्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता है।

इस प्रकार पाकिस्तान की रक्षा-नीति राष्ट्रीय हितों की बजाय हुक्मरानों के व्यक्तिगत स्वार्थों एवं अमेरिका के इशारों पर अधिक निर्भर है। पाकिस्तान की रक्षानीति कूटनीति पर अधिक आधारित है। इसकी कूटनीति का अन्दाज इस बात से लगाया जा सकता है कि एक ओर संयुक्त राज्य अमेरिका को अपनी भूमि पर सैनिक अड्डे प्रदान कर रहा है। और दूसरी ओर चीन को मित्र बनाने के लिए अधिकृत कश्मीर का अधिकांश भाग इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु चीन को दे दिया। इतना ही नहीं सिक्किम-गिलगित मार्ग के निर्माण के लिए भी उसने चीन को सहमति प्रदान कर दी, जिससे चीन करौंची बन्दरगाह से लाभ प्राप्त कर सके। पाकिस्तान की रक्षानीति का एकमात्र उद्देश्य

अपने राष्ट्र को अति आधुनिक हथियारों से सज्जित करके भारत पर दबाव की नीति बनाये रखना है। इसके लिए उसने अपने विकास कार्यक्रम को भी दौंव पर लगा रखा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Bindra, S.S.: India and her neighbours, Deep and Deep Publications, New Delhi, 1984, P.21.
2. Bindra, S.S.: India and her neighbours, Deep and Deep Publications, New Delhi, 1984, P.23
3. हर्गोविन्द पन्त, भारत की शक्ति साधना, ज्ञान विज्ञान संस्थान, नई दिल्ली, 1998
4. मातिन जुवेरी, पोखरन -2 एण्ड चर्गाई; वर्ल्ड फोकस वाल्यूम -19, नं. 6-7, जून-जुलाई-1998, पृ.13,
5. पी. डी. कौशिक, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना, 2004 पृ. 420-30 219
6. भास्यम कस्तूरी, इण्डियास -पाकिस्तान कान्फलीक्ट्स, वर्ल्ड फोकस, पृ. 224
7. कुलदीप नैयर, डिस्टेंट नेबरस, ए टेल ऑफ द सबकॉन्टिनेंट, नई दिल्ली, विकास, 1972, पृ. 178-89
8. पी. डी. कौशिक, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना, 2004 पृ. 220
9. वी. एन. खन्ना व लिपाक्षी अरोड़ा- भारत की विदेश नीति'' विकास पब्लिशिंग 1999 नई दिल्ली -पृ. 98 पी. डी. कौशिक, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना, 2004, पृ. 420-30
10. मातिन जुवेरी : पोखरन -2 एण्ड चर्गाई; वर्ल्ड फोकस वाल्यूम -19, नं. 6-7, जून-जुलाई-1998, पृ.13

महिला सशक्तिकरण: एक मिथक (विकासखण्ड चम्पावत के ग्राम तरकुली के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. मनोहर चन्द्र जोशी

नैनीताल (उत्तराखण्ड)



shodhshree@gmail.com

वर्तमान समय में महिला सशक्तिकरण एक प्रचलित अवधारणा है। समाचार पत्रों तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने इस शब्द का व्यापक प्रचार-प्रसार भी किया है। राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक मंचों में महिलाओं को समानता, स्वतन्त्रता तथा स्वावलम्बन दिये जाने जैसे विषयों पर संगोष्ठीयां, वाद-विवाद, बहस तथा कार्यशालाओं का आयोजन होता है जो कि सहअस्तित्व पर आधारित विश्व की कल्पना कराता है। साथ ही यह भी आभास कराता है कि इस मुद्दे पर पुरातन काल से चली आ रही पुरुष सत्तात्मक समाज की मानसिकता भी बदल रही है। किन्तु क्या वास्तव में यह तथाकथित महिला सशक्तिकरण की अवधारणा सार्वभौमिक रूप में समाज में भी विद्यमान है अथवा इसका प्रभाव वर्ग विशेष, जाति विशेष तथा स्थान विशेष से ही सम्बन्धित है। ग्रामीण भारत का अध्ययन अभी इस अवधारणा को एक मिथक के रूप में ही स्थापित करता है। प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट है इस तथाकथित अवधारणा से उत्तराखण्ड राज्य में स्थित तरकुली गांव आज भी कोसों दूर है। यहाँ आज भी महिलाओं की दिनचर्या घास काटने, लकड़ी जमा करने, रसोई, तथा बच्चों के लालन पालन तक ही सीमित है। प्रस्तुत अध्ययन में महिलाओं की सामाजिक स्थिति से जुड़े अनेकों बिन्दुओं पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है।

1-परिचय- किसी भी समाज में व्यक्ति की सामाजिक स्थिति के निर्धारण में लिंग-भेद एक महत्वपूर्ण कारक है। लिंग-भेद सामाजिक स्तरीकरण का प्राचीनतम एवं सरलतम रूप है। मानव सभ्यता के विकास के विभिन्न चरणों का अध्ययन भी स्पष्ट करता है कि लिंग-भेद सदा से ही सामाजिक स्तरीकरण का आधार रहा है। किसी भी सामाजिक अध्ययन में लिंग के आधार पर अध्ययन, उस समाज अथवा समूह विशेष में पुरुषों व महिलाओं की सामाजिक स्थिति तथा उन्हें समाज में प्राप्त पद एवं उनकी भूमिका का परिचायक होता है। प्राचीन काल से ही यह माना जाता रहा है कि महिलाओं का प्रमुख कार्य घर की व्यवस्था तथा बच्चों का लालन पालन करना है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में महिलाओं की स्थिति को लेकर लोगों के मत में परिवर्तन होता गया और समय के साथ-साथ महिला सशक्तिकरण की अवधारणा ने जन्म लिया। महिला सशक्तिकरण वर्तमान में प्रचलित एवं महत्वपूर्ण पद है। जिसे दो महत्वपूर्ण अर्थों में प्रयोग में लिया जाता है। सामान्य और विशिष्ट। सामान्य अर्थों में महिला सशक्तिकरण से आशय महिलाओं को भी वह, स्वतन्त्रता एवं अवसर प्रदान कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने से है, जिनसे अब तक उन्हें सिर्फ इसलिए वंचित रखा गया था क्योंकि वह महिला है। विशिष्ट अर्थ में, महिला सशक्तिकरण से आशय समाज की शक्ति संरचना में महिलाओं की स्थिति को उँचा उठाने से है। सार रूप में यह कहा जा सकता है कि महिला सशक्तिकरण का अर्थ महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक शक्ति प्रदान करने से है, जिससे कि वह भी समाज की मुख्य धारा में सम्मिलित हो सके।

सामान्यतः सशक्तिकरण का अर्थ राजनीतिक एवं आर्थिक पक्ष से जोड़ा जाता है किन्तु सशक्तिकरण एक बहुआयामी अवधारणा है। जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक, संवैधानिक आदि पक्षों का अध्ययन भी

महत्वपूर्ण है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य महिलाओं को सामाजिक व आर्थिक रूप से सुदृढ़ किया जाना ही समझा गया है जबकि इसका अर्थ बहुत व्यापक है। महिला सशक्तिकरण भौतिक या आध्यात्मिक, शारीरिक या मानसिक सभी स्तरों पर महिलाओं में आत्मविश्वास पैदा कर उन्हें सशक्त बनाने की प्रक्रिया है। यह महिलाओं की स्वतन्त्रता, समानता, स्वावलम्बन, और सहअस्तित्व की पैरवी करता है। वर्तमान समय में यह एक ज्वलंत विषय बन कर उभरा है जिसके अन्तर्गत महिलाओं से जुड़े सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक व कानूनी मुद्दों पर संवेदनशीलता और सरोकार व्यक्त किया जाता है। यह सत्य है कि वर्तमान में महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में सकारात्मक प्रभाव दृश्य है तथापि आज भी यह प्रभाव वर्ग विशेष, जाति विशेष तथा स्थान विशेष से सम्बन्धित है।

2- पद्धतिशास्त्र- प्रस्तुत अध्ययन उत्तराखण्ड राज्य के जनपद चम्पावत के चार विकासखण्डों में एक विकास खण्ड चम्पावत के

ग्राम पंचायत तरकुली के अध्ययन पर आधारित है। भौगोलिक दृष्टि से यह विकासखण्ड जनपद मुख्यालय से लगभग 58 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। जहाँ 50 किलोमीटर की दूरी सड़क मार्ग से शेष 8 किलोमीटर पैदल मार्ग द्वारा पहुंचा जा सकता है। भारत-नेपाल सीमा पर स्थित यह ग्राम पंचायत काली नदी (जिसे मैदानी क्षेत्र में शारदा नदी के नाम से भी जाना जाता है) के किनारे की पहाड़ी क्षेत्र में बसा है। नेपाल में राजनैतिक अस्थिरता से पूर्व यहाँ के निवासियों के नेपाल के सीमान्त क्षेत्रों के निवासियों से बहु-बेटी का रिश्ता कायम थे। सन 2001 की जनगणनानुसार तरकुली की कुल जनसंख्या 68 थी। क्षेत्र की जनसंख्या कम होने के कारण सूचना प्राप्ति हेतु उत्तरदाताओं का चयन जनगणना पद्धति के आधार पर किया गया है। क्षेत्र में साक्षरता दर कम होने के कारण साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया है। सूचनादाता के रूप में प्रत्येक परिवार से एक महिला का चयन किया गया है, जो परिवार में सबसे अधिक उम्र की हो। परिवार में चयनित महिला उत्तरदाताओं की आयु संरचना निम्न प्रकार है।

तालिका संख्या-1
उत्तरदाताओं की आयु संरचना-

क्र.स.	आयु-समूह	संख्या	प्रतिशत
1	25 वर्ष से कम	19	28
2	25- 35 वर्ष	37	54.4
3	35 वर्ष से अधिक	12	17.6
4	योग	68	100

इसके अतिरिक्त अर्द्ध सहागी अवलोकन विधि का भी प्रयोग किया गया है। अध्ययन से प्राप्त जानकारी को निम्न शीर्षकों के माध्यम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

3- महिलाओं की सामाजिक स्थिति-

किसी भी समाज में महिलाओं की वास्तविक स्थिति का अध्ययन करने के लिए आवश्यक है कि उस समाज में महिलाओं को प्राप्त अधिकारों समानता, न्याय, व स्वतन्त्रता, के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जाय। शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम

है। समाज के सर्वांगीण विकास हेतु महिलाओं का शिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है। शिक्षा को महिला सशक्तिकरण के साथ इस अर्थ में जोड़ा जाता है कि इसके आधार पर महिलायें ज्ञानार्जन कर अपनी कुशलता से विश्व के समक्ष चुनौतिया प्रस्तुत कर सकती हैं। शिक्षा न केवल ज्ञान अर्जन का एक सशक्त साधन है अपितु आत्मबल की वृद्धि में भी सहायक है। इसी उद्देश्य से सर्वप्रथम समुदाय में उत्तरदाताओं की शिक्षा के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया।

तालिका संख्या-2
उत्तरदाताओं की शैक्षिक स्थिति

क्र.स.	आयु-समूह	संख्या	प्रतिशत
1	प्राइमरी	7	10.3
2	आठवीं	12	17.6
3	हाईस्कूल	5	7.4
4	इण्टर	2	2.9
5	स्नातक	-	-
6	परास्नातक	-	-
7	अन्य	-	-
8	योग	26	38.2

तालिका संख्या 2.1

उत्तरदाताओं की शैक्षिक स्थिति का आयु-वर्ग वार विभाजन

क्र.स.	आयु-समूह	संख्या	25 वर्ष से कम		25- 35 वर्ष		35 वर्ष से अधिक प्रतिशत
			प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	
1	प्राइमरी	03	21.4	03	30	01	50
2	आठवीं	05	35.7	06	60	01	50
3	हाईस्कूल	04	28.6	01	10	-	-
4	इण्टर	02	14.3	-	-	-	-
5	स्नातक	-	-	-	-	-	-
6	परास्नातक	-	-	-	-	-	-
7	अन्य	-	-	-	-	-	-
8	योग	14	100	10	100	02	100

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट है कि समुदाय में महिला साक्षरता की दर काफी निम्न है। यहाँ यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि 25 वर्ष से कम आयु वर्ग के महिलाओं में साक्षरता दर संतोषप्रद है जो कि इंगित करता है कि समुदाय के सदस्य नयी पीढ़ी को शिक्षा प्रदान करने के पक्ष में है। किन्तु 25-35 वर्ष तथा 35 वर्ष से अधिक आयु वर्ग में साक्षरता की दर काफी निम्न है। शिक्षा की निम्न दर समुदाय में निम्न गतिशीलता को भी इंगित करता है। यह स्पष्ट

करता है कि समुदाय में परिवर्तन की दर अत्यन्त धीमी है। साक्षरता की निम्न दर को के कारणों को ज्ञात करने के उद्देश्य से ही उत्तरदाताओं की दिनचर्या तथा विवाह के समय उनकी आयु के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया। विदित है कि पर्वतीय क्षेत्रों में बच्चों कि विशेषकर लड़कियों की किशोरावस्था में ही विवाह करने का प्रचलन है। उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी को निम्न तालिका के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है।

तालिका संख्या-3

उत्तरदाताओं की विवाह के समय आयु के सन्दर्भ में

क्र.स.	आयु-समूह	संख्या	प्रतिशत
1	16-18 वर्ष	44	64.7
2	18-22 वर्ष	22	32.4
3	22-25 वर्ष	2	2.9
4	25 से अधिक	-	-
5	योग	68	100

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि समुदाय में लगभग एक तिहाई महिलाओं का विवाह 18 वर्ष की आयु से पूर्व ही हो चुका था। इसका प्रमुख कारण अशिक्षा है। जो कि महिलाओं की मानसिक व शारीरिक विकास में भी सबसे बड़ा बाधक है। दहेज प्रथा और लड़कियों की अपेक्षा लड़कों को अधिक महत्व दिया जाना भी इसका एक प्रमुख कारण है। आज भी ग्रामीण समाज में लड़कों को लड़कियों की तुलना में आगे बढ़ने के अधिक अवसर प्रदान किये जाते हैं। लड़कियों की कम उम्र में शादी करने का एक प्रमुख

कारण पर्वतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था भी है। पर्वतीय क्षेत्रों में जीविका उर्पाजन का प्रमुख स्रोत कृषि एवं पशुपालन है जो कि पूर्णतया श्रम आधारित है। और दोनों की कार्य मुख्य रूप से महिलाओं द्वारा ही किये जाते हैं यही कारण है कि समुदाय में लड़कों की शादी छोटी उम्र में ही कर दी जाती है ताकि नई बहू के रूप में एक और सदस्य जुड़कर कृषि और पशुपालन के कार्य में हाथ बँटा सके। चूँकि श्रम समुदाय की दिनचर्या का एक महत्वपूर्ण कारक है इसी कारण शोधार्थी द्वारा उत्तरदाताओं की दिनचर्या के सम्बन्ध में भी जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया।

तालिका संख्या-4
उत्तरदाताओं की दिनचर्या

क्र.स.	आयु-समूह	25 वर्ष से कम		25- 35 वर्ष		35 वर्ष से अधिक	
		घंटे	प्रतिशत	घंटे	प्रतिशत	घंटे	प्रतिशत
1	पढ़ाई		-	-	-	-	-
2	कृषि कार्य	6	37.5	5	31.3	8	50
3	बच्चों का पालन पोषण	2	12.5	3	18.8	1	6.2
4	पशु पालन	4	25	6	37.5	5	31.3
5	मनोरंजन	1	6.2	1	6.2	2	12.5
6	अन्य	3	18.8	1	6.2	-	-
7	योग	16	100	16	100	16	100

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि समुदाय में महिलाओं की दिनचर्या अत्यन्त व्यस्त है। महिलाओं का समस्त समय कृषि कार्यों, पशु-पालन तथा अन्य दैनिक कार्यों में ही निकल जाता है। जिस कारण वह स्वयं के लिए बिल्कुल भी समय नहीं निकाल पाते हैं। यह क्षेत्र में साक्षरता दर के निम्न होने का भी एक प्रमुख कारण है। लगभग सभी आयु वर्ग की महिलाओं का आधा दिन जंगल से पशुओं के लिए चारा तथा ईंधन हेतु लकड़ी लाने में ही बीत जाता है। शेष समय कृषि कार्य तथा अन्य कार्य जैसे खाना बनाना, बच्चों की देखभाल आदि में व्यतीत होता है। सारणी से यह भी स्पष्ट होता है कि महिलाओं को मनोरंजन हेतु ज्यादा समय नहीं मिलता है। समुदाय में

मनोरंजन का प्रमुख साधनों में टेलीविजन, रेडियो तथा आपस में बातचीत करना प्रमुख है। यहाँ यह भी स्पष्ट करना आवश्यक है कि समुदाय के सदस्यों की दिनचर्या लगभग प्रायः 5 बजे से प्रारम्भ होकर रात्रि 9 बजे के मध्य होती है। इसी कारण दिनचर्या के अध्ययन में प्रतिदिन 16 घण्टे के समय को मानक माना गया है। जिस आधार पर उत्तरदाताओं से जानकारी प्राप्त कर उसे औसत के रूप में आयु-वर्ग के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

4- प्राप्त अधिकार एवं संवैधानिक अधिकारों की जानकारी - इसी क्रम में समुदाय में महिलाओं को मिले अधिकारों के सम्बन्ध में भी जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया।

तालिका संख्या-5
महिलाओं को मिले अधिकारों के सम्बन्ध में

क्र.स.	उत्तर	सामग्री क्रय हेतु बाजार जाने के सम्बन्ध में		महत्वपूर्ण घरेलू निर्णयों में भागीदारी के सम्बन्ध में	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1	हाँ	12	17.6	23	33.8
2	नहीं	56	82.4	45	66.2
3	योग	68	100	68	100

तालिका से प्राप्त जानकारी से स्पष्ट होता है कि समुदाय में महिलाओं को घर से बाहर हो अथवा घर के अन्दर, ज्यादा अधिकार प्राप्त नहीं है। मात्र 17 प्रतिशत महिलायें सामग्री क्रय हेतु बाजार जाती हैं। इसके अतिरिक्त मात्र 33 प्रतिशत महिलाओं ने ही स्वीकारा है कि घर में लिये जाने वाले महत्वपूर्ण निर्णयों में उनकी भी भूमिका होती है। यद्यपि यह तथ्य अवश्य चौंकाने वाला है कि महिलाओं को इस बात से बिल्कुल भी आपत्ति नहीं है। उनका मानना है कि चूंकि मुख्य बाजार क्षेत्र से 58 किलोमीटर दूर है। उनके बाजार जाने पर पशुओं की देखभाल तथा अन्य घरेलू कार्य रुक जायेंगे। इस कारण उनके लिए यह सम्भव भी नहीं है कि वह बाजार से खरीददारी कर सकें। घर

में लिये जाने वाले महत्वपूर्ण निर्णयों के सम्बन्ध में उनका मानना है कि चूंकि उनका ज्यादातर समय घरेलू क्रियाकलापों में व्यतीत होता है इस कारण उन्हें बाहरी दुनिया की ज्यादा जानकारी नहीं हो पाती। घर से बाहर के कार्य ज्यादातर पुरुषों द्वारा ही किये जाते हैं इसलिये यही बेहतर है कि घर के महत्वपूर्ण निर्णय पुरुषों द्वारा ही लिए जायें क्योंकि इस सम्बन्ध में उनकी जानकारी महिलाओं से बेहतर है। इसी क्रम में उत्तरदाताओं से सरकार द्वारा महिलाओं के विकास एवं उत्थान हेतु संचालित योजनाओं एवं कार्यक्रमों के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया गया।

तालिका संख्या-6

सरकार द्वारा महिला-उत्थान हेतु संचालित योजनाओं की जानकारी के सम्बन्ध में।

क्र.स.	उत्तर	संख्या	प्रतिशत
1	हैं	0	0
2	नहीं	68	100
3	योग	68	100

उक्त तालिका से ज्ञात है कि समुदाय में महिलाओं को सरकार द्वारा महिलाओं के विकास एवं कल्याण हेतु चलाये जा रहे कार्यक्रमों अथवा योजनाओं की जानकारी नहीं है। इसका प्रमुख कारण उनकी व्यस्त दिनचर्या तथा शिक्षा का अभाव है। यद्यपि उन्होंने यह स्वीकारा है कि गर्भावस्था के दौरान आशा कार्यकर्ता तथा आंगनबाड़ी सहायिका द्वारा उनकी सहायता की गयी।

5- राजनीतिक ज्ञान - इसी क्रम में राजनीतिक क्षेत्र में महिलाओं की जानकारी को ज्ञात करने का प्रयास किया गया। इस हेतु उनसे क्षेत्र/राज्य तथा देश की प्रमुख राजनीतिक हस्तियों के सम्बन्ध में जानकारी ली गयी। उत्तरदाताओं से प्राप्त जानकारी को निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका संख्या-7

क्षेत्र/राज्य और देश के महत्वपूर्ण पदों पर आसीन राजनीतिक हस्तियों की जानकारी के सम्बन्ध में

क्र.स	पद	नाम	प्राप्त सही उत्तर	प्रतिशत
1	राष्ट्रपति	श्री प्रणव मुखर्जी	2	2.9
2	प्रधानमन्त्री	श्री नरेन्द्र दामोदर दास मोदी	15	22
3	मुख्यमन्त्री	श्री हरीश रावत	13	19
4	विधायक	श्री हिमेश खर्कवाल	19	27.9
5	जिला पंचायत सदस्य	श्री बसन्त पुनेठा	12	17.6
6	ग्राम प्रधान	श्री जगत सिंह	60	88.2

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट होता है कि ग्राम पंचायत तर्कुली में महिला उत्तरदाताओं का राजनीतिक के क्षेत्र में ज्ञान काफी सीमित है। देश के प्रधानमन्त्री हो या राज्य के मुख्यमन्त्री, क्षेत्र के विधायक हो अथवा जिला पंचायत सदस्य, तीन चौथाई से अधिक उपभोक्ता उनका नाम बताने में असमर्थ रहे। ग्राम प्रधान चूंकि ग्राम निवासी ही हैं, इसी कारण 88 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उनके बारे में सही जानकारी दी।

6- निष्कर्ष - उक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य वर्तमान में भी काफी दूर है। नगरीय क्षेत्रों में, जहाँ शिक्षा का स्तर उच्च है तथा जहाँ संवैधानिक प्रावधानों का न केवल व्यापक प्रचार-प्रसार होता है अपितु पालन भी किया जाता है, महिला सशक्तिकरण की अवधारणा कुछ हद तक अपने लक्ष्य का प्राप्त करती प्रतीत होती है। किन्तु ग्रामीण भारत में अभी इसे काफी दूरी तय करनी है। जिसकी पुष्टि वर्तमान अध्ययन भी करता है जहाँ मात्र 38 प्रतिशत महिलाएँ ही शिक्षित हैं। यह स्थिति तब और दयनीय प्रतीत होती है जब इन शिक्षित महिलाओं में लगभग 70 प्रतिशत महिलाएँ सिर्फ आठवीं पास या इससे भी कम पढ़े लिखे हों। शिक्षा का यही निम्न स्तर इन्हें संविधान द्वारा प्राप्त प्रावधानों की जानकारी से वंचित रखता है। जिस कारण अपने साथ घटने वाली घटनाओं को भाग्य मान लेना ही इनकी नियति है। लगभग दो-तिहाई महिलाओं की शादी 18 वर्ष से कम आयु में होना तथ्य की पुष्टि करता है। शिक्षा का यही निम्न स्तर इन्हें विरोध करने से रोकता है। समुदाय में महिलाओं का जीवन भी काफी संघर्षपूर्ण है। महिलाओं

का आधा दिन जंगल से घास तथा लकड़ी बीनने में बीत जाता है। शेष समय कृषि कार्य, चूल्हा चौका तथा बच्चों के लालन पोषण में व्यतीत हो जाता है। व्यस्ततम दिनचर्या के इन्हीं क्रिया कलाओं को अधिकांश महिलाओं द्वारा भाग्य समझ कर स्वीकार कर लिया गया है। यही कारण है कि 83 प्रतिशत महिलाओं को बाजार से खरीददारी करने तक के अवसर प्राप्त नहीं होते। इसका मुख्य कारण यह मान लिया गया है कि महिलाओं का चूँकि सम्पूर्ण दिन जंगल, खेत और रसोई में ही बीत जाता है जिस कारण उन्हें अन्य क्षेत्रों की जानकारी नहीं है। स्वयं उक्त महिलाओं द्वारा भी यह स्वीकार कर लिया गया है। फलस्वरूप दो तिहाई महिलाओं से महत्वपूर्ण घरेलू निर्णयों में उनकी राय लेना जरूरी नहीं समझा जाता। अज्ञानता का यही स्तर इन्हें सरकार द्वारा महिला उत्थान से जुड़ी योजनाओं तथा संवैधानिक प्रावधानों की जानकारी से भी वंचित रखता है। समुदाय में किसी भी महिला को सरकार द्वारा संचालित ऐसी किसी भी योजना अथवा प्रावधान की जानकारी नहीं है जो महिला कल्याण से जुड़ी हो। समुदाय में महिलाओं का राजनीतिक ज्ञान भी काफी संकुचित है। लगभग तीन चौथाई से अधिक महिलाओं को ग्राम प्रधान के अतिरिक्त अन्य किसी भी महत्वपूर्ण राजनीतिक हस्ती की जानकारी नहीं है। सार रूप में कहा जा सकता है कि पर्वतीय ग्रामीण भारत में महिलाओं हेतु शिक्षा उतना महत्वपूर्ण कारक नहीं है जितना कि श्रम। बिना महिलाओं को शिक्षित किये महिला सशक्तिकरण की बात करना एक मिथक ही है और कुछ नहीं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. कुप्पूस्वामी, बी. (1984) सोशियल चेन्ज इन इण्डिया, विकास पब्लिशिंग हाउस, प्रा. लि. मि. साहिबाबाद, गाजियाबाद
2. सहाय, सुषमा (1998) वूमन एण्ड एम्पावरमेन्ट: एप्रोचेस एण्ड स्ट्रेटजिस, डिस्कवरी पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
3. साहा, दिपाली (2006) सोशियोलॉजी ऑफ सोशियल स्ट्रुक्चरिजेशन, ग्लोबल विजन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली
4. कौशिक, आशा (2004) महिला सशक्तिकरण, विमर्श व यथार्थ, पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर
5. जिला सांख्यिकीय कार्यालय नैनीताल, 2010

पंचायती राज एवं जनसहभागिता : एक विश्लेषण राजस्थान के विशेष संदर्भ में

डॉ. रेनू बाला मीना
कोटा



shodhshree@gmail.com

भारतीय लोकतांत्रिक संरचना में शासन के तीसरे स्थानीय स्तर पर विद्यमान पंचायती राज प्रणाली प्रत्यक्ष लोकतंत्र का प्रतीक है जिसमें अपेक्षा की गई थी कि स्थानीय जनसहभागिता से गांवों का विकास किया जाएगा। ग्राम पंचायतों और ग्रामसभा के मध्य वही संबंध होगा जो मंत्रीमण्डल और विधानसभा के मध्य होता है। इस संशोधन ने पंचायतीराज को सशक्त और सार्यक स्थिति प्रदान की जिससे विकास योजनाओं मुख्यतः गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों में महिलाओं की सहभागिता हो सके तथा ग्रामीण विकास के अंतिम लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने देश के विकास में ग्रामीणजनों की सहभागिता की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए कहा था- "सच्ची लोकशाही केंद्र में बैठे 20 लोग नहीं चला सकते। वो कलकत्ता या बंबई जैसे बड़े शहरों में हैं, उसे भारत के सात लाख गांवों में बांटना चाहूंगा"। लोकतंत्र का सच्चा अर्थ है लोगों का लोगों के लिए किया जाने वाला शासन। सही मायने में ग्रामसभा में बैठा व्यक्ति जब अपने एवं क्षेत्र के विकास की बात को सर्वसम्मति से लागू करता है तभी लोकतंत्र की अवधारणा सुनिश्चित होती है। निसंदेह रूप से ग्रामसभा ही वह सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा ग्रामीणजनों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित करके देश की वास्तविक तस्वीर बदली जानी संभव है। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने भी इस तथ्य को बखूबी समझा। इसी का नतीजा था कि संविधान के नीति निर्देशक सिद्धांतों में अनुच्छेद 40 के अंतर्गत राज्यों को 'ग्राम पंचायत' के गठन का निर्देश दिया गया।

भारतीय ग्रामीण समाज सदा से वैश्विक आकर्षण का केंद्र रहा है। इसका सरल, शांत, सामाजिक-आर्थिक जीवन प्राचीन समय से सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक वैज्ञानिकों को आकर्षित करता रहा है। आंद्रे बेते लिखते हैं "गांव केवल वह स्थान नहीं है, जहां लोग रहते हैं, यह वह अभिकल्पना है जिसमें भारतीय सभ्यता के आधारभूत मूल्य दिखाई देते हैं"। महात्मा गांधी का मानना था कि सत्य और अहिंसा का बोध केवल गांव के सरल जीवन में ही हो सकता है। उनका कहना था कि भारत की आत्मा गांवों में ही बसती है। भारत ऐसा पहला देश है जहां पर स्थानीय स्वशासन के प्राचीनकालीन प्रमाण मिलते हैं। यहां प्राचीन समय से ही स्थानीय स्वशासन की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी जहां का प्रमुख ग्रामीण होता था। ग्रामीण जीवन और ग्रामसभा का वर्णन वैदिककाल के विभिन्न ग्रंथों में मिलता है।

भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के दौरान राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने गांवों के महत्व को व्यापक रूप से रेखांकित किया और स्थानीय स्वशासन तथा सत्ता के विकेंद्रीकरण की वकालत की। भारतीय संविधान के निर्माताओं ने भी इस तथ्य को बखूबी समझा। इसी का नतीजा था कि संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में अनुच्छेद 40 के अंतर्गत राज्यों को ग्राम पंचायत के गठन का निर्देश दिया गया है। स्वतंत्र भारत में पहली बार 2 अक्टूबर 1959 को राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज व्यवस्था की नींव डालने के साथ ही

इस दिशा में प्रगति की एक महत्वपूर्ण राह खुली। इस व्यवस्था को और भी मजबूत किया 73वें संविधान संशोधन ने जिसमें ग्राम पंचायतों के लिए विशेष प्रावधान किए गए। ग्राम पंचायतों के वर्तमान स्वरूप का श्रेय जाता है 1957 में गणित बलवंत राय मेहता समिति को जिसने विस्तरीय पंचायती संरचना बनाई। देश में पंचायतों को सुदृढ़ व विकसित करने के उपाय सुझाने के लिए समय-समय पर विभिन्न समितियों का गठन किया जाता रहा है और यथासम्भव उनकी सिफारिशों को अमल में लाने का प्रयास भी किया गया है।

भारतीय राज्य संकल्पना में जनसहभागिता प्रारम्भ से ही राज्य व्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार रही है। मनुष्य के सामाजिक विकास की प्रारंभिक अवस्था में जब कबीलाई शासन व्यवस्था उद्भूत हुई तो उसमें लिए जाने वाले सभी निर्णयों में कबीले के सदस्यों की सहमति एवं सहभागिता महत्वपूर्ण थी एवं प्रत्यक्ष रूप से सम्भव थी। जब मानव जीवन की गतिविधियों के विस्तार एवं कार्य विभाजन से उद्भूत विशेषीकरण से सामाजिक जीवन भौगोलिक रूप से विस्तृत एवं जटिल हुआ तथा व्यापार वितरण की गतिविधियां बढ़ी तब संसाधनों के प्रचुर उत्पादन के साथ ही बड़ी राज व्यवस्थाएं विकसित हुई जिसमें राजतन्त्र बड़े क्षेत्र में सामान्य प्रवृत्ति के मुख्यतः नियमन एवं निर्माण विकास कार्य भी करता था। परन्तु ऐसे बड़े पैमाने के राज्यतंत्र में प्रत्यक्ष जनसहभागिता ना तो सम्भव थी और ना ही वांछनीय। तब राज्यतंत्र को जन-इच्छा एवं जन-आवश्यकता के प्रति उत्तरदायी बनाने हेतु अनेक सामाजिक संस्थाएं यथा श्रेणी-व्यापार संगठन एवं ऋषि परम्परा के शिक्षण समूह आदि सामने आए जो परोक्ष जन सहभागिता की भूमिका अदा करते थे। ऐसे में ही कबीलाई व्यवस्था का विकसित रूप ग्राम पंचायत के रूप में उभरा। दैनन्दिन कार्यों एवं आवश्यकताओं की दृष्टि से आत्मनिर्भर ग्राम निकटवर्ती नगरों से प्राथमिक उपजों के विपणन एवं शहरी उत्पादों की प्राप्ति हेतु सम्पर्क भी रखते थे। ग्राम पंचायत एक ऐसी संस्था के रूप में उभरी जो ग्राम के सभी वर्गों के गणमान्य व्यक्तियों से निर्मित होती थी एवं स्थानीय मुद्दों पर ग्रामीणों से विचार-विनिमय द्वारा निर्णय करती थी। इस प्रकार प्रत्यक्ष जन सहभागिता कार्य सम्पन्न करने के अलावा ग्राम पंचायत 'लिकिंग पिन मॉडल' के रूप में भी कार्य करती थी और ग्राम पंचायत का मुखिया राजदरबार का प्रतिनिधि भी होने के नाते समय-समय पर ग्रामीणों की आवश्यकताओं, समस्याओं एवं गतिविधियों से वृहद् राज्यतन्त्र को अवगत करा, आवश्यकतानुसार सहयोग सुनिश्चित कर परोक्ष जनसहभागिता की भूमिका अदा करता था।

ग्रामपंचायत नामक संस्था का अस्तित्व भारत के लिए नया नहीं था। ऋग्वेद ग्रंथ में ग्रामणी शब्द आता है जो पंच का पर्याय है। रामायण, महाभारत काल में ग्राम शासन की सबसे छोटी इकाई थी। गांव के पंच लोगों द्वारा स्थानीय जन से कर वसूल कर राजा का सहयोग करना वर्णित है। मनुस्मृति में भी मनु ग्राम के प्रशासन में स्वशासन का

उल्लेख करता है तो कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी राजा को कम से कम 100 परिवार तथा अधिक से अधिक 500 परिवार के एक गांव की रचना का उल्लेख किया गया है। इसी तरह मौर्यकाल, गुप्तकाल, सल्तनतकाल, मध्यकाल तथा ब्रिटिशकाल तक गांव के शासन में केन्द्र का हस्तक्षेप कम से कम था। इन संस्थाओं के पास प्रशासनिक एवं न्यायिक दोनों शक्तियां थी क्योंकि आम स्थानीय जन की आवश्यकता व समस्या का समाधान उसी क्षेत्र में गांव की पंचायत से हो जाता था। इस उत्साह से पर्याप्त जन सहभागिता गांवों की पंचायतों में देखी जा सकती थी।

1947 में स्वतंत्रता से पूर्व सैंकड़ों वर्षों के विदेशी शासन में यह तानाबाना बिखर गया। यद्यपि ग्रामीण स्वशासन की व्यवस्था अक्षुण्ण रही। शासन की प्रवृत्ति विजातीय एवं सीमित शासक वर्ग की हितपूर्ति के उद्देश्य से संचालित होने से शासन का स्वरूप नियामकीय एवं एकपक्षीय गैरजवाबदेह प्रकृति का रहा जिसमें जनसहभागिता ना तो सम्भव थी और ना ही वांछनीय।

स्वतंत्रता के उपरांत भी भारतीय गणराज्य में राज व्यवस्था का स्वरूप तय करते समय पंच परमेश्वर की परम्परा को कायम रखते हुए भारतीय संविधान में राज्य सरकारों को ग्राम पंचायतों को सशक्त बनाने के निर्देश दिए गए और प्रथम पंचवर्षीय योजना में भी सामुदायिक विकास कार्यक्रम बड़े पैमाने पर जनकल्याण की भावना से प्रारंभ किए गए। परन्तु जनसहभागिता के अभाव एवं सरकारी कार्यों से जनता के अलगाव के कारण अपेक्षित परिणाम नहीं मिलने पर समस्या के निदान हेतु गणित बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों पर सरकारी एवं विकास कार्यों में जनसहभागिता को संस्थागत स्वरूप देने तथा जनसामान्य के सरकार से अलगाव को समाप्त कर सच्चे लोकतंत्र की संकल्पना के अनुरूप सरकार को जनता के प्रति सीधेतर पर जवाबदेह बनाने हेतु विस्तरीय पंचायतीराज व्यवस्था के रूप में पंडित जवाहरलाल नेहरू ने गांधीजी के 90वें जन्म दिवस पर 2 अक्टूबर, 1959 को राजस्थान के नागौर में पंचायती राज व्यवस्था का विधिवत् उद्घाटन किया किन्तु इसे संवैधानिक स्वरूप 1993 में 73वें संविधान संशोधन में दिया गया जिसके तहत समूचे भारत में समान रूप से पंचायती राज व्यवस्था लागू हो गई। ग्रामीण विकास में सक्रिय जनभागीदारी व स्थानीय समस्याओं के समुदाय द्वारा स्थानीय स्तर पर ही समाधान के उद्देश्य से पंचायतों को स्थानीय स्वायत्तशासी संस्था के रूप में स्थापित करने हेतु संविधान में भाग (IX) के अनुच्छेद-243(डी) में 'पंचायत' को ग्रामीण अंचल की स्वशासन की संस्था के रूप में माना गया। इसी संशोधन की धारा 243 (जी) में पंचायतों की शक्ति, अधिकार एवं दायित्वों को रेखांकित किया जिसके अनुसरण में राज्य की विधायिका द्वारा कानूनन पंचायतों को ऐसी शक्तियां व अधिकार सौंपे जा सकेंगे, जो कि उन्हें स्वशासी संस्थाओं के रूप में कार्य करने में सक्षम बनाएं। इस कानून में पंचायतों को मुख्यतः निम्न भूमिका से जोड़ा गया -

- आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्यायालय की आयोजना तैयार करना (प्लान बनाना)
- आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय संबंधी ऐसी योजनाओं का क्रियान्वयन करना, जोकि उन्हें सौंपी गई हो व जिनमें ग्राहकों अनुसूची में शामिल 29 विषय भी सम्मिलित किए जा सकेंगे।

सामूहिक निर्णय पर आधारित इस पंचायती राज व्यवस्था में 'पंचायती राज' है, 'सरपंच राज' नहीं। यद्यपि राजस्थान में 73वें संविधान संशोधन से पूर्व पंचायत अधिनियम 1953 में कहा गया था कि प्रत्येक पंचायत द्वारा निर्धारित तरीके, निर्धारित समय और निर्धारित अन्तर के साथ पंचायत क्षेत्र के समस्त वयस्क नागरिकों की एक सभा बुलाई जाएगी किन्तु उक्त अधिनियम में ग्रामसभा की प्रकृति एवं कार्यों की अस्पष्टता थी।

तत्पश्चात् राजस्थान में नवीन पंचायती राज अधिनियम 1994 में स्वशासन के शीर्ष पर ग्रामसभा का स्पष्ट विवरण दिया गया जिसके अनुसार प्रत्येक पंचायत क्षेत्र के लिए एक ग्रामसभा होगी जिसमें पंचायत क्षेत्र के सभी गांवों के रजिस्ट्रीकृत व्यक्ति शामिल होंगे। प्रत्येक वर्ष में चार अनिवार्य बैठक का स्थान गणपूर्ति, सतर्कता, समिति की कार्यप्रणाली, कार्यों का वितरण तथा ग्राम सेवक की भूमिका स्पष्ट की गई। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र में जनभागीदारी के सहयोग से समग्र विकास सुनिश्चित करना था।

वस्तुतः यह महसूस किया गया कि पंचायती राज की निम्नतम संस्था ग्राम पंचायत स्तर पर कार्यरत ग्रामसभा एक बड़ी संस्था है जो संबंधित ग्राम पंचायत के समस्त मतदाताओं की वह सभा है जो गांव की विकास योजनाओं के निर्धारण, सम्पन्न हुए कार्यों का अनुमोदन तथा ग्राम पंचायत के बजट सहित सामाजिक अंकेक्षण का दायित्व निर्वाह करती है किन्तु इस संस्था को संवैधानिक मान्यता देने के उपरान्त भी ग्रामीण जनता की पंचायती राज में बांछित भागीदारी नहीं हुई।

इसलिए पंचायती राज सशक्तिकरण हेतु राजस्थान पंचायती राज (संशोधन) विधेयक 2000 में सर्वप्रथम वार्डसभा का गठन किया जिसमें पंचायत क्षेत्र को वार्डों में विभक्त कर उस क्षेत्र के समस्त वयस्क लोगों को शामिल कर लिया। इसकी संस्था की सदस्य संख्या सौ सदस्यों की होगी जो ग्राम पंचायत के पंच का निर्वाचन करते हैं। प्रत्येक वर्ष में वार्डसभा की अनिवार्य दो बैठकें होंगी तथा ग्रामीण विकास से संबंधित समस्त प्रस्ताव प्रथमता वार्ड सभाओं में लिए जाएंगे तत्पश्चात् उन्हें ग्रामसभा में अनुमोदनार्थ रखा जाएगा। इस व्यवस्था से ग्रामीण विकास में वार्ड पंच की निर्णायक भूमिका हो गई तथा ऐसे वयस्क व्यक्ति जिनका नाम मतदाता सूची में नहीं है, वे भी वार्डसभा में अपनी बात रखकर लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना कर सकते हैं। यह प्रयास भी गांवों के संतुलित विकास में आम जनता की

भागीदारी बढ़ाने के लिए किया गया था क्योंकि लोकतंत्र की मूल प्रवृत्ति सत्ता के विकेन्द्रीकरण तथा जनसहभागिता के इर्द-गिर्द ही सिमटी है।

एक मई, 2000 को राजस्थान में पारित नागरिक को सूचना के अधिकार ने ग्रामसभा को अधिक सतर्कता के अवसर दिए। जवाबदेहिता निर्धारण के कार्य में जनसुनवाई की संकल्पना का समावेश सामाजिक अंकेक्षण की महत्वपूर्ण व्यवस्था के रूप में प्रकट हुआ जो ग्रामसभा में जन-सहभागिता को गुणात्मक रूप से उन्नत एवं निर्णायक बनाकर इस व्यवस्था का महत्व स्थापित करती है। प्रत्यक्ष जनसहभागिता की सबसे महत्वपूर्ण संस्थागत व्यवस्था पंचायत में जनसहभागिता कार्यों के प्रमुख दो प्रकार हैं 1. प्रस्तावक एवं अनुमोदनात्मक तथा 2. फीडबैक (प्रतिपुष्टि) एवं जवाबदेहिता निर्धारण।

ग्रामपंचायत के प्रथम प्रकार के कार्यों में विभिन्न विकास योजनाओं के स्थान व स्वरूप के निर्धारण के साथ-साथ लाभार्थी चयन के प्रस्ताव लेना एवं उनका अनुमोदन करना महत्वपूर्ण कार्य है। विभिन्न विकास एवं रोजगार योजनाओं के तहत प्रत्येक गतिविधि की कार्ययोजना का विवरण एवं काम की जरूरतों के बारे में बताने हेतु संभावित लाभार्थियों के साथ ग्रामसभा के सभी सदस्यों की भागीदारी युक्त एक खुली 'परियोजना बैठक' बुलाने का प्रावधान, ग्रामसभा की ऐसी बैठक में ही सदस्यों द्वारा उस कार्य हेतु 'चौकसी एवं निगरानी समिति' के सदस्यों का भी चुनाव किया जाता है जिसमें कमजोर वर्गों का भी उचित प्रतिनिधित्व हो। यह समिति क्रियान्वयन के दौरान कार्यों की प्रगति एवं गुणवत्ता पर नजर रखती है।

योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन लाभार्थी ग्रामीणजन को सक्षम, सशक्त एवं क्रियाशील बना कर ही सम्भव है। वर्तमान युग में ज्ञान ही शक्ति है। विभिन्न योजनाओं एवं उनके क्रियान्वयन से जुड़ी जानकारी एवं सूचनाएं पाकर ही आम जनता सवाल पूछने में और जवाबदेही तय करने में सक्षम हो सकती है।

सूचना का अधिकार अधिनियम 2005 के प्रावधानों की मदद से ग्राम सूचना एवं जानकारी से सम्पन्न स्थानीय ग्रामीण जनता द्वारा जन सुनवाई जैसे तरीकों से सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन का भीतिक सत्यापन एवं जांच-पड़ताल की संकल्पना ही अपने संस्थागत स्वरूप में 'सामाजिक अंकेक्षण' (सोशियल ऑडिट) के नाम से उभर कर सामने आई है। सामाजिक अंकेक्षण की अवधारणा 'ग्रामसभा' के माध्यम से ही मूर्त रूप लेती है। ग्राम पंचायत स्तर पर ग्रामसभा द्वारा विभिन्न विकास योजनाओं की समीक्षा एवं संपरीक्षा करने के प्रावधान किए गए हैं। ग्रामसभा ही ग्राम पंचायत एवं स्थानीय सरकारी कर्मियों से स्थानीय स्तर पर क्रियान्वित योजनाओं एवं किए गए व्यय के बारे में खुले रूप में हिसाब लेकर उसकी तुलना में वास्तविक रूप से हुए व्यय का परीक्षण एवं निष्पादित कार्यों का

भौतिक सत्यापन करती है।

मनरेगा एवं विभिन्न अन्य विकास एवं स्वरोजगार योजनाओं के कार्य एवं समयबद्ध लक्ष्य पूरे होने पर भी ग्रामसभा के सदस्यों एवं लाभार्थियों की एक खुली परियोजना बैठक बुलाने का प्रावधान है जिसमें परिपूर्णता आंकड़ों को प्रस्तुत कर उससे सम्बन्धित उभरे प्रश्नों के निदान के बाद ही परिपूर्णता प्रमाणपत्र जारी किया जाता है जिसके साथ ही 'चीकसी और निगरानी समिति' की अन्तिम रिपोर्ट भी नत्वी कर आगामी ग्रामसभा की बैठक में प्रस्तुत की जाती है।

अब प्रत्येक छः माही अन्तराल पर समावेशी जन सुनवाई के लिए ग्रामसभा की विशेष बैठक, जिसे 'सामाजिक अंकेक्षण फोरम' का नाम दिया गया है, का आयोजन कार्यक्रम अधिकारी सुनिश्चित करता है जिसका एक अनिवार्य एजेण्डा भी कानूनन तय किया गया है। इस बैठक में क्रियान्वयन निकाय से जुड़े अधिकारी प्रतिनिधि की उपस्थिति आवश्यक है परन्तु फोरम का अध्यक्ष, सचिव एवं कार्यवाही संचालक स्वतंत्र व्यक्ति होता है जो किसी भी क्रियान्वयन निकाय से जुड़ा नहीं हो। ग्रामसभा के इस फोरम में सभी सूचनाएं जोर-जोर से पढ़कर सुनाने, व्यक्तियों द्वारा क्रियान्वयन अधिकारियों से सवाल पूछने, जानकारियां हासिल करने, खर्चों की जांच करने के प्रावधान हैं। इस तरह ग्रामवासियों को अपने अधिकारों की पड़ताल करने, जिन कार्यों का चुनाव किया गया था उनके बारे में चर्चा करने तथा कार्य की गुणवत्ता व कार्यक्रम से जुड़े कर्मचारियों के व्यवहार का आलोचनात्मक ढंग से मूल्यांकन करने का मौका दिया जाता है। ग्रामसभा के सामाजिक अंकेक्षण फोरम की रिपोर्ट कार्यक्रम अधिकारी द्वारा जिला कलेक्टर को भेजी जाती है जिससे आवश्यक विभागीय, अनुशासनात्मक एवं कानूनी कार्यवाही सुनिश्चित की जा सके।

इस प्रकार ग्राम विकास एवं रोजगार से जुड़े विभिन्न कार्यक्रमों में ग्रामसभा के माध्यम से जनसहभागिता के विभिन्न प्रकारों यथा ग्रामसभा बैठकें, परियोजना बैठकें, जन सुनवाई एवं सामाजिक अंकेक्षण के माध्यम से सार्वजनिक निगरानी की एक ऐसी सतत् चलायमान प्रक्रिया की संकल्पना फलीभूत हो सकती है जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि लाभान्वितों की प्राथमिकताओं और अपेक्षाओं का पर्याप्त रूप से समावेश करते हुए और जनहित को दृष्टिगत रखते हुए प्रत्येक गतिविधि की रूपरेखा, निर्माण एवं क्रियान्वयन की प्रक्रिया स्थानीय परिस्थितियों के सबसे ज्यादा अनुकूल ढंग से संचालित हो।

निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि ग्रामसभाओं को अधिक सशक्त बनाने के लिए केंद्र एवं राज्य सरकारों को दृढ़ प्रयास करने होंगे चूंकि ग्रामसभा की भागीदारी के बिना किसी भी योजना का सफल क्रियान्वयन नहीं हो सकता है। अतः ग्रामसभाओं को अत्याधुनिक सुविधाओं तथा अधिकारों से युक्त करना समय की

मांग है तभी भारत का भविष्य स्वस्थ, विकसित एवं खुशहाल रूप में सामने उभर कर आएगा। इन सभी संस्थागत व्यवस्थाओं के साथ ही ग्रामीण जनता में शिक्षा; जानकारी एवं जागरूकता बढ़ाकर उन्हें 'शासित' वर्ग की मनोवृत्ति से उबारना आवश्यक है जिससे वे अपने हक एवं अधिकारों को पहचान कर तथा कार्यों-प्रावधानों की जानकारी के साथ प्रभावी जनसहभागिता हेतु सक्षम हो। क्रियान्वयन तन्त्र के साथ सभी स्तरों पर अपनी अधिकारपूर्ण मांगों से प्रभावी जनसहभागिता क्रियान्वयन तन्त्र को भी पारदर्शी, जवाबदेह एवं संवेदनशील बनाकर उसे 'शासक' की बजाय 'लोकसेवक' वाली मानसिकता वाला वर्ग बनाने में सक्षम है। इस प्रकार पंचायतीराज के माध्यम से प्रभावी जनसहभागिता ही लोकतन्त्र को सच्चे अर्थों में प्रत्यक्ष स्वरूप के साथ धरातल पर स्थापित कर सकती है जिससे समाज में पारदर्शिता एवं जवाबदेहिता की संस्कृति विकसित होगी और ग्रामीण पिछड़ा, दलित जन भी सक्षम बनकर राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक विकास में तुल्य सहभागी बन सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. केडिया, कुसुमलता एवं मिश्र, रामेश्वर प्रसाद, स्त्रीत्व धारणाएँ एवं यथार्थ, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2004
2. शर्मा, प्रेम नारायण एवं संजीव कुमार झा, महिला सशक्तिकरण एवं समग्र विकास, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2008
3. दीक्षित, अर्चना, भारत में महिला सशक्तिकरण, रिसर्च जर्नल ऑफ आर्ट्स, मीनेजमेंट एण्ड सोशल साइंसेस, वा.-9, वर्ष-5, हिन्दी-2, सितम्बर, 2013
4. मनोहर, सुजाता बी., महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए निरंतर सतर्कता एवं जागरूकता की आवश्यकता, अंक-10, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत, नई दिल्ली, 2013
5. कुमार, पंकज, महिला सशक्तिकरण एवं उनके अधिकार, मानव अधिकार : नई दिशाएँ, वार्षिक, अंक-10, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत, नई दिल्ली, 2013
6. वर्मा, सरोज कुमार, सशक्तिकरण के भारतीय संदर्भ, योजना, वर्ष-53, अंक-10, अक्टूबर, 2008
7. नाटाणी, प्रकाश नारायण, महिला जागृति और कानून, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2002
8. पाण्डे, गिरीश चन्द्र, लोकतंत्र की नींव है पंचायती राज, कुरुक्षेत्र, वर्ष-54, अगस्त, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, 2008
9. मिश्रा, एस.के., ग्रामीण विकास की पुरी है पंचायती राज, कुरुक्षेत्र, वर्ष-54, अगस्त, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली, 2008
10. पंचायतीराज व्यवस्था : लोकतंत्र का आधार, पंचायत प्रतिनिधियों की एक दिवसीय उन्मुखीकरण गोष्ठी हेतु प्रकाशित अध्ययन सामग्री, पंचायतीराज विभाग, उ.प्र., लखनऊ, दिसम्बर, 2005
11. राठी, गिरिवर सिंह, भारत में पंचायती राज, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2004

केंद्र सरकार की महत्वाकांक्षी योजना : स्मार्ट सिटी से बदलेगा शहरों का स्वरूप

डॉ. अरविन्द चौधरी

व्याख्याता, एस.एस जैन सुबोध पी.जी. कॉलेज, जयपुर



shodhshree@gmail.com

गां वों का मुलक कहलाने वाले हमारे देश में शहरीकरण एक ऐतिहासिक बदलाव है। आबादी के मंदनजर अब जितने भी परिवर्तन हैं, उनका सीधा असर हमारे शहरों की दशा-दिशा पर पड़ेगा। लेकिन ये शहर कैसे हैं और इनकी भावी रूपरेखा क्या है-इसे लेकर अभी पर्याप्त असमंजस बना हुआ है। सरकार देश में सौ शहरों को चुनकर उन्हें भविष्य का शहर बनाना चाहती है, तो दूसरी तरफ खुद-ब-खुद अनियोजित ढंग से बसते शहर हैं, जो आकार-प्रकार में बढ़ रहे हैं, लेकिन उनकी बसावट घोर बेतरतीबी है। ऐसे शहरों ने देश के शहरीकरण की शक्ति ही बिगाड़ दी है। लिहाजा सवाल है कि क्या यही वे शहर हैं, जिनके बल पर हम भविष्य में आगे बढ़ने और विकसित मुल्कों के बराबर खड़े होने का दम भर सकते हैं।

क्या आप किसी बैसे शहर की कल्पना कर सकते हैं, जिसकी सड़कों पर स्थित हर खम्भे पर कैमरे लगे हों, रात में पैदल यात्री के उपस्थित होने पर बल्व स्वतः जल जाए अन्यथा डिम हो जाए, सूर्य की रोशनी के अनुरूप घरों की लाइटें घटाई बढ़ाई जा सकें और शिक्षक की गैर-हाजरी पर किसी दूसरे स्कूल का शिक्षक वीडियो कांफ्रेंसिंग के जरिये पढ़ा सके। जी हां, मोदी सरकार की स्मार्ट सिटी परियोजना इसी कल्पना को साकार करने वाली है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व वाली राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन सरकार ने शहरी भारत को रहन-सहन, परिवहन और अन्य अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस करने के इरादे से तीन महत्वाकांक्षी योजनाओं-स्मार्ट सिटीज, अटल मिशन फॉर रिजुवनेशन एंड अर्बन ट्रांसफॉर्मेशन (अमृत) और सभी को आवास योजना-का हाल ही में शुभारम्भ किया है। इन परियोजनाओं से देशवासियों की उम्मीदों को नयी उड़ानें मिलती नजर आ रही है और सपनों को संजीवनी।

शहरी जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने, स्वच्छ पर्यावरण उपलब्ध कराने, परिवहन व्यवस्था को सुधारने, शहरों को छवि खराब करते झुग्गी-झोपड़ियों को हटाने तथा उनमें रहने वालों लोगों को वैकल्पिक सुविधा मुहैया कराने के लिए शहरी संसाधनों, स्रोतों और बुनियादी संरचनाओं का सक्षम ढंग से विकास करना स्मार्ट सिटी परियोजना का प्रमुख मकसद है। इन परियोजनाओं के तहत 2022 तक सभी को आवास उपलब्ध कराने का लक्ष्य भी है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार, भारत की वर्तमान जनसंख्या का लगभग 31 फीसदी आबादी शहरों में बसती है और इनका सकल घरेलू उत्पाद में 63 फीसदी का योगदान है। ऐसी उम्मीद है कि वर्ष 2030 तक भारत की आबादी का 40 फीसदी हिस्सा शहरों में रहेगा और सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान 75 प्रतिशत का होगा। इसके लिए भौतिक, संस्थागत, सामाजिक और आर्थिक बुनियादी ढांचे के व्यापक विकास की आवश्यकता है। ये सभी जीवन की गुणवत्ता में सुधार लाने एवं लोगों और निवेश को आकर्षित करने, विकास एवं प्रगति के एक बेहतर चक्र की स्थापना करने में महत्वपूर्ण हैं। स्मार्ट सिटी का विकास इसी दिशा में एक कदम है।

केंद्र की महत्वाकांक्षी योजना के तहत नई शहरी पहलों के लिए चयनित कई शहर स्वच्छता के मोर्चे पर बहुत पीछे पाए गए और स्वच्छ भारत सूची में नीचे हैं जो सरकार के लिए चिंता का विषय है। राज्यों के स्मार्ट सिटी मिशन, कायाकल्प और शहरी बदलाव के लिए अटल मिशन और धरोहर शहर विकास एवं उन्नति योजना जैसी नई शहरी पहलों के तहत शहर स्तरीय योजनाओं की तैयारियों की तरफ बढ़ने के बीच, समान चिंता इन सभी योजनाओं के तहत स्वच्छता सुनिश्चित करना है। शहरी विकास मंत्रालय द्वारा देश के 476 प्रथम श्रेणी शहरों के लिए तैयार डेटा के अनुसार, शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता पर चिंता इस तथ्य से प्रदर्शित होती है कि स्मार्ट सिटी मिशन के तहत अब तक चुने गए 98 में से केवल तीन शहर दस शीर्ष स्वच्छ शहरों में शामिल हैं। धरोहर शहर विकास एवं उन्नति योजना के 12 शहरों में से ज्यादातर स्वच्छ भारत रैंकिंग में बहुत नीचे हैं। शहरी विकास मंत्रालय स्मार्ट सिटी योजना के लिए शहरों की तैयारियों के विभिन्न पहलुओं को समझने के लिए राज्यों और शहरी स्थानीय निकायों के लिए कार्यशालाओं का आयोजन कर रहा है।

भावी स्मार्ट शहरों की घोषणा के साथ अभियान प्रारंभ हो गया है। नरेन्द्र मोदी सरकार स्मार्ट शहरों की परियोजना को आगे बढ़ा रही है ताकि प्रचुर धन के साथ इसे वांछित गति प्रदान की जा सके। आबंटन योजनाओं की घोषणा पहले ही आई गिरावट और विश्वभर में उसके प्रभाव के बाद दांचागत गतिविधियों पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। विकास, विशेषकर सड़कों और राजमार्गों के निर्माण का कई गुना प्रभाव पड़ेगा और इससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर बढ़ेंगे। विशेषज्ञों के अनुसार बुनियादी ढांचा स्मार्ट शहर मिशन का आधार है और इन सब घटनाओं से उसे मजबूत करने की तैयारी हो गई है।

वित्त मंत्री अरुण जेटली ने हाल ही में कहा था कि चीन में आर्थिक बदलाव को देखते हुए भारत विश्व आर्थिक विकास के "अन्य इंजनों" में से एक की भूमिका अदा कर सकता है। श्री जेटली के अनुसार "विकास प्रक्रिया को जारी रखने के लिए विश्व को अन्य इंजनों की आवश्यकता है, और विश्व में मंदी के वातावरण में, भारत जैसी अर्थव्यवस्था जो 8-9 प्रतिशत की दर से विकास कर सकती है, वह वैश्विक अर्थव्यवस्था को सक्षम सहारा दे सकती है।" उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय लोकतांत्रिक गठबंधन सरकार वैश्विक निवेशकों के लिए केन्द्र, राज्यों और स्थानीय निकायों के स्तर पर व्यापारिक वातावरण को आसान बनाने के उपाय कर रही है। विशेषज्ञों के अनुसार भूमि अधिग्रहण, भ्रष्टाचार, अधिक सार्वजनिक भागीदारी के साथ निजी निवेश आदि प्रमुख चुनौतियां हैं, जिनका समाधान अनिवार्य है ताकि राजनीतिक सहमति के साथ निर्धारित अवधि में वांछित परिणाम सुनिश्चित किए जा सकें। हाल ही में शहरी विकास मंत्री वैकेया नायडू ने राज्यों के बीच एक राष्ट्रव्यापी "प्रतिस्पर्धा" के बाद शहरों की एक सूची जारी की जिसमें उत्तरप्रदेश से वाराणसी,

इलाहाबाद, लखनऊ, गाजियाबाद, बरेली और आगरा, तमिलनाडु से नासिक, ठाणे, सोलापुर, नागपुर, नवी मुंबई, औरंगाबाद और पुणे, मध्यप्रदेश से भोपाल, इंदौर, जबलपुर, खालियर, उज्जैन। गुजरात से अहमदाबाद, गांधीनगर और बड़ौदा, बिहार से भागलपुर और मुजफ्फरपुर शामिल हैं।

उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु से सर्वाधिक 12 शहर लिए गए हैं, जिसके बाद महाराष्ट्र का स्थान है जहां से 10 शहर सूची में शामिल किए गए हैं। इसी प्रकार मध्यप्रदेश से 7, कर्नाटक और गुजरात से 6-6, राजस्थान से 4, आंध्रप्रदेश, बिहार और पंजाब से 3-3 शहर चुने गए हैं। परियोजना के लिये चुने गए शहरों में 24 राजधानी शहर, कुछ व्यापारिक केन्द्र और 18 सांस्कृतिक केन्द्र हैं। 2 अन्य स्मार्ट शहरों का चयन उचित समय पर किया जायेगा, क्योंकि जम्मू कश्मीर ने परियोजना के लिए अपनी पसंद के शहर के बारे में निर्णय करने के लिए अधिक समय मांगा और खबर है कि उत्तरप्रदेश को मेरठ और रायबरेली में से किसी एक का चयन करने में मशकत करनी पड़ रही है।

स्मार्ट शहरों का चयन एक अंतः राज्य प्रतियोगिता के जरिए किया गया है। प्रत्येक राज्य और संघ शासित प्रदेश ने अपने-अपने क्षेत्रों में सभी शहरी स्थानीय निकायों का मूल्यांकन किया, जो मौजूदा सेवा स्तरों, वित्तीय और संस्थागत क्षमताओं और पिछले रिकार्ड एवं सुधारों के आधार पर किया गया। चयनित 98 शहरों में से 88 को स्वच्छ भारत रैंकिंग दी गई है। इनमें से केवल तीन शहर कोच्चि, तिरुचिरापल्ली और नवी मुंबई देश के शीर्ष 10 स्वच्छ शहरों में शामिल हैं। इन 98 में से 29 शहर शीर्ष सी शहरों में शामिल हैं जबकि 38 स्मार्ट सिटी 200 के भी आंकड़े से आगे हैं। मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा, मंत्रालय शहरी क्षेत्रों में स्वच्छता के महत्व को लेकर विशेष रूप से सचेत है।

स्मार्ट सिटी के लिए देश के 98 शहरों की घोषणा के कुछ ही दिन बाद एक रिपोर्ट में इस परियोजना पर बेहतर तरीके से अमल करने के तीर तरीके सुझाए गए हैं। नीति आयोग ने भी इस रिपोर्ट का समर्थन किया है। यह रिपोर्ट बेंगलूरू के सेंटर फार साइंस, टेक्नोलॉजी एंड पॉलिसी ने तैयार की है। रिपोर्ट में कहा गया है कि स्मार्ट सिटी मिशन पर किसी और मॉडल पर सीधे सीधे चलने के बजाय सतर्कता के साथ काम करने की जरूरत है। इसके तहत सक्षम शहरी प्रबंधन प्रणाली कायम करने, शहरी संस्थाओं और स्थानीय सरकार के लिए पर्याप्त क्षमता बनाने, विकेंद्रीकरण का एजेंडा हासिल करने की जरूरत है। रिपोर्ट में कहा गया है कि शहरी पर्यावरण में टकराव को न्यूनतम करने और व्यापक तथा समान शहरीकरण की स्थितियां बनाए जाने की जरूरत है।

शहरों को स्मार्ट बनाने में न केवल समय बल्कि प्रयासों की भी दरकार है। इसके लिए सक्षम नीति और नियामकीय माहौल बनाए जाने

अहम ज़रूरत है। इससे न केवल शहर स्मार्ट बनेंगे बल्कि नगरीय विकास का स्थायी ढांचा भी खड़ा होगा और निवेश पर रिटर्न भी मिलेगा। रिपोर्ट को जारी करते हुए नीति आयोग के सदस्य विवेक देवराय ने कहा, शहरीकरण वांछनीय है और इस पर किसी को सवाल नहीं उठाना चाहिए। उन्होंने शहरीकरण और आर्थिक विकास के बीच सहसंबंध पर भी जोर दिया। उन्होंने कहा कि जो कोई भी गांवों में जाता है, वहां रहता नहीं। विभिन्न कारणों से गांवों की संख्या भी 7 लाख से घटकर 6 लाख रह गई है। नीति आयोग इस मामले में मदद करने के लिए है, लेकिन राज्यों को खुद भी फिसला करना होगा। साथ ही नागरिकों को सोचना होगा कि वे किस तरह का स्मार्ट सिटी चाहते हैं।

राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन (राजग) सरकार के महत्वाकांक्षी स्मार्ट सिटी कार्यक्रम के तहत पहले पांच वर्षों में 100 प्रायोगिक परियोजना ही स्थापित हो सकती हैं। आम धारणा है कि अगले पांच वर्षों में एक भी स्मार्ट सिटी साकार नहीं हो पाएगी, लेकिन देश भर में कई स्मार्ट कॉलोनियों की सफल परियोजना जरूर नजर आ सकती हैं। बिजनेस स्टैंडर्ड्स ने स्मार्ट सिटी परियोजना का विश्लेषण किया है, जिसमें पता चला कि इसकी सफलता तीन अहम पहलुओं पर निर्भर होगी। पहला यह कि राज्य सरकारें और शहरी स्थानीय निकाय बहु उद्देश्यीय मकसद वाली विशेष इकाई (एसपीवी) के मुचात परिचालन के लिए उसे अपनी कितनी शक्तियां सौंपती हैं। इस योजना को एसपीवी के तहत ही चलाया जाएगा। दूसरा, केंद्र, राज्य और स्थानीय निकायों के बीच शक्ति संतुलन को बरकरार रखते हुए इस एसपीवी के ढांचे में निजी क्षेत्र को कैसे समायोजित किया जाता है। तीसरा, एसपीवी और इसमें शामिल निजी क्षेत्र किस तरह से इन स्मार्ट कॉलोनियों में रियल एस्टेट विकसित कर उससे राजस्व अर्जित करने में सक्षम होते हैं। इस कार्यक्रम के तहत सरकारी कोष जरूरी निवेश को पूरा करने में काफी नहीं होंगे और राजस्व के कुछ अन्य स्रोतों से निजी क्षेत्र को उनके निवेश पर रिटर्न मिल सके, इसके लिए कॉलोनियों में विकसित जमीन का इस्तेमाल बहुत ही अहम होगा। इस बारे में जानकारी के लिए शहरी विकास मंत्रालय को कुछ सवाल भेजे गए थे, लेकिन खबर लिखे जाने तक उनका कोई जवाब नहीं आया।

सरकार ने घोषणा की है कि वह छह गए 98 शहरों में से जल्द ही काम शुरू करने के लिए 20 शहरों का चयन करेगी। अगले साल सरकार 40 अन्य और फिर उसे अगले वित्त वर्ष में 40 शहरों को इसमें शामिल करेगी। चालू वित्त वर्ष के अंत तक पहले 20 शहरों में परियोजनाएं शुरू करने के लिए एसपीवी गठित होने की उम्मीद है। केंद्र सरकार ने स्मार्ट सिटी का दर्जा हासिल करने हेतु शहर के लिए कुछ न्यूनतम मानदंड तय किए हैं। इसे स्मार्ट सिटी के दर्जे के लिए कम से कम दो लक्ष्य हासिल करने के वास्ते एसपीवी का गठन करना होगा। पहला, इसे कम से कम 50 एकड़ जमीन का पुनर्विकास करना होगा या 500 एकड़ को पुनर्व्यवस्थित करना होगा या 250 एकड़ से

ज्यादा क्षेत्र में नई परियोजना विकसित करनी होगी। इन प्लॉटों पर एसपीवी को सभी तरह की स्मार्ट सेवाएं, जैसे- इलेक्ट्रॉनिक्स आपूर्ति सेवा, शहर से निकलने वाले टोस कचरे का कुशल निपटान, स्मार्ट पार्किंग और ऊर्जा की कम खपत करने वाली इमारत मुहैया कराने की जरूरत होगी। इस लक्ष्य को हासिल करने में 3 से 10 साल लग सकते हैं, जो उमर ब्रताए गए तीन विकल्पों के मुताबिक अलग-अलग हो सकते हैं। इसकी जानकारी जनवरी 2015 में शहरी विकास सचिव शंकर अग्रवाल ने वार्शिंगटन में अपनी प्रस्तुति के दौरान दी थी। दूसरी शर्त इन स्मार्ट सेवाओं में से कोई एक स्मार्ट सेवा जैसे- कुशल यातायात प्रबंधन प्रणाली या स्मार्ट मीटरिंग आदि को पूरे शहर में लागू करना है।

स्मार्ट सिटी कार्यक्रम के रणनीतिक दस्तावेज में कहा गया है, स्मार्ट सिटी को सीमित क्षेत्र के लिए लिया जा रहा है, ऐसे में यह जरूरी है कि शहर के सभी निवासियों को यह महसूस होना चाहिए कि इनमें से कुछ उनके लिए भी है। लिहाजा, पूरे शहर के लिए स्मार्ट समाधान के लिए कुछ अतिरिक्त जरूरतों (कम से कम एक) को शामिल कर इस योजना को समावेशी बनाया जाएगा। मंत्रालय के साथ स्मार्ट सिटी कार्यक्रम पर काम कर रहे नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ अर्बन अफेयर्स के निदेशक जगन शाह ने कहा, जहां शहरी निकायों की क्षमता होगी वहां प्रदर्शन के लिए परियोजना को लागू कर दिखाया जाएगा।

मिसाल के तौर पर करीब 85,004 एकड़ वाले नवी मुंबई के चयनित शहर को ही लें। नवी मुंबई में पांच सालों के बाद इस कार्यक्रम को सफल घोषित करने के लिए अधिकारियों को स्मार्ट सेवाओं वाला न्यूनतम 500 एकड़ क्षेत्र जोड़ना होगा या 50 एकड़ का पुनर्विकास करना होगा या फिर 250 एकड़ वाली नई स्मार्ट कॉलोनी बनानी होगी। हालांकि चयनित शहर और भी ज्यादा कुछ कर सकते हैं लेकिन केंद्र की तरफ से फंड की सीमा तय है। डेलॉयट इंडिया के वरिष्ठ निदेशक अरिंदम गुहा कहते हैं, आप यह कह सकते हैं कि हम चुनिंदा शहरों में पायलट परियोजनाओं पर जोर दे रहे हैं। संसाधन उपलब्ध कराने की बजह से ही यह शुरुआत हो पाई है। स्मार्ट सिटी योजना पर अमल करने के लिए राज्यों की मदद के लिए सलाहकार कंपनियों की एक टीम बनाई गई है जिसमें डेलॉयट इंडिया भी एक है।

स्मार्ट सिटी परियोजना के लिए केंद्र सरकार ने पांच सालों के दौरान 48,000 करोड़ रुपये देने की प्रतिबद्धता जताई है और राज्य द्वारा भी करीब इतनी ही रकम देने की उम्मीद है। इस तरह कुल 96,000 करोड़ रुपये की पूंजी से 100 शहरों में पायलट परियोजनाओं पर काम किया जा सकेगा। स्मार्ट सिटी के चयन का पैमाना उन शहरों के पक्ष में है जो वित्तीय और प्रबंधन के लिहाज से अच्छा प्रदर्शन कर रहे हैं। इन 100 शहरों को एमआरव्यूटी (अमृत) योजना के तहत भी कवर किया जाता है जिसमें बुनियादी सुविधाओं मसलन सफाई व्यवस्था के लिए पाइपलाइन लगाने के लिए फंड मुहैया कराया जाएगा। दूसरी योजनाओं को भी इसमें शामिल किया जाएगा ताकि

स्मार्ट सिटी के विकास में मदद दी जा सके लेकिन इसके बावजूद फंड पर्याप्त नहीं होगा।

अमेरिका-भारत बिजनेस काउंसिल की भारत में स्मार्ट सिटी से जुड़ी एक रिपोर्ट के मुताबिक स्मार्ट सिटी के तौर पर सभी शहरों का पुनर्विकास करने के लिए काफी निवेश की जरूरत होगी। ऐसे में निजी निवेशकों की साझेदारी अहम होगी और सरकारी दिशा निर्देशों के द्वारा इसे हर चरण पर प्रोत्साहित किया जाता है। पायलट परियोजना के तहत स्मार्ट कॉलोनियों के विकास में भी सरकार द्वारा दी जा रही पूंजी से भी ज्यादा पूंजी की जरूरत होगी। मिसाल के तौर पर मुंबई के भिंडी बाजार परियोजना के स्मार्ट सिटी दिशा निर्देश को ही ले लें। आधिकारिक अनुमान के मुताबिक महज 16.5 एकड़ क्षेत्र के पुनर्विकास की लागत करीब 3,000 करोड़ रुपये होगी।

स्मार्ट सिटी परियोजना के तहत राज्यों को इस कार्यक्रम पर अमल करने के लिए एक एसपीवी बनाने की जरूरत होगी। दिशा निर्देशों के मुताबिक एसपीवी में राज्य और स्थानीय शहरी संस्था की समान इक्विटी साझेदारी होगी। इसका नेतृत्व एक मुख्य कार्यकारी अधिकारी (सीईओ) करेंगे जिनके पास इस योजना को चलाने की पूर्ण कार्यकारी शक्ति होगी। केंद्र के दिशानिर्देश में यह प्रस्ताव है कि सीईओ की नियुक्ति केंद्र द्वारा की जाएगी और उन्हें केंद्र सरकार की पूर्व अनुमति के साथ ही हटाया जा सकता है। कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि इस स्थिति में बदलाव लाया जा सकता है। एसपीवी में राज्य के साथ-साथ केंद्र सरकार के प्रतिनिधि भी होंगे।

केंद्रीय शहरी विकास मंत्रालय ने "स्मार्ट सिटी" कार्यक्रम में शामिल करने के लिए जिन 98 शहरों का चयन किया है (दो और शहर इसमें शामिल होंगे), उन्हें देखकर कुछ हद तक यह समझ में आता है कि केंद्र और राज्य सरकारों की नजर में दरअसल कौन सी बात मायने रखती है। इसी समाचार पत्र में प्रकाशित रिपोर्ट के मुताबिक इस सूची में वे शहर शामिल हैं जिनको अब तक बढ़िया माना जाता रहा है (जो केंद्र द्वारा तय मानकों पर खरे हैं), जिनको संबंधित राज्य सरकार का समर्थन हासिल है (वह उन शहरों को बढ़ावा देना चाहती है) अथवा जिनका चयन इसके लिए व्यावहारिक रहा है।

इनमें से सबसे कम तबज्जो वाली वजह पर गौर करें तो नई दिल्ली नगरपालिका परिषद के दायरे में आने वाले क्षेत्र को (जहां मंत्री और नीकरशाह आदि रहते हैं) शायद इसलिए चुना गया क्योंकि यहां काम करना अधिक आसान होगा। कहना न होगा पहले से ही स्मार्ट शहर को और अधिक स्मार्ट बनाना कोई बहुत बड़ा काम नहीं है। खासतौर पर तब जबकि सर्वाधिक प्रभावशाली लोग उस इलाके में रहते हों। स्मार्ट सिटी संबंधी पहल के जरिये सबसे पहले उन शहरी क्षेत्रों पर ध्यान दिया जाना चाहिए था जिनको उसकी सबसे अधिक जरूरत है। ऐसा करने से उनसे यह सबक निकलकर आता कि शहरी क्षेत्र की दिक्कतों को वास्तव में किस तरह दूर करना है।

पश्चिम बंगाल सरकार ने भी उसी मानसिकता का परिचय देते हुए कोलकाता के दो सर्वाधिक आधुनिक उपनगरीय इलाकों विधान नगर और न्यूटाउन का नाम स्मार्ट सिटी के लिए सामने रखा है। ये दोनों क्षेत्र पूरे राज्य में नए विकास के उत्कृष्टतम मॉडल हैं। इनका उद्देश्य ही कोलकाता शहर का विस्तार है। ये क्षेत्र शहर के सूचना प्रौद्योगिकी केंद्र के भी करीब हैं। खासतौर पर न्यूटाउन तो अपने नाम के ही अनुरूप अभी ठीक तरह से विकसित भी नहीं हो सका है। असल चुनौती तो तब होती जब इन दोनों टाउनशिप से लगे कोलकाता के पूर्वी हिस्से को स्मार्ट सिटी में तब्दील किया जाता।

वहीं दूसरी ओर, एक ऐसा राज्य भी है जो ऐसा कोई इरादा नहीं रखता है कि एक सफल कारोबारी शहर को नगरीय मानकों का मानक बना दिया जाए। उसने वैश्विक मानचित्र पर अपनी पहचान कायम कर चुके शहर बेंगलूर को स्मार्ट सिटी की सूची से बाहर रखा है। इसलिए क्योंकि बेंगलूर की न तो दशा अच्छी है और न ही उसका प्रशासन बेहतर है। बेंगलूर को सफल शहर बनाने के क्रम में राज्य सरकार पहले ही बेहतर निजी सलाहों का इस्तेमाल कर चुकी है। उदाहरण के लिए उसने पहले ही स्मार्ट सड़कों का खाका तैयार कर लिया है। ऐसे में दूसरे दर्जे के शहरों का चयन सही लगता है और ऐसा किया भी गया है लेकिन ऐसी कोई वजह नजर नहीं आती है जिसके चलते बेंगलूर को छोड़ दिया गया है। इसलिए क्योंकि तमिलनाडु ने चेन्नई को इस सूची में स्थान दिया है। इसमें राजनीतिक हकीकतों की भी भूमिका हो सकती है।

पिछले पांच सालों से बेंगलूर के नगर निकाय पर भाजपा का विजय है। फिर भी वह हाल में दोबारा जीतने में कामयाब रही। कांग्रेस को नगर निकाय चुनावों में जीत की कोशिश में नाकामी हाथ लगी क्योंकि उसकी छवि शहर विरोधी पार्टी की है। न तो भाजपा और न ही कांग्रेस के नेताओं के पास ऐसा कोई नजरिया नजर आता है कि स्मार्ट सिटी का निर्माण और उसका परिचालन कैसे किया जाए? केंद्र तथा अधिकार राज्य दोनों आसान राह चुन रहे हैं और स्मार्ट सिटी योजना पर यह खतरा मंडरा रहा है कि शहरी भारत की जटिल समस्याओं के निवारण के बदले वे कहीं महज दिखावटी बनकर न रह जाएं।

केंद्र सरकार यह सिफारिश करती है कि सीईओ को नगर संबंधी और प्रासंगिक राज्य कानूनों के तहत शक्तियां दी जाएंगी। इसके अलावा यह भी सिफारिश है कि शहरी विकास बोर्ड, स्थानीय स्व-शासन और दूसरे राज्य विभाग भी प्रासंगिक मंजूरी और निर्णय लेने का अधिकार एसपीवी को दें। हालांकि इससे मतभेद की स्थिति बनेगी। केंद्र इन शक्तियों को एसपीवी को सौंपने की सिफारिश करती है जबकि विशेषज्ञ यह सुझाव देते हैं कि राजनीतिक रूप से यह असंभव है कि ऐसे अधिकार पूरी तरह से सौंप दिए जाएं। राज्य प्रशासन अपने पास अधिकार रखते हुए भी पायलट परियोजना के लिए जहां संभव होगा उसके नियमन में संशोधन कर सकते हैं। गुहा कहते हैं कि काम के

अगले चरण में इन मसलों पर स्पष्टता बनेगी।

केंद्र सरकार एसपीवी को प्रोत्साहित करती है कि वे संयुक्त उपक्रम कंपनियां, सहयोगी कंपनियां बनाएं और निजी क्षेत्र के साथ जरूरत पड़ने पर पीपीपी समझौते पर हस्ताक्षर करें। एसपीवी में निजी साझेदारी की अनुमति तभी दी जाएगी जब राज्य और स्थानीय शहरी संस्थाओं (यूपएलबी) की कंपनी में बहुलांश या समान हिस्सेदारी रखें। योजना की प्रक्रिया से जुड़े एक वरिष्ठ अधिकारी ने नाम न बताने की शर्त पर बताया, एसपीवी कार्यकारी निदेशक मंडल की मंजूरीयों वाले सभी कार्यों को अंजाम देगा। वे अनुपंगी कंपनियों (जिसमें ज्यादातर शेयरधारक निजी निवेशक हों) में न्यूनतम हिस्सेदारी बनाए रखने का फैसला कर सकते हैं। अधिकारियों के पास सीमित फंड है ऐसे में एक तंत्र को निजी निवेशकों को प्रोत्साहित करना चाहिए ताकि वे संसाधन की कमी को पाट सकें। केंद्र सरकार ने एसपीवी और राज्य अधिकारियों को अपने बजट के मुताबिक बेहतर मॉडल तैयार करने की स्वतंत्रता दी है।

निष्कर्षतः इसमें कोई संदेह नहीं है कि व्यापक विकास भौतिक, संस्थागत, सामाजिक, और आर्थिक बुनियादी ढांचे को एकीकृत करके ही होता है। सरकार की कई क्षेत्रीय योजनाएँ इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए शामिल होती हैं, भले ही उनके रास्ते अलग हों। शहरी योजनाओं के स्वरूप में बदलाव करके उन्हें अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस शहर में तब्दील करने में अमृत और स्मार्ट सिटी मिशन एक-दूसरे के पूरक साबित होने वाले हैं। हर कोई चाहता है कि वे स्मार्ट सिटी के निवासी कहलाएं, लेकिन सबसे बड़ा सवाल यह है कि एक शहर आखिर स्मार्ट कब कहलाता है? इस सवाल का जवाब कुछ शब्दों में बांधा नहीं जा सकता, क्योंकि सरकार से लेकर इन योजनाओं पर काम करने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनियां और आम लोग सबका जवाब अलग-अलग होगा। हर शहर की अपनी संस्कृति और अपना चरित्र होता है। हर शहर की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं। कई शहर बसावट में ही काफी जटिल और दुर्गम होते हैं और कुछ शहर काफी सहज होते हैं। स्मार्ट सिटी शब्द सुनते ही सबसे पहले जो तस्वीर उभरती है वह कुछ ऐसी होती है—एक शहर जहाँ की जलवायु शुद्ध हो, लोग खुली हवा में सांस ले सकें। बिजली-पानी की सप्लाई 24 घंटे सुचारु हो, दिनभर लोगों को ट्रैफिक में न जूझना पड़े, सार्वजनिक यातायात उपलब्ध हो जो विश्व स्तरीय हो, बुनियादी सुविधाएँ व्यापक हों। सड़कें, इमारतें, शॉपिंग माल, सिनेप्लेक्स सब कुछ योजनाबद्ध तरीके से बने हों। अनाधिकृत कॉलोनिनों की सड़ांध मारती गलियां न हों। झुग्गी-बस्तियां न हों। कुछ ऐसा शहर जहाँ लोगों के रहन-सहन में समानता दिखे।

भारत जैसे देश में किसी शहर को स्मार्ट बनाने की प्रक्रिया जनता केंद्रित होनी चाहिए। इस बात में कोई शक नहीं है कि इन शहरों को लोगों के काम आने लायक बनाना भी जरूरी है। स्मार्ट सिटी या निवास स्थान का विचार एक लक्ष्य के बजाय एक प्रक्रिया है और यही

वह विशेषता है जो यह सुनिश्चित करती है कि स्मार्ट सिटी की कोई एक स्वीकार्य परिभाषा नहीं है। इसलिए यह मान्य है कि एक स्मार्ट सिटी इंटरनेट शासित होगी, डिजाइन और प्रबंधन में नियमित सुधार का लक्ष्य होगा, जलवायु आधारित विकास की योजना होगी और उसके निवासियों के लिए सुविधाएँ विकसित की जाएंगी। एक शहर को स्मार्ट बनाने के लिए जनता केंद्रित तकनीकी सुविधाएँ विकसित करने की जरूरत होगी। विकास के लिए आईसीटी की ताकत का इस्तेमाल करने का विचार खासतौर पर पारदर्शिता और प्रशासन में सुधार के लिए भारत में नया नहीं है और यह विचार स्मार्ट सिटी बनाने के विचार से काफी पहले का है। भारत की राष्ट्रीय आय का 8.6 प्रतिशत शामिल होगा। इसमें सरकार उन गांवों को शामिल कर सकती है, जो शहरों के नजदीक हैं और जिनकी जनसंख्या 5000 से 9999 के बीच है। इस दौरान, यह योजना ग्रामीण जनसंख्या का अतिरिक्त 13.2 प्रतिशत को भी शामिल करेगी।

यह योजना व्यावहारिक लगती है क्योंकि समय के साथ-साथ शहर के नजदीकी गांवों में रहने वाले लोग भी शहरी ही बन जाएंगे। इसलिए आगे की योजना बनाना एक स्मार्ट आईडिया है। इन गांवों को स्मार्ट बनाने के लिए उठाए जा रहे कदम प्रशासनिक दृष्टि और सेवा वितरण से ग्रामीण विकास मंत्रालय के ई-पंचायत प्रोजेक्ट के अंतर्गत लाये जा सकते हैं। इस योजना में पंचायत की कार्यपद्धति के सभी आयाम योजना, जांच, क्रियान्वयन, बजट, विपणन, सामाजिक लेखा-परीक्षण और नागरिक सेवाओं का वितरण जैसे प्रमाण पत्र और लाइसेंस जारी करना भी शामिल होगा। ई-पंचायत प्रोजेक्ट का इस्तेमाल स्मार्ट शहरीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए भी किया जाना चाहिए। केंद्र सरकार ने एम-हेल्थ और ई-लर्निंग के मॉडल्स विकसित करने के लिए आईसीटी की उन्नत तकनीकों का इस्तेमाल करने की खोज की है। यह कदम गांवों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए भी इस्तेमाल किए जाने चाहिए। यहां दिल्ली-मुंबई औद्योगिक गलियारे जैसी महत्वपूर्ण परियोजनाओं के साथ भी परस्पर अनुबंध होने चाहिए। इस बारे में सुझाव यह है कि यह योजना विभिन्न प्रस्तावों की अभिसारिता के लक्ष्य को प्राप्त करने वाली होनी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि प्रत्येक ग्रामीण आवास और भविष्य के शहर स्मार्ट बन रहे हैं। इस प्रस्ताव को भविष्य के शहरीकरण के लिए एक अग्रणी योजना के तौर पर समझा जा सकता है। आज सरकार द्वारा उठाए गए अधिकतर कदम अग्रसक्रिय होने की बजाय प्रतिक्रियाशील हैं, जिनका दूरगामी असर नजर नहीं आता।

हमारे शहरी क्षेत्र और प्रशासनिक ढांचा राजनीतिक झड़ों और आर्थिक संघर्षों का एक रंगमंच बन गया है। हमारे शहरी क्षेत्रों का इस्तेमाल सुधारों के प्रचार-प्रसार और साथ ही साथ इस तरह के सुधारों के लिए जरूरी मानकों पर चर्चा के लिए भी किया जा रहा है। कुछ लोग सरकार के साथ सार्वजनिक निजी-साझेदारी के जरिए नागरिक सेवाओं का निजीकरण चाहते हैं, जो कि सिर्फ अनुदेशक के

तीर पर काम करती हैं। अन्य लोग कहते हैं, यह सामाजिक और आर्थिक विषमताओं को और ज्यादा बढ़ा देगा। 4862 गांवों में स्मार्ट गांव बनाने की शुरुआत की जा सकती है। इसमें ग्रामीण जनसंख्या का 8.6 प्रतिशत शामिल होगा। इसमें सरकार उन गांवों को शामिल कर सकती है, जो शहरों के नजदीक हैं और जिनकी जनसंख्या 5000 से 9999 के बीच है।

ई-शासन योजना का स्वप्न सभी सरकारी सेवाओं एवं आम आदमी तक सामान्य सेवा उपलब्धता केंद्र के जरिए उसके स्थानीय समुदाय में पहुंचाना है और उचित मूल्यों पर इन सेवाओं की पारदर्शिता, कुशलता और विश्वसनीयता सुनिश्चित करना है और आम आदमी की आधारभूत जरूरतों को समझना है। 4041 संवैधानिक शहरों, 3894 जनगणना में शामिल शहर, 475 शहरी संकुलन और 238617 ग्राम पंचायत 6,40,867 गांवों के लिए उत्तरदायी हैं और यह सुनिश्चित करने के लिए कि प्रत्येक प्रशासकीय इकाई ई-शासित होगी। इस लक्ष्य को पाने के लिए पहले से ग्रामीण इंटरनेट संपर्क जरूरी है और 500 करोड़ रुपये का बजट डिजिटल इंडिया पहल के लिए निर्धारित किया गया है। संक्षेप में ई-शासन, एक शुरुआत है कि जिसके लिए सरकार पहले से ही प्रतिबद्ध है, यह पहला मील का पत्थर है जिसे स्मार्ट आवास बनाने की दिशा में प्राप्त करने की जरूरत है क्योंकि ई-शासन देश भर में लागू किया जा रहा है, इसे प्रत्येक निवास स्थान को स्मार्ट बनाने के लिए काम करना चाहिए न कि सिर्फ सी स्मार्ट शहरों पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। 4862 गांव में दस हजार से ज्यादा निवासियों के साथ स्मार्ट गांव बनाने की शुरुआत की जा सकती है। इसमें भारत की ग्रामीण जनसंख्या ई-पंचायत प्रोजेक्ट का इस्तेमाल स्मार्ट शहरीकरण के लक्ष्य को पूरा करने के लिए भी किया जाना चाहिए। केंद्र सरकार ने एम-हेल्थ और ई-लर्निंग के मॉडल विकसित करने के लिए आईसीटी की उन्नत तकनीकों का इस्तेमाल करने की खोज की है।

भारत जैसे शहरों जिनकी सही मैपिंग तक उपलब्ध नहीं, जिनमें अवैध कब्जों की भरमार हो, शहरों को बेतरतीब निर्माण हो चुका हो, ऐसे शहरों को स्मार्ट बनाना किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं। भविष्य के शहर में बिजली के ग्रिड से लेकर सीवर पाइप, सड़कें, कारें और इमारतें हर चीज एक एक नेटवर्क से जुड़ी होगी। इमारत अपने आप

बिजली बंद करेगी, स्वचालित कारें खुद अपने लिए पार्किंग ढूँढेगी और यहां तक कि कूड़ादान भी स्मार्ट होगा, लेकिन सबाल यह है कि हम इस स्मार्ट भविष्य में कैसे पहुंच सकते हैं? शहर में हर इमारत, बिजली के खंभे और पाइप पर लगे सेंसरों पर कौन निगरानी रखेगा और कौन उन्हें नियंत्रित करेगा।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि शहरों को स्मार्ट बनाने की जरूरत है। एक अनुमान के मुताबिक साल 2050 तक दुनिया की 75 प्रतिशत आबादी शहरों में निवास करेगी, जिससे यातायात व्यवस्था, आपातकालीन सेवाओं और अन्य व्यवस्थाओं पर जबर्दस्त दबाव होगा। सच्चाई यह है कि दुनियाभर में इस समय जो स्मार्ट शहर बन रहे हैं वे बहुत छोटे हैं। इन शहरों के बारे में काफी चर्चा हो रही है लेकिन उनके पास ऐसी कोई तकनीक नहीं है जिससे वास्तव में लोगों की जिंदगी में बदलाव आ रहा है। हालांकि अगले पांच सालों में चीजें स्मार्ट हो जाएंगी, तब उन शहर का डेटा इंफ्रास्ट्रक्चर ट्रनों और सड़कों की तरह अहम हो जाएगा। ऐसा नहीं कि भारत स्मार्ट सिटी की ओर अग्रसर होने वाला पहला देश है, इससे पहले से कई देशों में स्मार्ट सिटी परियोजना बेहतरीन तरीके से क्रियान्वित की जा चुकी है। भारत में भी यदि इसे संजीवनी से अमल किया जाए तो इसे मोदी सरकार की बेहतरीन पहल कही जा सकती है, बशर्ते सरकार सामंजस्य बिठाने के लिए गांवों को भी स्मार्ट बनाने का प्रयास करे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बिजनेस स्टैंडर्ड, नई दिल्ली
2. बिजनेस टुडे, नई दिल्ली
3. इकॉनॉमिक टाइम्स, नई दिल्ली
4. कुरुक्षेत्र, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली
5. योजना, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली
6. प्रतियोगिता दृष्टि, जयपुर
7. जनसत्ता, नई दिल्ली
8. राजस्थान पत्रिका, जयपुर
9. दैनिक भास्कर, जयपुर
10. टाइम्स ऑफ इंडिया, जयपुर

राजस्थान में संगठित अपराध की रोकथाम में विशेष कार्य दल (एस.ओ.जी.) की भूमिका

हवासिंह घुमरिया

शोधकर्ता, लोक प्रशासन विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर



shodhshree@gmail.com

प्र प्रजातान्त्रिक समाज में पुलिस प्रशासन की भूमिका में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। एक तरफ पुलिस प्रशासन शांति व्यवस्था बनाये रखने का कार्य करती है तो वहीं दूसरी ओर संगठित अपराधों पर नियन्त्रण एवं रोकथाम करने का प्रयास करती है। संगठित अपराधों की रोकथाम हेतु विशेष दक्ष एवं प्रशिक्षित पुलिस बल की आवश्यकता होती है। इसके लिए राजस्थान में विशेष कार्य दल (एस.ओ.जी.) तथा आतंकवादी निरोधक दस्ता (ए.टी.एस.) का गठन किया गया है। विशेष कार्य दल द्वारा राज्य में विभिन्न संगठित अपराधों को न केवल नियन्त्रित किया गया है बल्कि आपराधिक प्रवृत्ति की रोकथाम में भी विशेष कार्य किया है।

अध्ययन क्षेत्र- भौगोलिक दृष्टि से राजस्थान 23°3' से 30°12' उत्तरी अक्षांशों एवं 69°30' से 78°17' पूर्वी देशान्तरों के मध्य स्थित है भौतिक स्वरूप की दृष्टि से पूर्व में गंगा-यमुना के मैदान, दक्षिण में मालवा के पठार तथा उत्तर एवं उत्तर-पूर्व में सतलज व्यास नदियों के मैदान द्वारा घिरा हुआ है 23½° उत्तरी अक्षांश रेखा या कर्क रेखा राजस्थान राज्य के दक्षिण में बांसवाड़ा-डूंगरपुर जिलों से होकर गुजरती है। अतः जलवायु की दृष्टि से इसका अधिकांश भाग उपोष्ण या शीतोष्ण कटिबन्ध में स्थित है विशेषतः इसका पश्चिमी भाग शुष्क, मध्य-पश्चिमी भाग व मध्य पूर्वी भाग अर्द्ध-शुष्क जलवायु एवं पूर्वी-भाग में नम जलवायु का है। इसकी स्थलीय सीमायें 5920 किमी लम्बी है जो हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश व गुजरात से सटी है तथा 1070 किमी सीमा पड़ोसी देश पाकिस्तान के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सीमा बनाती है। उपरोक्त भौगोलिक परिदृश्य भी राज्य में आपराधिक घटनाओं में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष भूमिका निभाता है। वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार कुल जनसंख्या 6,86,21,012 है। जिसमें धनार्जन के लोभ में संगठित अपराधों का होना स्वभाविक सी प्रवृत्ति लगती है।

अध्ययन के उद्देश्य-

वर्तमान अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं -

1. राजस्थान में पुलिस प्रशासन विशेषकर कार्य दल का इतिहास जानना।
2. राज्य में आर्थिक एवं संगठित अपराधों की रोकथाम में विशेष कार्यदल की भूमिका को जानना।
3. पुलिस प्रशासन की एक शाखा के रूप में विशेष कार्य दल के संगठन के बारे में जानना।
4. विशेष कार्य दल में कार्यरत विभिन्न अधिकारियों एवं कर्मचारियों के कार्यों पर प्रकाश डालना।
5. विशेष कार्य दल में व्याप्त प्रशासनिक संरचनाओं, प्रक्रियाओं, सीपें गये कार्य के बेहतर क्रियान्वन व व्यवहार से सम्बन्धित समस्याओं को उजागर करना और उनके समाधान हेतु व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

विधितन्त्र

सम्पूर्ण शोध पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों के विश्लेषण पर आधारित है प्राथमिक आंकड़ों का संग्रह शोधार्थी के व्यक्तिगत अनुभवों एवं विशेष कार्य दल के गठन के पश्चात् किये गये कार्यों के अनुभव पर आधारित हैं। प्राथमिक स्रोतों में अवलोकन, चर्चा आदि का उपयोग किया गया है। इस हेतु राजस्थान के पुलिस विभाग के विशेष कार्य दल एवं सिविल पुलिस के तीनों संवर्गों यथा भारतीय पुलिस सेवा, राजस्थान पुलिस सेवा एवं राजस्थान पुलिस अधीनस्थ सेवा के अधिकारियों एवं कर्मचारियों से बार्तालाप किया गया। द्वितीयक आंकड़े मुख्यतः पुस्तकें, लेख, सरकारी प्रतिवेदन, आदेश, परिपत्र, पत्र-पत्रिकाओं, इंटरनेट वेबसाइट एवं अन्य प्रकाशित एवं अप्रकाशित सामग्रियों का प्रयोग किया गया है।

संगठित अपराध

संगठित अपराध, संगठित व्यवसाय की तरह ही सहकारी प्रयासों पर आधारित है। वह अपराध जिसके सफल क्रियान्वयन के लिए कुछ व्यक्तियों या समूहों का सहयोग सम्मिलित हो, संगठित अपराध की श्रेणी में रखा जा सकता है। दूसरे अर्थ में अवैध क्रियाओं के माध्यम से आर्थिक उपलब्धियों के लिए संगठित उद्यम, जब अपराध करता है तो उसे संगठित अपराध की श्रेणी में रखा जाता है। जेब काटना, लूटमार, सेंधमारी, मादक पदार्थों की तस्करी, बेश्यावृत्ति, जुआ-सट्टा, भू-माफिया आदि कुछ ऐसे अपराध हैं, जिसमें कुछ अपराधी सामूहिक रूप से अपने कार्य को अंजाम देते हैं। इस प्रकार के अपराध करने का मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना होता है। संगठित अपराध में बड़े अनुपात में अपराधी सम्मिलित नहीं होते, लेकिन समाज के लिए यह एक गम्भीर समस्या है, जिसका समाधान होना अति आवश्यक है। इस समस्या से निजात पाने के लिए पुलिस का सहयोग नितान्त आवश्यक है। इसके लिए पुलिस का चौकन्ना रहना जरूरी है, ताकि पुलिस संगठित रूप से अपराध करने वालों को न्यायपालिका के समक्ष प्रस्तुत कर सकें एवं उनको उचित दण्ड के माध्यम से उनके परिणाम तक पहुंचा सकें।

विशेष कार्य दल (एस.ओ.जी.) का गठन एवं भूमिका-

राष्ट्रीय सुरक्षा प्रणाली बाबत गठित भारत सरकार के मंत्री समूह GOM द्वारा प्रत्येक राज्य में संगठित अपराध जैसे आर्थिक अपराध, जाली मुद्रा, अवैध हथियार, अवैध मादक पदार्थ, अपहरण, उद्दापन आदि अपराधों को रोकने के लिए एक विशेष कार्यदल गठित किए जाने की अनुशंसा, इस रूप में की गयी कि संगठित एवं आतंकवादी अपराधों की चुनौती से निपटने के लिए प्रत्येक राज्य के पास समर्पित एवं निरर अनुसंधान अधिकारी, अभियोजक एवं विशेष न्यायालय होने चाहिए। इस अनुशंसा के अनुरूप विशेष कार्यदल गठित करने की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई तथा महानिदेशक पुलिस राजस्थान के आदेश क्रमांक 194 दिनांक 27.01.2003 के द्वारा विशेष कार्यदल की यूनिट सी.आई.डी. क्राईम ब्रांच के अधीन

स्थापित की गई।

राज्य सरकार द्वारा विशेष कार्यदल के गठन हेतु प्रस्ताव मांगे जाने पर विशेष कार्यदल के गठन की अनुशंसा के लिए अतिरिक्त महानिदेशक पुलिस, सी.आई.डी. (अपराध शाखा), राजस्थान, जयपुर के आदेश क्रमांक 1400-1403 दिनांक 18.07.04 के द्वारा महानिरीक्षक पुलिस, विशेष एवं आर्थिक अपराध के नेतृत्व में कमेटी का गठन किया गया। कमेटी ने इस कार्यदल के गठन के सम्बन्ध में महानिदेशक पुलिस, राजस्थान, जयपुर को रिपोर्ट प्रेषित की। उक्त कमेटी के प्रस्ताव के अनुरूप विशेष कार्यदल का गठन किया गया। इसका कार्यालय झालाना महल, जयपुर में स्थापित किया गया। विशेष कार्यदल द्वारा महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल की गईं और प्रक्रिया को सुचारु करने के लिए राज्य सरकार के आदेश क्रमांक एफ-26(7)होम/05 दिनांक 2 अगस्त, 2005 के द्वारा झालाना महल में विशेष कार्यदल द्वारा सीधे मुकदमे दर्ज करने हेतु पुलिस थाने की अधिसूचना जारी की गई, जिसका कार्य क्षेत्र सम्पूर्ण राजस्थान किया गया।

राज्य सरकार की उक्त अधिसूचना के अनुसार उक्त पुलिस थाने को महानिरीक्षक पुलिस, विशेष अपराध एवं आर्थिक अपराध के अधीन किया गया एवं विशेष अपराधों का अन्वेषण विशेष कार्यदल द्वारा किया जाने लगा। यह कार्यदल सी.आई.डी. अपराध शाखा के अंतर्गत कार्यरत रहा। यह थाना आमतौर पर एस.ओ.जी. (Special Operational Group) के नाम से जाना जाता है। राज्य सरकार द्वारा आदेश क्रमांक प.5(2)कार्मिक/क-1/2009 दिनांक 15.01.09 द्वारा अतिरिक्त महानिदेशक पुलिस, एंटी टेररिस्ट स्काड एवं स्पेशल ऑपरेशन्स ग्रुप, राजस्थान का पद सृजित किया गया। तब से यह कार्यदल अतिरिक्त महानिदेशक पुलिस, ए.टी.एस. एवं एस.ओ.जी. के अधीन कार्यरत है।

विशेष कार्य दल के कार्य एवं उत्तरदायित्व

स्थापना के समय एस.ओ.जी. को निम्न कार्य आवंटित किए गए -

1. उन गैंग एवं व्यक्तियों के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करना जो नशा, वन्यजीव, मूर्ति चोरी एवं अन्य सांस्कृतिक विरासत से सम्बन्धित अपराधों में संलग्न हैं।
2. उन गैंग के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करना जो संविदा हत्या (Contract Killing) और फिरौती हेतु अपहरण में सम्मिलित हैं।
3. उन संगठित समूह के सम्बन्ध में सूचना एकत्रित करना जो जाली मुद्रा के अपराधों में संलग्न हैं।
4. उन आपराधिक समूहों की पहचान करना जो राष्ट्रीय एवं राज्य मार्गों पर होने वाले अपराधों में संलग्न हैं।
5. उन आपराधिक समूहों की पहचान करना जो राष्ट्रीय एवं राज्य

मार्गों पर स्थित पेट्रोल पम्पों की लूट एवं डकैती में संलग्न हैं।

6. कुख्यात अपराधियों को चिन्हित करना एवं उनकी गिरफ्तारी करना।
7. उपर्युक्त उल्लिखित आपराधिक समूहों के विरुद्ध जिला पुलिस की सहायता से वैधानिक कार्यवाही करना अथवा उच्चाधिकारियों के आदेशों से ऐसे समूहों के विरुद्ध कार्यवाही करना।
8. उच्चाधिकारियों के आदेशों से, उपर्युक्त उल्लिखित अपराधों एवं आतंकवादी गतिविधियों की जांच करना।
9. बाहरी एजेन्सियों जैसे आई.बी., सी.बी.आई. एवं पड़ोसी राज्यों (दिल्ली, हरियाणा, पंजाब, यू.पी., एम.पी. एवं गुजरात) के पुलिस बलों से परस्पर सामंजस्य रखना।

इसके अतिरिक्त सरकार द्वारा निम्न अतिरिक्त कार्यों को भी एस.ओ.जी. के कार्यों में जोड़ा गया-

1. **भू-माफिया** : समस्त राजस्थान में बड़े पैमाने पर भूमाफिया सक्रिय है, जो लोगों को अपने जाल में फंसा कर धोखाधड़ी करते रहते हैं। स्पेशल ऑपरेशन ग्रुप द्वारा भूमाफियाओं के बारे में जानकारी एकत्रित कर कार्यवाही की जाती है। एस.ओ.जी. द्वारा भूमाफियाओं के खिलाफ कार्यवाही कर 80 अभियोग पंजीबद्ध किए गए हैं।
2. **शराब माफिया** : समस्त राजस्थान में बड़े पैमाने पर शराब माफिया सक्रिय है जो विभिन्न तरीकों से शराब तस्करी एवं अवैध शराब के निर्माण की कार्यवाही करते रहते हैं। इनके बारे में जानकारी एकत्रित कर कार्यवाही एस.ओ.जी. द्वारा की जाती है।
3. **अवैध वसूली माफिया** : राजस्थान के प्रमुख शहरों में बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा अनियमित ऋणों की वसूली करने के लिए बल प्रयोग करने से सम्बन्धित वसूली माफिया सक्रिय है, जिन पर निगरानी रख कार्यवाही की चेष्टा की जाती है।
4. **पेपर लीकेज माफिया** : राजस्थान में पेपर लीकेज माफिया सक्रिय है, जो विभिन्न शैक्षणिक एवं प्रतियोगी परीक्षाओं के परीक्षार्थियों से मोटी रकम लेकर प्रश्न पत्र लीक करते हैं। इस सम्बन्ध में सतत निगरानी की जाती है। एस.ओ.जी. द्वारा कार्यवाही कर 2 अभियोग दर्ज किए हैं।
5. **फर्जी बीमा माफिया** : भारत एवं राजस्थान के विभिन्न शहरों में ट्रेवल एजेंट का कार्यालय खोलकर लोगों का बीजा बनाने के लिए कूटरचित बीमा प्रपत्र बनाकर, विभिन्न दूतावासों से

विदेश भेजने का कार्य करने वाले फर्जी बीमा माफिया के विरुद्ध प्रभावी कार्यवाही की जाती है। अब तक 2 अभियोग पंजीबद्ध कर अपराधियों के विरुद्ध कार्यवाही की गई है।

6. **हथियार माफिया** : राज्य में अवैध हथियारों की बिक्री के सम्बन्ध में सूचनाएं एकत्रित कर प्रभावी कार्यवाही की जाती है। इस संदर्भ में जिला पुलिस को भी समय-समय पर सूचनाएं उपलब्ध कराई जाती हैं।

निष्कर्ष

प्रत्येक समाज, राज्य एवं देश में संगठित अपराधों के भविष्य में होने की सम्भावनाओं को नकारा नहीं जा सकता है किन्तु मनुष्य समाज का अंग है और अपनी असीमित भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति की लालसा में अपने साथ अन्य व्यक्तियों को शामिल कर आपराधिक घटनाओं को अंजाम देता रहेगा। देश, राज्य और समाज की संरक्षा व सुरक्षा के लिए स्थापित विशेष कार्य दलों में नियुक्त अधिकारियों एवं कर्मचारियों को बदलती विकास की गति के अनुरूप तकनीकी रूप से गुणात्मक रूप से प्रशिक्षित किया जाए जिसके लिए सरकार के द्वारा समय-समय पर प्रौद्योगिकी में परिवर्तन के अनुरूप प्रशिक्षण वार्षिक एवं अर्धवार्षिक स्तर दिये जाये ताकि अधिकारी एवं कर्मचारी अन्य किसी व्यक्ति अथवा संस्था पर निर्भर नहीं रहे। प्राथमिक संसाधनों के लिए सरकार द्वारा वित्तीय सहायता वार्षिक स्तर पर उपलब्ध करवाई जावे। साथ ही देश के अन्य राज्यों की पुलिस के साथ उचित समन्वय स्थापित किया जाना आवश्यक है तथा राजनैतिक रूप से उपयुक्त कार्यशील वातावरण उपलब्ध होना प्रासांगिक होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Chande M.B., *The Police in India*, Atlantic, New Delhi, 1997.
2. Gautam, D.N., *What is Wrong with Indian Police ?*, NBO, New Delhi, 1984.
3. Griffith, P., *History of the Indian Police*, Allied, New Delhi.
4. Mathur, K.N., *The Problems of Police in a Democratic Society* RBSA, Jaipur, 1987.
5. Sarolia, Shankar, *Ideas and Issues in Police Administration*, Gaurav, Jaipur, 1989.
6. Sharma, P.D., *Police, Polity and Justice*, Research, Jaipur, 1999.
7. Trilok Nath, *Indian Police in Action*, Super, New Delhi, 1984.

जैसलमेर में उत्पन्न जल संकट का अध्ययन :

जल प्रबंधन की उपेक्षा के परिप्रेक्ष्य में

मीनाक्षी

शोधार्थी, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर



shodhshree@gmail.com

वीरप्रसवनी राजस्थानी धरा की पश्चिमी कुक्षी में स्थित माड धरा में विकसित जैसलमेर राज्य की अपनी विशिष्ट भूमिका रही है। स्वर्णिम सिकता कणों से आच्छादित इस विशाल भू प्रदेश की ऐतिहासिक सरिता युग-युग में नये मोड़ लेती हुई कभी मन्थर तो कभी तीव्र प्रवाह से गतिमान होती सही प्रतीत होती है। भू-वैज्ञानिकी दृष्टि से इस प्रदेश में उपलब्ध पैलोजाइक, मेसोजाइक एवं सौनाजाइक कालीन अवशेष इस प्रदेश की प्रागैतिहासकालीन स्थिति को प्रमाणित करते हैं। इस सामग्री में बाप क्षेत्र से प्राप्त संपीड़ित चट्टानों के आधार वाले बलुमा पाषाण खण्ड इसे तालचिरयुगीन धरा ठहराते हैं तो बलुमा पाषाणों पर उपलब्ध गोल पाषाण पत्तें हिमानी कार्य की साक्षी देती हैं। कतिपय बालुआ पत्थर दो मुद्रा युग की साक्षी देते हैं। ज्यूरसिक चट्टानों के अवशेष इस प्रदेश में ज्यूरसिक सागर के अस्तित्व का संकेत देते हैं तथा साथ ही यह भी ज्ञात होता है कि यह सागर जोधपुर व बीकानेर क्षेत्र के लगभग व्याप्त था। इसी प्रकार कच्छ, जैसलमेर तथा बीकानेर क्षेत्र में उपलब्ध चट्टानें इस क्षेत्र का सम्बन्ध ई औसिन युग से स्थापित करती हैं और प्रमाणित करती हैं कि यह सम्पूर्ण प्रदेश सागर के गर्भ में रहा। इस प्रदेश के जल मग्न रहने के संकेत हमें इस प्रदेश से प्राप्त शंख, सीप, कौड़ी आदि के अर्द्ध पाषाण रुपों (फॉसिल्स) से भी मिलते हैं। इस प्रसंग में रामायण की आख्यायिका प्रस्तुत करना भी समीचीन होगा। रामायण में कहा गया है कि सीताहरण के उपरान्त लंका पर आक्रमणार्थ प्रस्थान करने हेतु राम ने समुद्र से मार्ग देने की प्रार्थना की। अनुनय विनय के उपरान्त भी जब समुद्र ने मार्ग नहीं दिया तो राम क्रुद्ध हो गये एवं समुद्र को साखने के उद्देश्य से धनुष पर बाण चढ़ाया। राम के कोप से भयभीत समुद्र का अधिष्ठाता देव प्रकट हुआ तथा क्षमा याचना करते हुए उसने वानरी सेना के लंग अभियान हेतु पुल की योजना क्रियान्वित करवाने का आश्वासन दिया। राम शान्त हो गये पर उन्होंने बताया कि मेरा अस्त्र अमोघ है। इस पर समुद्र राम से कहने लगा 'हे राम! यहां से उत्तर की ओर मेरा एक अत्यन्त अपवित्र प्रदेश है, जो संसार में द्रुमकुल्य नाम से ठीक उसी प्रकार विख्यात है जैसे आप अपने नाम से विख्यात हैं। वहां भयंकर रूप वाले तथा भयंकर कार्य करने वाले पापी आमीर आदि दस्यू रहते हैं, जो मेरा जल पिया करते हैं। हे राम! मुझे उन पापियों का स्पर्श भी सहा नहीं है। अतः आप अपने इस उत्तम बाण को गिरा कर सफल कीजिये। राम ने समुद्र द्वारा निर्दिष्ट स्थान पर अपना प्रदीप्त बाण गिरा दिया। वह वज्र के समान प्रदीप्त बाण जहां गिरा, वह स्थान उसी दिन में मरुकान्तार के नाम से प्रसिद्ध हो गया।"³

रामायण की उपरोक्त आख्यायिका भी इस तथ्य की पुष्टि करती है कि मरुमण्डल तक समुद्र व्याप्त था। कालान्तर में भूगर्भय परिवर्तनों के परिणामस्वरूप यह भाग कुछ ऊपर उठ गया तथा समुद्र समाप्त हो गया। ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रदेश में विशाल नदियां भी आकर गिरती थीं⁴ और इन नदियों के कारण समुद्र की समाप्ति के उपरान्त भी यह प्रदेश अत्यन्त सरसब्ज था। धीरे-धीरे होने वाले भौगोलिक परिवर्तनों ने इस प्रदेश को शुष्क मरुस्थल में परिणित कर दिया तथा यह थार के रेगिस्तान में समाहित हो गया। इस प्रदेश में प्रवाहित नदियों का यथा स्थान उल्लेख किया जायेगा। इस प्रदेश के समुद्र मुक्त होने के उपरान्त सरसब्ज होने

का संकेत रामायण में भी मिलता है।¹⁵ जब यह प्रदेश आवास योग्य सरसञ्जता से युक्त था उस समय भी यहां आमीर नामक जाति का अस्तित्व अवश्य बना रहा था। आमीरों के इस दस्यू कर्म का उल्लेख कवकुक के घटियाला अभिलेख¹⁶ में भी हुआ है।¹⁷ इससे स्पष्ट है कि इस प्रदेश में आमीर जाति का अस्तित्व रामायण काल से लेकर नवीं शती तक रहा था।

जब यह भूखण्ड सागरीय जल से मुक्त हो गया तब जन निवास हेतु उपयुक्त बन गया तथा यहाँ मानवीय सभ्यता पल्लवित होने लगी। यद्यपि प्रागैतिहासकालीन मानवीय सभ्यता के पुरावशेषों की खोज इस प्रदेश में अद्यावधि नहीं हो पाई है तथापि इस प्रदेश के चारों ओर अवश्य मानवीय सभ्यता पल्लवित हो रही थी। इसके उत्तर-पूर्व में बीकानेर डिबिजन के कालीबंगा के उत्खनन से पूर्व-हड़प्पा कालीन अवशेष मिल चुके हैं।¹⁸ पूर्व में मारवाड़ प्रदेश में लूनी नदी के आस-पास प्रागैतिहासकालीन मानव का अस्तित्व प्रमाणित हो चुका है। पश्चिम में मोहन जो-दड़ों तथा उससे आगे कोटदाजी में मानवीय सभ्यता के उदय के पुरातात्विक अवशेष मिल ही चुके हैं। इस प्रकार जैसलमेर क्षेत्र के चतुर्दिक् जब प्रागैतिहास एवं प्रत्येतिहास कालीन पुरावशेष उपलब्ध हैं। तो उससे सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इस प्रदेश में भी किसी न किसी रूप में जन-जीवन का सूत्रपात अवश्य हो गया था। इन विभिन्न सभ्यता केन्द्रों में किसी न किसी प्रकार का सम्पर्क सूत्र अवश्य रहा था। तथा उस पारिस्परिक सम्पर्क का मार्ग जैसलमेर क्षेत्र से होकर ही रहा होगा। परिणामस्वरूप इस क्षेत्र में भी जन-जीवन का अस्तित्व रहा होगा। फिर सामुद्रिक जल से मुक्ति प्राप्त करने के उपरान्त इस प्रदेश में वह शुष्कता नहीं थी जो हमें आगे चल कर दिखाई देती है। लम्बे समय तक इस देश में नदियाँ भी प्रवाहित होती रही थीं। अतः यह प्रदेश निश्चित रूप से जन-जीवन की आवश्यकताओं से युक्त रहा था फिर दस्यू-कर्म-लिप्त आमीर जाति के अस्तित्व के साहित्यिक एवं पुरातात्विक प्रमाण भी उपलब्ध है, जो इस तथ्य की साक्ष्य देते हैं कि स्थानीय जन-जीवन सम्पन्न था।

इस प्रदेश की भौगोलिक सम्पन्नता एक लम्बे समय तक इस प्रदेश के जन-जीवन को पोषण करती रही लेकिन यह सम्पन्नता स्थायी नहीं रह सकी। यहाँ क्रमशः रेगिस्तान पनपने लगा तथा वायु मण्डल की आद्रता शुष्कता में परिणत होने लगी। इस शुष्कता ने स्थानीय जन-जीवन को कठोर करना आरम्भ किया। जब इस प्रदेश में भी सत्ता की स्थापना हुई, तथा कालान्तर में जैसलमेर की स्थापना हुई, उस समय तक यह सारा प्रदेश गहन रेगिस्तान रूप धारण कर चुका था। इसका यह रेगिस्तान स्वरूप अद्यावधि विद्यमान है।

जैसलमेर प्रदेश में नदियों का नितान्त अभाव रहा है। फिर भी कतिपय बरसाती नदियाँ व नाले अवश्य हैं, जो इस प्रदेश में कृषिगत उपज एवं वनस्पति के सहज उत्पादन में सहयोग देते हैं। इस प्रकार की नदियों में से प्रमुख नदी काकनय अथवा काकनी है। यह नदी ग्राम भोपा से आरम्भ होकर ग्राम सोडा, कोठड़ी आदि के पास से गुजरती

हुई लगभग 38 मील के बाद ग्राम कुलधरा पहुंचती है। यहां से यह नदी दो शाखाओं में विभाजित हो जाती है। इसमें से एक शाखा लगभग आठ-दस मील बहकर बुज (भुज) ग्राम के पास लगभग 18 मील के घेरे वाली झील का रूप ग्रहण कर लेती है। इससे वहां तीन फसलें तैयार की जा सकती हैं, लेकिन कठिनाई यह है कि कम वर्षा होने पर तो झील भती नहीं है और अधिक वर्षा होने पर जल निकासी के अभाव में कृषि की नहीं जा सकती। फिर भी इस प्रदेश में जल सूख जाने पर अच्छी खेती हो जाती है। दूसरी शाखा ग्राम लुद्रवे के आगे के रन में गिरती है, जहां पानी कडवा हो जाने के कारण घास पैदा नहीं होता। अतः इस शाखा पर संवत् 1813 में बांध बंधवा कर इस उद्देश्य से तीसरी शाखा निकलवाई गई थी कि यह नदी घड़तीसर, गुलाब सागर, किशन घाट, रामघाट तथा कल्याणघाट को भरती हुई कानोध के रन में से होकर मोहनगढ़ पहुंचेगी। इससे इस पर साठ-पैंसठ हजार रुपये खर्च किये गये तथा मार्ग के जलाशयों को भी दृढ़ करवाया गया था लेकिन संवत् 1919 (सन् 1862 ई.) में हुई अतिवृष्टि के परिणामस्वरूप सभी बन्धे टूट-फूट गये तथा योजना सफल नहीं हो सकी। तदन्तर संवत् 1935 (सन् 1878 ई.) में टार्न महोदय ने इस क्षेत्र का अध्ययन कर पुनः योजना तैयार की लेकिन योजना अत्यधिक व्यय-साध्य होने के कारण क्रियान्वित नहीं की गयी।¹⁹ इस काकनय के नामकरण के विषय में कहा जाता है कि यहां ब्रह्मा के पुत्र काक ऋषि ने तपस्या की थी अतः यह नदी काकनय के नाम से प्रसिद्ध हुई।²⁰

दूसरी नदी लाठी की नदी है जो मारवाड़ के गांव बैंगटी से आरम्भ होकर ग्राम लाठी के पास पहुंचती है। यहां से ग्राम सूज्या के दक्षिण तथा ग्राम आईता के उत्तर की ओर प्रवाहित होती हुई लगभग 68 मील के अनन्तर मोहनगढ़ के पूर्वी रन में फैल जाती है, जिससे अच्छी खेती हो सकती है लेकिन यह नदी यदा कदा ही चलती है।²¹ इसी प्रकार गोगड़ी नदी देवीकोट परगने के ग्राम छोड़ियां से आरम्भ होकर ग्राम मालीगड़ा के उत्तर में लाठी की नदी में मिल जाती है। ग्राम खहड़े के पथरीले प्रदेश का पानी नदी के रूप में प्रवाहित होता हुआ ग्राम महासर, नेडा, नदवाड़ा, धायसर तथा जावंध के पास से गुजर कर भैरवां ग्राम के बाद दो मील के अन्तर पर गोगड़ी नदी में मिलता है। इस नदी को सूकड़ी नदी कहा जाता रहा है। लेकिन बांधों के अभाव में 28 मील लम्बी इस नदी के जल का उपयोग कृषि कार्य के लिये नहीं किया जा सका। ग्राम आकल के पूर्व में 6 मील के अन्तर पर स्थित मगरे का पानी एक नाले के रूप में बहता हुआ ग्राम आइता के पास लाठी नदी में मिलता है। इस नाले को बांकिया नाला कहा जाता है। इसी प्रकार कुछ और भी नाले हैं जो इस प्रदेश के कतिपय ग्रामों को लाभान्वित करते हुए प्रवाहित होते हैं लेकिन वे अधिक महत्व नहीं रखते।

जलप्रबंधन की उपेक्षा:

आज के नए समाज ने जिस क्षेत्र को पानी के मामले में एक असंभव

क्षेत्र माना है, वहां पुराने समाज ने कहां क्या-क्या संभव है- इस भावना से काम किया। साई 'इतना' दीजिए के बदले साई 'जितना' दीजिए वामे कुटुम समा कर दिखाया।

माटी और आकाश के बदलते रूपों के साथ ही यहां तालाबों के आकार, प्रकार और उनके नाम भी बदल जाते हैं। चारों तरफ मजबूत पहाड़ हों, पानी खूब गिरता हो तो उसे वर्ष भर नहीं, वर्षों तक रोक सकने वाली झीलों का, बड़े-बड़े तालाबों का निर्माण हुआ। ये बड़े काम केवल राज-परिवारों ने ही किए हों, ऐसा नहीं था। कई झील और बड़े-बड़े तालाब भीलों ने, बंजारों ने, चरवाहों ने भी वर्षों की मेहनत से तैयार किए थे।

बहुत से इतिहासकारों ने इस तरह के बड़े कामों को बेगार-प्रथा से जोड़कर देखा है। पर अपवादों को नियम नहीं मान सकते हैं। इनमें से कुछ काम किसी अकाल के दौरान लोगों को थामने, अनाज पहुंचाने और साथ ही बाद में आ सकने वाले किसी ओर अकाल से निपट सकने वाली ताकत जुटाने के लिए किए गए थे तो कुछ अच्छे दौर में और अच्छे भविष्य के लिए पूरे हुए थे।

पानी की आवक पूरी नहीं हो, रोक लेने के लिए जगह भी छोटी हो तो उस जगह को छोड़ नहीं देना है- उस पर तालाब के बड़े कुटुंब की सबसे छोटी सदस्या-नाडी बनी मिलेगी। रेत की छोटी पहाड़ी थली या छोटे से मगरे के आगोर से बहुत ही थोड़ी मात्रा में बहने वाले पानी का पूरा सम्मान करती है नाडी। उसे बह कर बर्बाद नहीं होने देती है नाडी। साधन, सामग्री कच्ची यानी मिट्टी की ही होती है, पर इसका यह अर्थ नहीं कि नाडी का स्वभाव भी कच्चा ही होगा। यहां दो-सौ, चार-सौ साल पुरानी नाडियां भी खड़ी मिल जाएगी। नाडियों में पानी महीने-डेढ़ महीने से सात-आठ महीने तक भी रुका रहता है। छोटे से छोटे गांव में एक से अधिक नाडियां मिलती हैं। मरुभूमि में बसे गांवों में इनकी संख्या हर गांव में दस-बारह भी हो सकती है। जीसलमेर में पालीवालों के ऐतिहासिक चौरासी गांवों में सात सौ से अधिक नाडियां या उनके चिन्ह आज भी देखे जा सकते हैं।

तलाई या जोहड़-जोहड़ी में पानी नाडी से कुछ ज्यादा देरी तक और कुछ अधिक मात्रा में जमा किया जाता है। इनकी पाल पर पत्थर का काम, छोटा-सा घाट, पानी में उतरने के लिए पांच-सात छोटी सीढ़ियों से लेकर महलनुमा छोटी सी इमारत भी खड़ी मिल सकती है।

तलाई वहां भी है, जहां और कुछ नहीं हो सकता। राजस्थान में नमक की झीलों के आसपास फैले-लंबे-चौड़े भाग में पूरी जमीन खारी है। यहां वर्षा की बूंदें धरती पर पड़ते ही खारी हो जाती हैं। भूजल, पाताल, पानी खारा, ऊपर बहने वाला पालर पानी खारा और इन दो के बीच अटका रेजाणी पानी भी खारा। यहां नए नलकूप लगे, हैंडपंप लगे-सभी ने खारा पानी उलीचा। लेकिन ऐसे हिस्सों में भी चार-सौ-पांच सौ साल पुरानी तलाईयां कुछ इस ढंग से बनी मिलेंगी कि वर्षा की बूंदों को खारी धरती से दो चार हाथ ऊपर उठे आगोर से समेट कर

वर्ष-भर मीठा पानी देती हैं।

ऐसी अधिकांश तलाईयां कोई चार सौ साल पुरानी हैं। यह वह दौर था जब नमक का सारा काम बजारों के हाथ में था। बंजारे हजारों बैलों का कारवां लेकर नमक का कारोबार करने इस कोने से उस कोने तक जाते थे। ये रास्ते में पड़ने वाले गांवों के बाहरी हिस्सों में पड़ाव डालते थे। उन्हें अपने पशुओं के लिए भी पानी चाहिए था। बंजारे नमक का स्वभाव जानते थे कि वह पानी में घुल जाता है। वे पानी का भी स्वभाव जानते थे कि वह नमक को अपने में मिला लेता है-लेकिन उन्होंने इन दोनों के इस घुल-मिल कर रहने वाले स्वभावों को किस चतुराई से अलग-अलग रखा-यह बताती है सांभर झील के लंबे-चौड़े खारे आगोर में जरा सी ऊपर उठ कर बनाई गई तलाईयां।

बीसवीं सदी की सब तरह की सरकारें और इक्कीसवीं सदी में ले जाने वाली सरकार भी ऐसे खारे क्षेत्रों के गांवों के लिए मीठा पानी नहीं जुटा पाई। पर बंजारों ने तो इस इलाके में नमक खाया था-उन्हीं ने इन गांवों को मीठा पानी पिलाया है। कुछ बरस पहले नई-पुरानी सरकारों ने इन बंजारों की तलाईयों के आसपास ठीक वैसी ही नई तलाई बनाने की कोशिश की पर नमक और पानी के 'घुल-मिल' स्वभाव को वे अलग नहीं कर पाई।

पानी और उसे रोक लेने की जगह और ज्यादा मिल जाए तो फिर तलाई से आगे बढ़ कर तालाब बनते रहे हैं। इनमें वर्षा का पानी अगली वर्षा तक बना रहता है। नई भागदौड़ के कारण पुराने कुछ तालाब नष्ट जरूर हुए हैं पर आज भी वर्ष भर भरे रहने वाले तालाबों की यहां कमी नहीं है। इसीलिए जनगणना करने वालों को भरोसा तक नहीं होता कि मरुभूमि के गांवों में इतने सारे तालाब कहां से आए हैं। सरकारें अपनी ऐसी रिपोर्ट में यह बतलाने से कतराती हैं कि इन्हें किसने बनाया हैं। यह सारा प्रबंध समाज ने अपने दम पर किया था और इसकी मजबूती इतनी कि उपेक्षा के इस लंबे दौर के बाद भी यह किसी न किसी रूप में आज भी टिका है और समाज को भी टिकाए हुए हैं।

मरुभूमि में पानी कितना भी कम बरसता हो, घड़सीसर का आगोर अपने मूल रूप में इतना बड़ा था कि वह वहां बरसने वाली एक-एक बूंद को समेट कर तालाब को लंबालंब कर देता था। घड़सीसर के सामने पहाड़ पर बने ऊंचे किले पर चढ़ कर देखें या नीचे आगोर में पैदल घूमे, बार-बार समझाए जाने पर भी इस तालाब में पानी लाने का पूरा प्रबंध आसानी से समझ में नहीं आता। दूर क्षितिज तक से इसमें पानी आता था। विशाल भाग के पानी को समेट कर उसे तालाब की तरफ मोड़ कर लाने के लिए कोई आठ किलोमीटर लंबी आड़, यानी एक तरह की मेड़बंदी की गई थी। फिर इतनी मात्रा में चले आ रहे पानी की ताकत को तोला गया था और इसकी टक्कर की मार को कम करने के लिए पत्थर की चादर यानी एक लंबी मजबूत दीवार बनाई गई थी। पानी इस पर टकरा कर अपना सारा वेग

तोड़ कर बड़े धीरे-धीरे के साथ घड़सीसर में प्रवेश करता है। यह चादर न होती तो घड़सीसर का आगार, उसके सुंदर घाट-सब कुछ उखड़ सकता है।

फिर इस तरह लबालब भरे घड़सीसर की रखवाली नेष्टा के हाथ आ जाती है। नेष्टा यानी तालाब का वह अंग जहां से उसका अतिरिक्त पानी तालाब की पाल को नुकसान पहुंचाए बिना बाहर बहने लगता है। नेष्टा चलता है और इतने विशाल तालाब को तोड़ सकने वाले अतिरिक्त पानी को बाहर बहाने लगता है। लेकिन यह 'बहाना' भी बहुत विचित्र था। जो लोग एक-एक बूंद एकत्र कर घड़सीसर भरना जानते थे, वे उसके अतिरिक्त पानी को केवल पानी नहीं, जलराशि मानते थे। नेष्टा से निकला पानी आगे एक और तालाब में जमा कर लिया जाता था। नेष्टा तब भी नहीं रुकता तो इस तालाब का नेष्टा भी चलने लगता। फिर उससे भी एक तालाब भर जाता। यह सिलसिला-आसानी से भरोसा नहीं होगा-पूरे नौ तालाबों तक चलता रहता। नैताल, गोविंदसर, जोशीसर, गुलाबसर, भाटियासर, सूदासर, मोहतासर, रतनसर और फिर किसनघाट। यहां तक पहुंचने पर भी पानी बचता तो किसनघाट के बाद उसे कई बेरियों में, यानी छोटे-छोटे कुण्डों में भर कर रख दिया जाता। पानी की एक-एक बूंद जैसे शब्द और वाक्य घड़सीसर के किसनघाट तक के 6.5 मील लंबे क्षेत्र में अपना ठीक अर्थ पाते थे।

निष्कर्ष:

लेकिन आज जिनके हाथ में जैसलमेर है, राज है, वे घड़सीसर का अर्थ ही भूल चले हैं तो उसके नेष्टा से जुड़े नौ तालाबों की याद उन्हें भला कैसे रहेगी। घड़सीसर के आगार में वायुसेना का हवाई अड्डा बन गया है। इसलिए आगार के इस हिस्से का पानी अब तालाब की ओर न आकर कहीं ओर बह जाता है। नेष्टा ओर उसके रास्ते में पड़ने वाले नौ तालाबों के आसपास भी बेतरतीब बढ़ते शहर के मकान, नई गृह निर्माण समितियां, और तो और पानी का ही नया काम करने वाला इंदिरा नहर प्राधिकरण का दफ्तर, उसमें काम करने वालों की कॉलोनी बन गई है। घाट, पठसाल (पाठशालाएं), रसोई, बारादरी, मंदिर ठीक सार-संभाल के अभाव में धीरे-धीरे टूट चले हैं। आज शहर उल्हास का वह खेल भी नहीं खेलता, जिसमें राजा-प्रजा सब मिलकर घड़सीसर की सफाई करते थे, गाद निकालते थे। तालाब के किनारे स्थापित पत्थर का जलस्तंभ भी थोड़ा-सा हिलकर एक तरफ झुक गया है। रखवाली करने वाली फौज की टुकड़ी के बुर्ज के पत्थर

भी ढह गए हैं।

घाट की बारादरी पर कहीं-कहीं कब्जे हो गए हैं। पाठशालाओं में, जहां कभी परंपरागत ज्ञान का प्रकाश होता था, आज कचरे का ढेर लगा है। जैसलमेर पिछले कुछ वर्षों से विश्व के पर्यटन नक्शे पर आ गया है। ठंड के मौसम में-नवंबर से फरवरी तक यहां दुनिया भर के पर्यटक आते हैं और उनके लिए इतना सुंदर तालाब एक बड़ा आकर्षण है। इसीलिए दो वर्ष पहले सरकार का कुछ ध्यान इसय तरफ गया था। आगार से पानी की आवक में आई कमी को इंदिरा गांधी नहर से पानी लाकर दूर करने की कोशिश भी की गई। बाकायदा उद्घाटन हुआ इस योजना का। पर एक बार की भराई के बाद कहीं दूर से आ रही पाइप लाइन टूट-फूट गई। फिर फिर उसे सुधारा नहीं जा सका। घड़सीसर अभी भी भरता है, वर्षों के पानी से।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. राजस्थान जिला गजेटियर : जैसलमेर : पृष्ठ 25; नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ साइन्स ऑफ इण्डिया, न्यू देहली द्वारा प्रकाशित 'प्रॉसिडिन्स ऑफ दी सिम्पोजियम ऑन दी राजस्थान डेजर्ट', सितम्बर 1952, पृष्ठ 22-23.
2. ओझा निबन्ध संग्रह भाग 1, पृष्ठ 26, पाद टिप्पणी 4;
3. रामायण, युद्ध काण्ड, एकविंश सर्ग, श्लोकांक 31-35.
4. ओझा निबन्ध संग्रह, भाग 1, पृष्ठ 26-27; अनुमान है कि वैदिक नदियां सरस्वती दूराद्वती भी इस प्रदेश के कुछ भाग को जल प्लावित करती थीं।
5. रामायण युद्ध काण्ड, एकविंश सर्ग, श्लोकांक 40-41.
6. डॉ. मयंक : राजस्थान के अभिलेख, पृष्ठ 2.
7. रोहितकूषक ग्राम : पूर्वमासीदनाश्रयः। असेव्यः साधु लोकानां आमीर जन दारुणः।।211
8. दृष्टव्य इण्डियन आर्कियोलोजी, 1960-61, पृष्ठ 31-32, 1962-63, पृष्ठ 20-31, रिसर्च भाग 1, पृष्ठ 37, भाग 2, पृष्ठ 36, राजस्थान थ्रू द एजेज, पृष्ठ 39-40.
9. तवारीख, पृष्ठ 205-6.
10. वही, पृष्ठ 206.
11. वही,

अजमेर के तीर्थराज पुष्कर का ऐतिहासिक अध्ययन : वर्तमान संदर्भ में

रुखमणी

शोधार्थी, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर



shodhshree@gmail.com

अरावली पर्वत श्रेणी से घिरा हुआ अजमेर नगर 26°27' उत्तरी अक्षांश एवं 74°37' पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। यह अहमदाबाद से 490 किलोमीटर, बम्बई से 982 किलोमीटर, आगरा से 378 किलोमीटर, तथा दिल्ली से भी 378 किलोमीटर दूर स्थित है। अजमेर का सबसे पुराना नगर तारागढ़ दुर्ग के भीतर स्थित था। इसके आस-पास की पहाड़ियों से चावण्डा, अगस्ताजी, गौकुण्ड, पंचकुण्ड तथा कनवाई नामक पहाड़ी धारयें निकलती हैं। चश्मा अन्तेद की माता तथा बैज से बरसाती झरने बहते हैं। इसके आस-पास आनासागर, बीसलसागर तथा फॉय सागर नामक कृत्रिम झीलें हैं। इन सबको मिलाकर अजमेर नगर का दृश्य बड़ा सुन्दर दिखाई पड़ता है। जब पुष्कर घाटी से अजमेर नगर के लिये उतरते हैं तो इस नगर की सुन्दरता देखते ही बनती है। रात्रि में आनासागर झील में जब नगर का प्रकाश झिलमिलाता है तब इस नगर का सौंदर्य अपने यौवन पर होता है। चन्द्रमा की ज्योत्स्ना में नहाई हुई आनासागर की श्वेत छतरियों की झिलमिल आकृतियां इस झील के निर्माता अणोरज और इन छतरियों के निर्माता शाहजहां के समय की कहानियां कहती हैं। इस झील के दर्शन करके सर टॉमस रो, विलियम बेटिक और इंग्लैण्ड की महारानी मैरी ने अपना जीवन धन्य माना था। आकाश की छाती बेधकर अपना तारागढ़ नाम सार्थक करने वाले दुर्ग में आज भी अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान और साम्राज्ञी संयोगिता के प्रणयालाप गूँजते हैं। विग्रह राज के नाटक इरकेलि, सोमदेव के नाटक ललित विग्रह राज और कवि चन्द बरदाई का कवित्त, राणा कुंभा की पदचापें, राठौड़ मालदेव, अजीत सिंह तथा वीर दुर्गादास के घोड़ों की टापें आज भी यहां की हवा में सुनाई देती हैं।

इस दुर्ग ने मुहम्मद गौरी के बहरी कारनामे, शेरशाह सूरी के उत्थान और पतन की दास्तानें, अकबर की पद यात्रायें, जहांगीरी न्याय के दकोसले, शाहजहां और औरंगजेब के कठोर कारनामों, द्वारा शिकोह और (औरंगजेब के पुत्र) अकबर की शिकस्तें अपनी पथरीली आंखों से देखी हैं। घोड़े पर चढ़कर गांव-गांव घूमता हुआ और यहां की माटी के स्वर्णों का आनन्द लेता हुआ कर्नल टॉड आज भी याद है अजमेर को। कर्नल डिकसन और कर्नल सदर लैण्ड के स्रेडशील हाथों की सुगन्ध आज भी अजमेर के स्थापत्य और संस्कृति में रची-बसी हैं।

आर्य समाज के संस्थापक और हिन्दू धर्म के प्रतापी रक्षक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अण्जेजी रंग में रचे बसे अजमेर को अलौकिक सुगन्ध प्रदान की। उनके अनुयायियों के यज्ञ कुण्डों से निकले सुवासित धूम की चर्चा इस सभ्यता के अस्तित्व में रहने तक बनी रहेगी। विजय सिंह पथिक और उनके साथियों को भी यह अजमेर कैसे भुला सकता है। यहां का राजकीय महाविद्यालय राजस्थान का सबसे पुराना महाविद्यालय है। यहां के दयानन्द महाविद्यालय के कृषि स्नातक पूरे भारत में प्रसिद्ध रहे हैं। दयानन्द विद्यालय का छात्र हरगोविन्द खुराना तो पूरी दुनिया में जाना जाता है जिसे विज्ञान की नई उपलब्धियों के लिये नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सुप्रसिद्ध कथा लेखिका मन्नू भण्डारी और इस पुस्तक के विनम्र लेखक को भी

अजमेर की सड़कों ने नहीं भुलाया है। स्थापत्य की दृष्टि से तो अजमेर भारत की सबसे समृद्ध नागरियों में से एक है। इस जिले में राष्ट्रीय महत्व के आठ स्मारकों एवम् प्रान्तीय महत्व के 40 स्मारकों का संरक्षण क्रमशः भारत सरकार एवं राज्य सरकार द्वारा किया जाता है।

तीर्थराज पुष्कर

अजमेर नगर से लगभग 13 किलोमीटर दूर अरावली पर्वत की नाग पहाड़ियों की तलहटी में स्थित तीर्थराज पुष्कर हिन्दुओं का सबसे बड़ा तीर्थ है। यह तीर्थ राज प्रयाग का गुरु कहा जाता है। महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण, भगवान वेद व्यास द्वारा रचित आध्यात्म रामायण तथा महाभारत, पद्य पुराण, हरिवंश, स्कन्ध पुराण, कूर्म पुराण, नृसिंह पुराण, वायु पुराण, श्रीमद् भागवत, व्यास स्मृति, शंख स्मृति, रुद्रायमल, व्रतराज, दान चन्द्रिका, पंच रत्न यहां तक कि वेदों (यजुर्वेद) में भी इस प्राचीन तीर्थ का वर्णन हुआ है। विभिन्न पौराणिक ग्रन्थों में पुष्कर के 108 नाम बताये गये हैं।

पद्य पुराण के सृष्टि खण्ड में पुष्कर को अन्य सभी तीर्थों में श्रेष्ठ बताया गया है :

पुष्कराध्यानि सिद्धानि न विद्यतत्र कारणम्॥

पर्वतानां यगी मेरुः पक्षिणां गरुडो यथा।

तद्वत्तसमस्त तीर्थानां माघं पुष्कर मिष्यते॥8॥

अनादि मेतद्वि प्रेन्द्रा पुष्करं तीर्थं मुत्ततम्।

पुरा पृष्टेन देवानामिदं मुक्त स्वयं भुवा॥9॥

अर्थात् पर्वतों में जिस प्रकार मेरु, पक्षियों में गरुड़ श्रेष्ठ है, उसी प्रकार तीर्थों में सर्वश्रेष्ठ पुष्कर है। यजुर्वेद में पुष्कर का उल्लेख इस प्रकार हुआ है-

पुरीष्वोसि विश्रवम्भराऽअथर्वात्वात्प्रथमो निरमन्थ दग्ने॥

त्वामग्ने पुष्करादद्दयत्वात्प्रथमो निरमन्थत।

मूर्द्धनो विश्रवस्य व्याघत॥32॥

महाभारत के वन पर्व (अध्याय 82) में भी तीर्थराज पुष्कर के महत्व पर प्रकाश डाला गया है-

नृ लोके देव देवस्य तीर्थं त्रलोक्याविश्रुतं।

पुष्कर नाम विख्यात महाभाग समा विशेत॥20॥

दश कोटि सहस्राणि तीर्थानां पौ महामन्ते।

सानिध्यं पुष्करे पेथा निसंध्या कुरुनन्दन॥21॥

अर्थात् मानव लोक में देवी-देवताओं का पुष्कर तीर्थ तीनों लोकों में विख्यात है। जिनका तीनों संध्या में पुष्कर में सानिध्य होता है, उसे दश कोटि सहस्र तीर्थों का माहात्म्य प्राप्त होता है। तीर्थराज पुष्कर इस धरा पर वह पावन स्थली है जिसके अंचल में ऋषियों, मुनियों

और तपस्वियों ने युगों तक चिन्तन, मनन और तपस्यसा की है।

कहते हैं मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम ने पुष्कर की पावन झील में अपने स्वर्गवासी पिता राजा दशरथ का पिण्ड तर्पण किया। अज्ञातवास की अवधि में पाण्डवों ने सुरम्य नाग पर्वत माला में कुछ समय व्यतीत किया। अगस्त भर्तृहरि, कण्व, विश्वामित्र आदि ऋषियों की भी यह तोपभूमि रही। वाल्मीकि रामायण के 61वें सर्ग में दक्षिण दिशा में तप के दौरान असुरों द्वारा विघ्न डाले जाने से व्रत होकर ऋषि विश्वामित्र द्वारा पश्चिम दिशा में आकर तप करने का उल्लेख मिलता है, ऋषि विश्वामित्र कहते हैं-

‘पश्चिमायां विशालायां पुष्करेषु महात्मनः।

मुखं तपश्चरिष्यामो वरं तद्धि तपोवनम्॥3॥

एवमुक्तवा महातेजा पुष्करकेषु महा मुनिः।

तप उग्र दुराघर्षं तेपे मूल फला शनः॥4॥

विशाल पश्चिम दिशा में जहां पुष्कर आनन्द तीर्थ है और उसके निकट बहुत अच्छे तपोवन है, वही जाकर मैं शान्ति पूर्वक तप करूंगा। अग्नि पुराण पुष्कर की यात्रा दुष्प्राप्य बताया है-

पुष्करम् दुष्करम् तीर्थम् पुष्करम् तपः।

पुष्करम् दुष्करम् दानम् गन्तुचेव सुदुष्करम्॥

अर्थात् पुष्कर एक दुष्कर तीर्थ है। पुष्कर में तप करना दुर्लभ है। पुष्कर में दान करना और वहां की यात्रा भी दुष्कर है। पद्य पुराण में लिखा है- पुष्कर में प्रातःकाल मध्याह्न और सायंकाल तीनों सन्ध्याओं में दस हजार करोड़ तीर्थ उपस्थित करते हैं, जो मन से भी पुष्कर तीर्थ के सेवन की इच्छा रखता है, उस मनस्वी के सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। बद्रीनाथ, द्वारिका, पुरी और रामेश्वरम् (चार धाम) की यात्रा का पुण्य फल तब तक नहीं मिलता, जब तक पुष्कर के सरोवर में स्नान नहीं कर लिया जाता।

ब्रह्माजी का यज्ञ

जगतपिता ब्रह्मा ने देवताओं और ऋषियों की उपस्थिति में कार्तिक शुक्ला एकादशी से पूर्णमासी तक सृष्टि रचना हेतु पुष्कर में महान यज्ञ सम्पन्न किया। पद्य पुराण के अनुसार कथा इस प्रकार है- ब्रह्माजी ने इस यज्ञ हेतु उपयुक्त स्थल के चयनार्थ कमल पुष्प फेंका, जो पुष्कर में गिरा और तीन स्थानों पर टकराया, जहां से जल प्रस्फुटित हुआ वे तीनों स्थान आज भी ज्येष्ठ पुष्कर, मध्य पुष्कर और कनिष्ठ पुष्कर (बूढ़ा पुष्कर) कहलाते हैं। मुख्य पुष्कर (ज्येष्ठ पुष्कर) से दो मील की परिधि में ही शेष दोनों पुष्कर हैं। शास्त्रोक्त विधि से यज्ञ के लिए ब्रह्माजी ने पत्नी सावित्री को बुलावा भेजा जो नारदजी के कथन का गलत अर्थ लगाने से समय पर नहीं पहुंच पाई। तब ब्रह्माजी के आदेश पर इंद्र ने एक ग्वाल कन्या को गाय के मुंह से पवित्र करके उसे गायत्री नाम देकर ब्रह्माजी की पत्नी के रूप में यज्ञ में बैठा दिया।

सावित्री ने अपने स्थान पर गायत्री को देखा तो ब्रह्माजी सहित गायत्री को शाप देकर स्वयं रुष्ट होकर निकटवर्ती पहाड़ी पर जा बैठी। उक्त महान यज्ञ की स्मृति में अनन्तकाल से पुष्कर में कार्तिक शुक्ला एकादशी से पूर्णमासी तक विशाल धार्मिक मेला और कुछ सदियों से एक बड़ा पशु मेला भी लगता है। प्रतिवर्ष हजारों तीर्थ यात्री व देशी-विदेशी पर्यटक यहां आते हैं।

अन्य स्रोतों के अनुसार ब्रह्माजी ने पुष्कर में बड़ा यज्ञ किया जिसके चारों तरफ पहरेदारों के रूप में चार पहाड़ियां रत्ना-गिरि, नील गिरि, कुच्छतुरंगिरि व सोन्चीरा खड़ी की जो दुष्ट शक्तियों को यज्ञ से दूर रख सकें। पूरे ब्रह्माण्ड के देवी-देवताओं को आमन्त्रित किया गया। जब यज्ञ आरम्भ हुआ तो सावित्री का कहीं पता नहीं चल सका और इस कारण एक ग्वालिन ने उनका स्थान ले लिया। इससे बहुत बवेला मचा। सोमरस में डूब रहे शिवजी को यज्ञ की पवित्र-अग्नि बुझाने का कार्य सौंपा गया मगर भोले नाथ को होश नहीं था। जब यज्ञ-अग्नि समस्त संसार को निगलने लगी तब ब्रह्माजी ने स्वयं रेत फेंक कर यज्ञ-अग्नि बुझाई जिससे चारों ओर रेत के टीले बन गये।

इस सरोवर के चारों तरफ 52 घाट हैं जहां बैठकर स्त्री-पुरुष इसके पवित्र जल में स्नान कर पुण्य प्राप्त करते हैं। मान्यता है कि नाग कुण्ड समृद्धि का, रूप-तीर्थ सुन्दरता का, कपिल बापी कुण्ड कुष्ठ निवारण का तथा मार्कण्ड मुनि कुण्ड ज्ञान का प्रतीक है। पुराणों में महर्षि विश्वामित्र द्वारा पुष्कर में तपस्या करना, रूपवती अप्सरा मेनका का यहां स्नान करने आना तथा विश्वामित्र का उसके प्रति मोहित होने का उल्लेख मिलता है। दैवयोग से मेनका पुष्कर में स्नान करने आई और उसे स्नान करते समय बादलों में विद्युत की भांति दैदीप्यमान देखकर विश्वामित्र काम के बशीभूत हो गये। इसी प्रकार महाभारत में श्री कृष्ण द्वारा पुष्कर में तपस्या, अर्जुन द्वारा सुभद्रा हरण के बाद पुष्कर में विश्राम तथा पांडवों द्वारा वनवास काल में पुष्कर स्नान व अन्य प्रसंगों में भी पुष्कर तीर्थ का उल्लेख मिलता है।

पुष्कर से ईसा से पांचवी-छठी शताब्दी पूर्व के सिक्के व अवशेष भी मिले हैं। भोपाल के पास सांची के स्तूप में ईसा से पूर्व दूसरी सदी के शिलालेखों से पता चलता है कि बौद्ध भिक्षु अर्हदीन, नागरक्षित, आर्य बुद्ध रक्षित, हिमिगिरि पुष्कर और इसीदता ने पुष्कर से आकर बौद्ध तीर्थ सांची में दान किया। नासिक के पास भिरिचम पहाड़ियों की गुफा में मिले 125 ई० के शिलालेख के अनुसार शक राजा दिनिका के पुत्र उपावदात ने पुष्कर तीर्थ की यात्रा की ओर वहा 3000 गायें व एक गांव दान में दिया। 225 ई. नांदसा (उदयपुर राज्य) के शिलालेख में उल्लेख मिलता है कि नांदसा तालाब की पवित्रता पुष्कर झील के समान है।

पुष्कर ने अनेक उतार-चढ़ाव देखे। हूणों के अछक्रमण के कारण पांचवी सदी में पुष्कर को क्षति पहुंची। प्रतिहार राजा नागभट्ट ने इसका जीर्णोद्धार कराया। सरोवर की खुदाई करवाई और किनारे के

घाट बनवाये। कहते हैं शिकार पर आये नाहड़राव (नागभट्ट) को छोटे से गड्डे के पानी का स्पर्श करने पर कुछ रोग से मुक्ति मिली। उसने यहां झील खुदवाई व कार्तिक पूर्णिमा स्नान किया। चौहानों के समय पृथ्वीराज विजय, हम्मीर महाकाव्य, सुर्जन चरित्र आदि में भी पुष्कर का उल्लेख मिलता है। पृथ्वीराज प्रथम 1105 ई. में सांभर पर राज्य करता था। उसने सात सौ चालुक्यों को मार दिया जो पुष्कर में ब्राह्मणों को लूटने आये थे। कश्मीर के कवि जयानक ने पुष्कर में रहकर पृथ्वीराज विजय लिखा जिसमें पुष्कर तीर्थ व ब्रह्मा मंदिर की महिमा लिखी है। अर्णोराज ने भी पुष्कर की मरम्मत करवाई व वराह मंदिर बनवाया। जैनियों ने इसे पद्यावती नगरी कहा है।

पुष्कर मेला

पुष्कर मेला धार्मिक मेले के साथ-साथ पशु मेले के रूप में भी भरता है। कार्तिक एकादशी के पहले दिन से ही लोगों का पड़ाव बालू रेत के टीलों पर लगने लगता है जो धीरे-धीरे मेले के रूप में परिवर्तित हो जाता है। लाखों की तादाद में लोग उंटों के काफिलों के साथ बालू रेत के टीलों पर पसरने लगते हैं जो एक अस्थायी गांव का रूप ले लेता है। कार्तिक पूर्णिमा के दिन मेला अपने यौवन पर चढ़ता है। प्रातः काल से पुष्कर सरोवर में स्नान आरम्भ हो जाता है, जो दिन-भर चलता है। लोग स्नान करके भगवान् ब्रह्मा के दर्शन करते हैं तथा विशाल जन-समूह के रूप में मेला मैदान पर पहुंचते हैं। रंग-रंगीले परिधानों में सजे-संबरे लोगों की सतरंगी आभा चारों ओर बिखर जाती है। ग्रामीण पुरुष अंगरखी व पाग-पगड़ी तथा महिलाएं परम्परागत रंग-रंगीली राजस्थानी ओढ़नी पहनकर, बन-संवरकर आती हैं। विदेशी लोग भी इनको देखकर मारवाड़ी वस्त्र धारण करके सजते-संवरते हैं। पशुओं को सजाने के लिए मूंगे जड़ित चमड़े के बैल्ट, रंगीन पट्टे से बन्धी पीतल की घण्टी, कपड़े की बनी आकर्षक झूल तथा रेशमी व सूती रस्सी काम में लेते हैं। उंटों की खरीद प्रमुख रूप से की जाती है। लोग दूर-दूर से उंट खरीदने व बेचने आते हैं।

पुष्कर : बीता हुआ काल और आज की वास्तविकता

महर्षि विश्वामित्र ने गायत्री मंत्र की रचना पुष्कर में की थी। आचार्य भरत ने अपना 'नाट्य शास्त्र' भी यहीं लिखा था। जमदाग्नि ऋषि और अगस्त्य मुनि ने यहां तपस्या की। भगवान राम, कृष्ण तथा पाण्डव यहां आये। तपस्या, धर्म एवं साहित्य सृजन की इस परम्परा ने ही पुष्कर में कार्तिक माह में एकादशी से पूर्णिमा तक सांस्कृतिक मेले को जन्म दिया। ई.पू. दूसरी-तीसरी शताब्दी से लेकर बारहवीं सदी तक पुष्कर में केवल सांस्कृतिक मेला भरता था। कार्तिक माह की एकादशी से पूर्णिमा तक यहां देश भर के विद्वानों की घूम मची रहती थी। जमकर शास्त्रार्थ होता था। नये ग्रन्थों पर चर्चा होती थी। आयुर्वेद के अद्भुत योगों और औषधियों पर मोष्ठियां होती थीं। देश के प्रख्यात आचार्य, साहित्यकार, शिल्पी और कलाकार एकत्र होते थे। इस पांच दिवसीय सांस्कृतिक मेले का खर्च अजमेर के राजा उठाते

थे। जैन राजा इन्द्रसेन या पदमसेन ने भी इस परम्परा को पुष्ट किया था। प्राचीन पुष्कर ब्राह्मणों, पण्डितों, जैन आचार्यों एवं बौद्ध भिक्षुओं के आकर्षण का केन्द्र था। शंकराचार्य, जिनसूरी, जिनवल्लभ सूरी, हिमगिरी आदि विद्वानों के नाम पुष्कर के साथ जुड़े हुए हैं। भिक्षुक हिमगिरी पुष्कर ने वाराणसी के विद्वानों को शास्त्रार्थ में हराया था। यहां का मिहिरगिरि नामक भिक्षुक कनिष्क के दरबार में सम्मानित हुआ था। हिमगिरी, आर्य बुद्ध रक्षित व तिष्य, रक्षिता ने वाराणसी में विपुल राशि का दान किया था। बड़ली व नासिक से प्राप्त शिलालेखों से ज्ञात होता है कि पुष्कर का एक अन्य नाम 'कोकण तीर्थ' भी था। चौहान राजा अणोरारज के शासनकाल में यहां विशाल पैमाने पर शास्त्रार्थ हुआ था जिसमें चौहान नरेश ने तीन करोड़ 'पसाव' का दान किया था। शास्त्रार्थ में जिनसूरी और जिन वल्लभ सूरी ने भी भाग लिया था। चौहान नरेश पृथ्वीराज तृतीय की पराजय के बाद पुष्कर की परिस्थितियां एकदम बंद गईं। दिल्ली सल्तनत काल में सांस्कृतिक मेले का सिलसिला रुक गया। बारहवीं, तेरहवीं, चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी में यह मेला कार्तिक स्रान तक सीमित रह गया। मुगल बादशाह जहांगीर 1613 से 1616 ई. तक अजमेर में रहा। मुगल सेना में युद्ध के लिए घोड़ों की बढ़ती मांग के कारण उस ने पुष्कर के कार्तिक मेले को पशु मेले का रूप दिया। ई. 1615 के पशु मेले में यहां घोड़ों की सर्वाधिक बिक्री हुई। सत्रहवीं सदी के उत्तरार्द्ध तक यह पशु मेला दूर-दूर तक विख्यात हो गया। मराठा काल में (1650 से 1818 ई. तक) अजमेर व पुष्कर में लगभग पचास युद्ध हुए जिनके कारण यह पशु मेला नहीं चल पाया। ई. 1818 के बाद अंग्रेजी शासनकाल में पशु मेले ने पुनः जोर पकड़ा। अंग्रेजों ने पुष्कर घाटी वाली सड़क भी बनवा दी अतः मेले की रौनक बढ़ने लगी।

द्वादशक पूर्व भारत स्थित अमरीका का राजदूत अजमेर प्रवास के दौरान पुष्कर आया। वह पुष्कर में हजारों तीर्थयात्रियों को रंग-बिरंगे राजस्थानी परिधानों में देख कर भाव विभोर हो गया। अपने मोटरों के काफिले को स्थान-स्थान पर रोक कर साथ चल रहे लोगों की सहायता से उसने ग्रामीणों से बातचीत की तथा उनके परिधानों व महिलाओं के जेवरों के खूब फोटो खींचे। राजस्थानी वाद्य को कौतूहल से सुना। मेला क्षेत्र में मार्ग के दोनों ओर जमीन पर लगी ग्रामीण वस्तुओं की दुकानों पर खूब खरीददारी की। इत अवसर पर लगे पशु मेले को देखकर वह आश्चर्यचकित हो गया। मेले के बाहरी क्षेत्र में खुले मैदान पर सैकड़ों परिवारों को खाना बनाते देखा। उसने बैलगाड़ियों में गीत गाते हुए आ रहे महिलाओं के झुंडों से पूछा कि वह कहां से आ रही है और पुष्कर के अन्दर के क्षेत्र में स्थान-स्थान पर मंडलियों के कीर्तन को सुना। दिल्ली लौटने पर उसने 'डिप्लोमैटिक क्लब' के भोज में राजनायिकों से कहा कि यदि वे भारतीय ग्रामीण जीवन के विभिन्न पहलुओं का दर्शन करना चाहते हैं तो मोटर से छः घंटे में पहुंचकर पुष्कर मेले में कर सकते हैं। उसने अपने सम्पर्क में आए सभी विदेशियों को पुष्कर मेला देखने की सलाह दी। इसके बाद

पुष्कर मेला देखने के लिए राजनायिकों व पर्यटकों की भीड़ शुरू हो गई। अजमेर में उन दिनों अच्छे होटल नहीं थे। अतः 1976 में अजमेर रेलवे स्टेशन पर कुछ डिब्बे खड़े करके उनके ठहरने की व्यवस्था की गई।

पर्यटन विभाग ने पुष्कर में जयपुर घाट पर जयपुर रियासत द्वारा बनवाया गया अतिथि गृह 'मान भवन' लेकर 'सरोवर पर्यटक विश्रामगृह' शुरू किया। इसमें 24 कमरों की तथा डोर्समेंटरी में 81 परलंगों की व्यवस्था है। यह जगह कम पड़ने पर मेलास्थल के समीप वर्ष 1979 में पर्यटन ग्राम स्थापित कर टेन्टों में ठहराने की व्यवस्था की गई। पर्यटन ग्राम में बैंक, डाकखाना आदि की भी व्यवस्था की जाती है। पर्यटन निगम ने इक्कीस रिचेज कोटेज बनाई हैं। प्रत्येक में शयन कक्ष, ड्राइंग रूम व डार्निंग रूम भी हैं। इनके अलावा मेला ग्राउंड के पास गोबर से लिपी पच्चीस स्थाई झोपड़ियां भी बनाई है। इनमें भी आधुनिक सुविधाएं उपलब्ध हैं। मेले के अवसर पर कुछ निजी होटल कम्पनियां भी मेला ग्राउंड के पास विदेशी पर्यटकों के लिए सुविधायुक्त तम्बू लगाती हैं। विदेशी पर्यटक अब वर्ष भर आने लगे हैं। इससे इस शान्ति तीर्थस्थली की संस्कृति पर शनैः शनैः पाश्चात्य रहन-सहन का प्रभाव होने लगा है। पवित्र सरोवर के घाटों पर संस्कृत के श्लोकों से पूजा कराने वाले पंडे अब जजमानों से अंग्रेजी में बातें करते हैं। भजन कीर्तन से दिन-रात गूँजेने वाली इस तीर्थस्थली के रेस्टोरेंटों की छतों पर 'काफेटेल' के साथ पश्चिमी संगीत की धुनों पर नंगी बाहों को हाथ में लेकर विदेश पर्यटक डांस करते नजर आते हैं। वर्तमान में कम से कम एक हजार विदेशी पुष्कर में रहते हैं। गर्मियों में इस संख्या में थोड़ी कमी हो जाती है। प्रतिदिन सौ से डेढ़ सौ विदेशी पर्यटकों का आवागमन रहता है। कई पुष्करवासियों ने विदेशी लड़कियों को अपनी अर्द्धांगिनी बना लिया है। इस छोटे कस्बे में पच्चीस विदेशी परिवार यहां लगभग स्थाई रूप से रहते हैं परन्तु बीजा की औपचारिकता निपटाने के लिए कुछ दिनों के लिए देश से बाहर जाते हैं। इन विदेशियों में से कुछ यहां छोटा-मोटा रोजगार भी कर रहे हैं।

पुष्कर के बीस वर्ष पूर्व के स्वरूप और वर्तमान स्वरूप में काफी परिवर्तन है। दो दशक पूर्व यह स्थान विशुद्ध धार्मिक स्थल के रूप में माना जाता था परन्तु आज यह विदेशी पर्यटकों की सैरगाह बन गया है। पंडित से लेकर छोटे दुकानदार तक विदेशियों की सुविधा के अनुरूप अपने में बदलाव ला रहे हैं। कुछ वर्ष पूर्व तक एक लुगड़े की आड़ में तीन-तीन ग्रामीण महिलाएं स्रान करती थीं परन्तु अब घाटों पर महिलाएं स्रान करने से डरती हैं कि कहीं घाटों पर बेरोक-टोक फोटोग्राफी करने वाले विदेशी उनकी तस्वीर न खींच लें। यहां पर आने वाले विदेशी खुले आम स्मैक, चरस और नशीले पदार्थों का सेवन कर स्थानीय युवकों को भी पतन की राह दिखा रहे हैं। रात बारह-बजे तक ये विदेशी चौराहों पर झुण्डों में बैठ चिलम खींचते रहते हैं या फिर तेज संगीत पर थरक रहे होते हैं। स्थानीय लोगों ने

अपने घरों को होटलों या पेइंग गेस्ट हाउस में तब्दील कर दिया है। घर के चार कमरों में से तीन कमरों में विदेशियों को ठहराते हैं। बाकी एक कमरे में परिवार रहता है। यहां के पन्डे नए विदेशी को रोली का टीका और हाथ में मोली बांध कर उसको पुष्कर में रहने का पासपोर्ट बताकर मोटी धनराशि ऐंठने से भी बाज नहीं आते। पंडितों की भी ज्यादा रुचि विदेशियों को पूजन कराने में ही रहती है। स्थानीय होटल भी विदेशियों के अनुरूप ही व्यंजन बना रहे हैं। बीस वर्ष पूर्व तक यहां प्रतिदिन पांच सौ यात्री आते थे परन्तु अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पुष्कर के प्रचार के कारण यह संख्या छः गुनी अर्थात् तीन हजार पर्यटक प्रतिदिन हो गई हैं।

पहले यदि गोरों चमड़ी वाला व्यक्ति चप्पलें या जूते पहले घाट पर चला जाता था तो स्थानीय पंडे सामूहिक रूप से उससे मारपीट करने पर उतारु हो जाते थे परन्तु आज स्थितियां विलकुल विपरीत हैं। पंडे घाटों पर खुशी-खुशी विदेशियों को पूजा पाठ करा कर दक्षिणा ग्रहण कर रहे हैं। दो दशक पूर्व तक इन विदेशियों से स्थानीय निवासी परहेज करते थे किन्तु आज उन्हें देखकर प्रसन्नता से खिल उठते हैं। यह प्रसन्नता कितनी धिनीनी है इसका अनुमान नहीं लगाया जा सकता। वे इन विदेशियों को लक्ष्मी का वाहन समझ कर उनसे लूट-खसोट का कोई भी अवसर हाथ से नहीं जाने देते।

पुष्कर मेले के स्वरूप में भी पिछले एक दशक में भारी बदलाव आया

है। यह मेला उत्तरी भारत के सबसे बड़े पशु मेले के रूप में जाना जाता था परन्तु अब मेला प्रारम्भ होने के साथ पशुओं का लौटना प्रारम्भ हो जाता है। वर्तमान में कार्तिक पूर्णिमा से एक पखवाड़े पूर्व ही पशुओं का आवागमन प्रारम्भ हो जाता है और मेला प्रारम्भ होने से एक सप्ताह पूर्व यह क्रय-विक्रय प्रायः समाप्त हो जाता है। पांच दिन का यह मेला धीरे-धीरे कार्तिक पूर्णिमा तक सिमटता जा रहा है। श्रद्धालुओं का ध्येय यह होता है कि वह पवित्र सरोवर में स्नान करे परन्तु वह पुष्कर झील की स्थिति देख कर व्यथित हो जाता है। मेले के दिनों में पुष्कर झील का स्वरूप कायम रखने के लिए तीन बड़े बोरिंगों के माध्यम से चौबीसों घंटे सरोवर में पानी डाला जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. मालू कमला-द हिस्ट्री ऑफ फॅमिनस् इन राजपूताना, हिमांशु पब्लिकेशन्स, उदयपुर, 1987, पृ-851
2. टॉड, जेम्स-ट्रेवेल्स इन वेस्टर्न इण्डिया, जोधपुर 1966, पृ.-1751
3. अर्सकिन, विलियम -हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, एटलांटिक पब्लिशर्स, नई दिल्ली 1989, पृ.-691
4. डॉ. शर्मादशरथ-लेक्चर्स ऑन राजपूत हिस्ट्री एण्ड कल्चर, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली 1970, पृ.-142
5. डॉ. शर्मा जी. एन.-राजस्थान स्टेडीज, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 1985, पृ.-112

A Study on Revision of Insurance Industry in India to make Pace with Globalization

Ram Prakash

SRE, Jai Narian Vyas University, Jodhpur

Sunil Netar

MBA, The Faculty of Business, Charles Sturt University, Melbourne, Victoria, **Australia**



shodhshree@gmail.com

Risk is essentially an inevitable element of economic activities. Without risk, thinking of ahead would be futile. Covering of risk is necessary to enhance entrepreneurship and innovation for economic activities in young generation through business practices. People of India are also looking solemn for their own and his dependant financial security. Attentions of community and policy revision by Govt. of India put up insurance industries to customer centric market. Economic reform in country raises questions over infrastructure and security system of India against risk of natural and technical calamities. Globalization in industrialization insists restructuring of insurance with dynamic needs of big business. Policymakers of India careful about the demand of common person life and his property security; take measures to modify insurance scenario to get together with energetic wishes. Life Insurance Corporation Act and General Insurance Business Act are the initial policies of independent India to popularize insurance industry with assistance of state. Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) becomes the landmark in history of Indian insurance industry for restructuring and reshuffling of old and outdated regulations of it. The IRDA is philanthropic time-to-time advices insurance companies to be competitive and educate people about reimbursement of insurance through awareness program, advertisement and publications. It also play vital role in assembly transparency of industry with its routine supervision, auditing and controlling process. Competitive environments of industry itself create moral values in insurer for fair practice with ethical concerns. New - foreign and private players grow to be superfluous conscious about brand value and goodwill to keep on for long lasting in market.

However, privatization is not fully competitive with public sector companies. Private companies have lower advantages of Govt. Policies comparatively public sector due to subsidy and other financial assistance of state. Under this phenomenon, the variable like plans, policies, innovation, technology and subsidy become the key criteria for the insurance penetration in India.

Insurance – Concept and Industrialization

It is a contract of two parties in which, one party ensures other party to shell out a certain (sum-insured) consideration in time of happening of event on payment of certain amount that called premium. In insurance contract, premium is paying by insured to insurer as remuneration of insurer assurance. Insurance covers the risk of natural calamity and manmade terror: speculative and happens with consent of insured. The contract of insurance take authorized form after a legal agreement of both parties with signing of required documents. Human life, machinery, cattle and crop etc. existence can covered through it, non-existence thing are not subject matter of insurance, it make a differentiation with gambling. All terms and conditions of insurance have written form as a policy, issued to insured and call for to present in time of claim, in case of non issuance than it can be claimed through cover note that issue before issuance of original policy but after payment of premium.

In era of commercialization, insurance take form of marketable activities and has become an assisting activity of business practices. Insurance contractor has take form of insurance companies that resulted to insurance industry. As an industry, insurance business was attached with some guidelines that causes to intuitive of insurance regulations and regulatory bodies. In present scenario, insurance firms have many rules and regulations to sign contracts as well as to pay claims on happenings of events. Technology, Industrialization and modernization open new horizon to industry with uncertain environments and new sources of income to human raise intellect of financial security that resulted to enlargement of insurance industry.

Literature Review

Modern insurance in India was augmented in time of British rule. It embellishments with need of time and industry accepted many changes in it. Now, insurance is most booming sector of Indian economy is have 4% role in Gross Domestic

Product (GDP) of India and it have growth of 15-20% each year (Ghoshal, 2012). Insurance companies of India launch many products and policies that be able to meet with needs of people as well as state. Initially, insurance industry of India was fully under control of state and it offering products through nationalized companies (Public Sector Units) viz. Life Insurance Corporation and General Insurance Business Company. Both PSUs was companies to offer product and Acts to maneuver in Indian market.

A milestone change was taken place in insurance industry of India in 1999 with establishment of Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA). The IRDA is an Act to insurance industry for operation in market: a body (watchdog) to supervise insurance companies functioning. Prakash & L., (2013) advocated that IRDA have severe control on insurance industry to minimize unethical practices and lead companies towards fair advertisements and investment of funds. The authority is the ultimate body in insurance it have all powers to control functioning of insurance industry and decision-makings regarding product, pricing and audit for financial solvency and fair investment of funds. Privatizations in insurance also result of founding of authority therefore; IRDA register all insurance companies to provide and renew license that minimizes the risk of fraud (Sinha, 2014). Privatization and entry of new firm in market create a competition of fair practices that resulted better penetration and enhance insurance education in people of India. Shahi (2013) find in study privatization in insurance industry create tuff competition and push companies to enter into rural and remote areas to open branches and offices as well collection centers for better penetration in all-round India. In addition, the authority have its own vision to implement through insurance companies of Indian market.

In present time insurance industry of India has got many new feathures and extent to extend its operation with IRDA guidelines. Indian insurance

market has become competitive that resulted to innovative, diverse channels and lower cost product market (Purusothaman, 2013). In other study Natarajan (2013) Life Insurance Corporation of India (LIC) is focusing on service quality aspects such as policyholders' events, good infrastructure, staff involvement, friendly environment for customer, customer grievance cell and customer awareness etc. to enhance production. Fundamental restructuring and new regulations in insurance industry through IRDA show the way it to a new horizon and it foster rays of hopes in middle-income families towards insurance industry (Naresh & Madhavi, 2014). Nowadays, insurance sector outfit with new technology and channels to marketing of insurance products that minimize cost of insurance. New channel of insurance Bancassurance is the most appropriate and advantageous means for insurance companies to utilize bank resources to maximize penetration of insurance with lower expenses on infrastructure (Singh, Chakraborty, & Raju, 2011).

However, *all glitters are not gold* saying has proved in insurance new entrants through privatization gave some challenges to insurance industry and its customers. Insurance companies in India are designing products according to need of its own and targeting higher income people with a very few significance of lower income people to be pinacle through huge resources (Deliya, Patel, & Parmar, 2012). Wining is a mental psychology of human mind; it leads to imitation and duplicity. On this phenomenon, Indian insurer shift towards customer needs rather than own needs but customers are facing challenges in differentiate products of similar features with all insurers (Ahmed, 2013). General Insurance policies also affected with new regulations and govt. designed product that suits with need of farmer but, lower attraction of farmer befall barrier to enjoy economy of scale. In India, crop insurance is subjected to general insurance, Agriculture Insurance Company of India (AIC) is major crop insurance public sector company that

provide product on Govt. subsidy rates to maximize insurance practice to benefits poor farmers (Prakash & Sharma, 2014).

Insurance – Device of Security

Insurance is an arrangement by which a person or institution undertake guarantee to pay timely on happening of event. In initial days, British exporters and traders through pooling of funds with a certain group of people initiated insurance. In time of loading of material on ships, they deposit some amount with these groups to make reserve of fund, if someone suffers losses than reserve fund used as compensative amount. However, some ancient records are not favoring these people as initiator of insurance on world picture. Some ancient records are evident of well establishment of insurance in India and Babylonia. A term used in ancient time that mentioned in *Regveda*, a concept of *Yogakshema*, which mean was security of people and property. It is the obvious of existence of insurance in ancient India. In present, insurance is turn into an instrument for industries and common people to transfer his risk to insurer on payment of a nominal amount premium. Interest of common people and industry to reassign his risk to insurer, buying policies as an investment, payment of sum insured with bonus, compensation in time of loss occurrence and indemnity to insured has opens new horizon for insurance to burgeon all-round map of humankind.

***“Prathvi, Agni, Jal Akash,
Sabki Suraksha Hamare Paas”***

- Oriental Insurance Company Limited
Tagline

IRDA is the highest authority of Indian insurance sector; advertise itself as shielding agency against mishappenings and loss from perils of sea, calamities on earth and fatalities in air with *Promoting Insurance, Protecting Insured*. Life insurance Company of India has a word *Yogakshema*, in its logo taken from *Regveda* also evident of security. Private sector leading company Industrial Credit and Investment

Corporation of India (ICICI) Prudential advertises itself as *Zimmedaari ka humsafar*. All insurers advertise and present themselves as security providing agencies. Principle of indemnity, compensation of losses to sufferer for back in earlier arrangement is the the palpable. Insurance industry of India have its own boundaries that framing through regulations, especially in modern time and IRDA also initiated program *Bima Bemissal*, is naming security is unprecedented.

Recent Trends in Insurance Market of India

India is second largest country after china, has 125 million populations. Mostly, around 70%, people of India are illiterate and depend on traditional employment sources viz. handicraft, agriculture, its related activities etc. Production of Indian agriculture is not superior owing to *monsoon* dependency and non-irrigation though income of farmers is very few. Crop insurance is an effective tool for small farmers to reduce negativity and nurture sense of motivation that resulted to higher production (Khanna, Upadhyay, & Gandhi, 2013). Insurance become boon for those people; they are not able to buy insurance policy on actual cost. Crop insurance was not able to construct its ground between

Indian poor farmers where a few have interest in it. A few ratios of farmers towards crop insurance are not beneficial to insurance companies to enjoy scale of economy and got productive and wealthy farmers attention. Govt. of India came into action and set-up a new institution AIC to provide subsidies products. This act of government help unorganized allure farmer to use policy as a safety tool.

After liberalization, insurance sector has opened for private and foreign players. In this day and age, insurance industry of India have a nationalize company in life insurance whereas it have 23 private sector companies and in general insurance 6 owned by public sector whereas 21 owned by private sector. Private sector is looking unrested and experimented many new and innovative ideas to promote insurance industry that resulted to competitive advantages to customers. In competition, each insurer wants to build him well settle in industry therefore, he start using technology and innovative ideas. A recent policy to Know Your Customer (KYC) becomes a approach to make long lasting relationship with customer. Shammeem & Gupta (2012) identified advantage of Competition that insurer has learned relationships with customers.

Table: Projection of Life Insurance and Non-life Insurance Premiums, 2004-2014

Life Insurance			Non-life Insurance	
INR m. constant			INR m. constant	
	INR m	2004 Prices	INR m	2004 Prices
2004	749 971	749 971	203 856	203 856
2005	871 672	834 136	234 323	224 233
2006	1 025 957	934 358	271 830	247 561
2007	1 201 425	1 042 105	315 522	273 680
2008	1 403 362	1 159 284	368 094	304 074
2009	1 667 814	1 312 134	429 750	338 101
2010	1 983 051	1 485 832	496 953	372 350
2011	2 366 576	1 688 756	572 727	408 690
2012	2 804 561	1 905 996	651 736	442 924
2013	3 326 543	2 153 072	734 778	475 578
2014	3 947 899	2 433 546	828 433	510 659
Average Growth rate between 2004-2014	18.1%	12.5%	15.1%	9.6%

Source: Swiss Re Economic Research & Consulting.

This is fact that insurance companies of India facing tuff competition in market to sell their products to traditional customers those have many religious and social beliefs towards life, birth and happening of events. Each company wants to grab market with combination of its own competencies and beliefs of society no one believes in its name, brand and support from Govt. of India. Public sectors companies also start advertise its products and educate people about insurance as them prospective customers. Public Sector Life Insurance Company (LIC) has the sound solvency with comparison of private life insurance companies (Bawa & Chatta, 2013). LIC has opted its own strategies to stay in market as topper. Private sector companies are not able to compete public sector companies due to backing of Govt. of India but it gave competitive advantages to customer with ending of monopoly market. Intensification of insurance has greater than before after establishment of IRDA, which leads it towards increasing no. of policies, higher penetration rate and density of insurance (Bharadi, 2012).

Govt. Policies and Trends in Insurance Industry of India

Govt. of India has implemented many strategies in insurance sector to enhance its operation, smooth functioning and easier operation of it. A customer of insurance sector has benefited with these policies and insurance industry achieves new heights with structural changes. Some of them are following policies, which Govt. of India has implemented—

IRDA – A body allows private sector companies and foreign players to operate in Indian market. It has all rights to take decisions for insurer control and benefits insured. It makes insurance industry sound and competitive.

Subsidy – it provide those customers who are not able to pay higher cost of insurance policies. Crop insurance is best example of subsidie products; AIC was formed to benefit farmers and agrarians with object of subsidies products of crop insurance.

Pradhanmantri Bima Yojana – prime minister launches two new insurance plans at lower cost these are naming as - *Pradhan Mantri Suraksha Bima Yojana (PMSBY)* & *Pradhan Mantri Jeevan Jyoti Bima Yojana (PMJJBY)*. these plan are offering at very lower cost for Rs 12 and 330 per annum and sum assured is Rs 2 lacs. First, policy cover accidental cover but second policy covers all happening of event. Govt. of India also bears some amount of premium. Both plans are expected to popular as *Jan Dhan Yojana* of bank account opening for common people.

Suggestions and Remedies

Insurance has become necessitate of present time to secure life and property from natural and technological hazards. Insurance industry is flattering dynamic & acceptable and it implementing changes as required making pace with globalized era. Globalization tends to similarity that becomes a problem for insured to differentiate products of many insurers. To make pace with global needs of customers with guidelines of IRDA insurance companies should require opt latest technology in designing products that accomplish needs of their customers. Insurance companies should need to minimize imitations of policies and opt innovative way to design customer need based policies. Further, insurance companies should focus on needs of customer and avail products that are customer centric rather than competition centric.

Privatization in insurance opens the new horizon for innovation, strategic marketing and advance facial appearance in policy. The privatization and entry of foreign company's collaboration has enhanced managerial skills and actuarial practices of industry. Foreign players' management skills with guidelines of IRDA has benefited customers with competitive advantages, providing fair information regarding policy, ethical practices of insurance intermediary etc. enhance customer familiarity with insurance. However, private insurance companies have fewer solvencies than public

company therefore private companies should require maintaining optimum solvency for timely claim settlements. Furthermore, private insurance companies need to improve product features and make some unique product with differentiation from competitor products.

Govt. of India is giving many subsidies and promotions to public sector companies that are not healthy for the future of private companies therefore, Govt. of India need to provide proper subsidies to promote insurance market as well as lesser the burden on Govt. treasury.

Conclusion

Insurance sector of India has quickly grow in last decade. It growth rate has increases after privatization and liberalization in insurance industry with establishment of IRDA. The industry has accepted many changes to restructure and revive it on global model with collaboration of foreign players. The entry of foreign players and private firm has increases competition but customers properly utilized its advantages. New entrants in insurance has opted new technologies and innovative ideas to penetrate in Indian market in ethical concern. They provide competitive plans at competitive rate, new plans of crop insurance to insure vast population of agrarian. New plans and policies of insurance not only able to catches eyes of natives of India but also make ground in economic activities with surety of returns. Insurance develops innovation and entrepreneurship in youth of India with security through intangible aspect of insurance. However, Govt. subsidies and promotions to public sector companies somewhere depress private insurer.

Competitive and profit making motives of insurance companies have started indicating its penetration in affluent people and institutions with lower attention of vulnerable people groups. New guidelines of IRDA and advantages to the foreign players have not benefiting common person of India; especially agrarian and daily wagers. After all, insurance penetration has increases in India with promotional activities

through policies of Govt. of India.

References

1. Ahmed, A. (2013). Perception of Life Insurance Policies in Rural India. *Arabian Journal of Business and Management Review*, 2(6), 17-24.
2. Bawa, S. K., & Chatta, S. (2013). Financial Performance of Life Insurers in Indian Insurance Industry. *Pacific Business Review International*, 6(5), 44-53.
3. Bharadi, H. H. (2012). Role of Insurance Regulatory and Development Authority in Insurance Sector. *International Journal in Multidisciplinary and Academic Research (SSIJMAR)*, 1(4), 1-15.
4. Deliya, M., Patel, K., & Parmar, B. (2012). Awareness of Micro Insurance in Patan District. *ABHINAV: Monthly Refereed journal of Research in Commerece and Management*, 1(5), 16-35.
5. Ghoshal, M. (2012). Role of Insurance in Economic Development of India. *ZENITH International Journal of Business Economics & Management Research*, 2(7), 81-92.
6. Khanna, V., Upadhyay, K., & Ghandhi, H. (2013). Crop Insurance in India - A Brief review. *Arth Prabhand: A Journal of Economics and Management*, 2(8), 20-24.
7. Naresh, & Madhavi, R. (2014). Insurance Sector in India: Challenges and Opportunities. *GJRA - Global Journal for Research Analysis*, 3(1), 45-46.
8. Natarajan, C. (2013). Service Performance of the Life Insurance Corporation of India: An Empirical Study. *SIT Journal of Management*, 3(2), 552-570.
9. Prakash, R., & L., G. (2013). Unethical Practices and Control of IRDA in Indian Insurance Market. *Pacific Business Review International*, 6(5), 8-12.
10. Prakash, R., & Sharma, A. (2014). Appraisal and Future of Crop Insurance Schemes in India with Special Refernces of NAIS. *Pacific Business Review International*, 7(3), 86-92.
11. Purusothaman, U. R. (2013). A Case Study on Growth of Investment in Life Insurance in India. *TRANS Asian Journal of Marketing & Management Research*, 2(7), 26-35.
12. Shahi, P. (2013). Recent trends in the Marketing Strategies of Life Insurance Corporation of India. *International Journal of Application or Innovation in Engineering & Management (IJAIEM)*, 2(10), 311-317.

13. *Shammeem, B., & Gupta, S. (2012). Marketing Strategies in Life Insurance Services. International Journal of Marketing, Financial Services & Management Research, 1(11), 132-141.*
14. *Singh, M. P., Chakraborty, A., & Raju, G. (2011). Contemporary Issues in Marketing of Life Insurance Services in India. ZENITH: International Journal of Multidisciplinary Research, 1(7), 47-60.*
15. *Sinha, T. (2014). The Indian insurance industry: challenges and prospects. Swiss Re.*

Impact of Reservation Policy on Backward Communities in Rural Kumaun

(With special reference to the Giri Community of Syaldeh Development Block of Almora District)

Dr. Manju Paneru

Lecturer, M.B.G. P.G. College, Haldwani, Nainital (Uttarakhand)



shodhshree@gmail.com

India is a plural society both in letter and spirit. It is rightly characterised by its unity and diversity. A grand synthesis of cultures, religions, and languages of the people belonging to different caste and communities has upheld its unity and cohesiveness despite foreign invasions, the Mughals and the British rule.¹

The Backward Classes are a large and mixed category of persons with boundaries that are both unclear and expanding. Together they comprise roughly one third of the total population of the country. They are made up of three principle components, the scheduled caste, the scheduled tribes and the other backward classes. The scheduled castes and scheduled tribes are well defined categories; comprising respectively a little less than seven and a little more than fourteen per cent of the population. The other backward classes are a residual category, their position is highly ambiguous and it is impossible to give an exact statement of their number.²

The 3,742 other backward castes and classes (not untouchables) comprised about 51 per cent of the total population of the country in 1981 and also in 1991.³ According to 2011 census the population of other backward castes is 41% of the total population of India, the planning commission (1951) has assessed them approximately 20%.⁴

The provision of reservation for the Scheduled Castes and Scheduled Tribes was made in the Indian Constitution framed after independence but the reservation for other backward castes/classes was announced by the Janta Dal Government only on August 7, 1990. As many as 27 per cent seats were proposed to be reserved for 3,742 other backward castes/classes. This was done in accordance with implementing the Mandal Commissions' Report.⁵

Ethnical Background

Giri a backward community of Uttarakhand reside both in India and Nepal. In Nepal their yogashrams are located in Bhogmati, Mrigsthal, Chaudhary, Khyarikot and Pithan. In India the members of the Giris community reside in almost all parts of the country. According to the local belief and tradition they

are considered to be a part of Lord Shiva.

In Kumaun the Giris reside in Pithoragarh, Champawat, Almora, Bageshwar and Nainital Districts. During the survey It was found that some of the villages are totally inhabited by the Giris.

For ages this community has been engaged in the worship of Lord Shiva. They (the followers of Shiva) existed in the time of Sankaracharya and bore as their sectarian marks a linga on the forehead, breast, arms and naval and even so late as the time of Madhava who records that the Pasupati Abhinava Gupta taught the mantra worship of Shiva. They have since, however merged in to the Jogis, specially the Kanphatas.⁶

Celibacy and asceticism are as a rule, characteristics of the religious bodies of Giris. It is strange, therefore that some of the Giris marry and live as house holders. They have two branches, the ascetic, known as Asandhari or Mathdhari and the family branch known as Grihastha.

The Parthi Puja (Puja of Lord Shiva) only when under taken under the supervision of Giris is considered to be successful.

We don't find a separate data of the Giris in any of the census made because their counting is made with the whole population of Jogis. In Kumaun the

Giris are known by the subcastes-Goswami, Puri, Ban, Bharti, Nath, Jogi, Saraswati. There are approximately 75 villages known to be resided by the above subcastes. The number of families in these villages is 1000 to 1500.⁷

Objectives of The Study

- To study the awareness of reservation policy among Giris community.
- To analyse the impact of reservation policy on Giris community.
- To suggest a suitable strategy for the effective utilization of the reservation policy by the Giris Community.

Universe of the Study

The universe of the present study constitute the Syaldeh Development Block of District Almora. In Uttarakhand, the Giris community is scattered over different Blocks of different districts. But the majority of the Giris community is residing in Syaldeh Block of District Almora.

In view of the nature and objectives of the study 100 families have been selected for the study by lottery method. Finally a representative sample of 100 respondents belonging to different age groups ranging from 20 to above 71 years, could be obtained for this study.

Table No. 1 presents the age and sex wise distribution of the respondents.

Table No. 1
Age and Sex Wise Distribution of The Respondents

Age Group	Sex		Total	Percentage
	Male	Female		
0-20	18	09	27	27
21-30	18	06	24	24
31-40	13	05	18	18
41-50	06	08	14	14
51-60	04	03	07	07
61-70	03	01	04	04
71 and above	03	03	06	06
Total	65	35	100	100
Percentage	65.00	35.00	100.00	100.00

The age and sex wise distribution of the respondents belonging to the universe of the study is shown in table number 01. From table number 01 it is clear that 65 per cent of the respondents are male while only 35 per cent of the respondents are females. It is also clear from the table number 01 that the maximum number of respondents fall in the age group 0-20 i.e., 27 per cent while the next followed by 24 and 18 percentage in the age group 21-30 and 31-40, respectively. The minimum number i.e. 04 per cent of the respondents fall in the age group 61-70.

Marital Status of The Respondents

"Marriage is an institution admitting men and women to family life."⁸

It was found during the survey that the majority of the respondents i.e. 61 percent are married and 08 per cent are widows/widowers and only 31 per cent are unmarried. Besides, none of the respondents was found divorced. Like Hindu's even in the Giri community marriage is considered to be a sacrament.

Educational Level of The Respondents

According to Kothari Education Commission, "Education according to Indian tradition is not merely a means to earning a living nor it is a nursery of thought or a school of citizenship. It is

initiation into the life of spirit, a training of human social in the pursuit of truth and the practice of virtue."⁹

Among the sample population the majority of the respondents were intermediate i.e. 28 per cent and the minimum i.e. only 03 per cent of the respondents were post graduate. While 12 per cent were primary, 20 per cent were junior high school pass 16 per cent were high school, 05 per cent were graduate and 16 per cent were illiterate. None of the respondents were found doctor or engineer. Therefore it was found that the majority of the respondents were educated. Among the educated respondents, the maximum were intermediate while the minimum were post graduate.

Occupational Categorisation of The Respondents

Table number 02 shows the occupational categorization of the respondents. Table shows that out of 100 respondents none of the respondents is following their traditional occupation where as majority of the respondents i.e. 55 per cent were engaged in agricultural work. This indicates that at present the main occupation of the Giri community is agriculture. Apart from agricultural work these people are also engaged in services. (Government as well as private), labour and business.

Table No. 02

S.No.	Occupation	Frequency	Percentage
1	Agriculture	55	55.00
2	Service (Govt.)	10	10.00
3	Service (Private)	22	22.00
4	Labour	05	05.00
5	Traditional Occupation	-	-
6	Business	08	08.00
	Total	100	100.00

As table number 02 shows 22 per cent respondents are in private services, but only 10 per cent are in Government service. While 08 per

cent of the respondents are in business, only 05 per cent of the respondents are labours.

From the occupational distribution of the respondents it is clear that at present none of the respondents is following his traditional occupation of worshipping Lord Shiva, while the majority of people are engaged in agricultural work. Some people are also busy in services, business and labour work.

Welfare Schemes or Programmes For Other Backwards Classes

- Pre-metric scholarship for OBC students.
- Post metric scholarship for OBC students.
- Pre examination coaching for OBC students.
- Construction of hostel for OBC boys and girls.
- Dr. Ambedkar Scheme of interest subsidy on educational loan to overseas studies for OBC.
- National fellowship for OBC students.
- Assistance of voluntary Organisation working for the welfare of OBCs.
- Dr. Ambedkar pre metric and post metric scholarship¹⁰

Besides these 27 per cent reservation is given to OBC in government jobs.¹¹

The Level of Awareness Towards Welfare Programmes

The success of any welfare schemes and programmes basically depends on the awareness and cooperation of the people. When the respondents were asked to express their views about the welfare programmes sponsored by the government for the other backward classes. Most of the respondents said they were unaware of the welfare scheme given by the government.

When the respondents were asked if they availed themselves of all the facilities under these schemes, they said that some of them had got housing loan and business loans.

When the respondents were asked if they had any knowledge of reservation facility given to them in different educational institutes. They expressed their views Table no. 03 shows that 53 per cent of the respondents have the knowledge of reservation facility while the rest of the respondents i.e. 47 per cent do not have any knowledge of reservation facility.

Table No. 03
Knowledge Regarding Reservation in Educational Institutes

Knowledge of Reservation		Total
Yes	No	
53	47	100
53.00	47.00	100.00

Again the respondents were asked if they know the percentage of reservation for their caste. It was found that 23 per cent of the respondents

know the right percentage 22 percent know the wrong percentage and 55 percent of the respondents do not know the percentage.

Table No. 04
Knowledge Regarding The Percentage of Reservation In Educational Institutes

Knowledge of reservation/Percentage			Total
Know Right Percentage	Know Wrong Percentage	Do Not Know The Percentage	
23 (23.00)	22 (22 .00)	55 (55.00)	100 (100.00)

This shows that the Giri people are not aware of the facilities given to them by the government because all the people are not educated. Only 53 per cent of the respondents were aware of the facilities given to them by the government.

Again the respondents were asked if there was any improvement in their life by the facilities given to them under different schemes. The majority of respondents told that there was an improvement in the field of education. At present all the people are aware about the education of their children and they also know the importance

of education and they are sending their children to schools.

Thus, it can be said that there is an improvement in the field of education.

At last the respondents were asked if they have any knowledge of 'reservation' in government jobs. Table no. 05 shows that only 39 per cent of the respondents have the knowledge of reservation facility in government jobs while the majority of the respondents i.e. 61 percent of the respondents have no knowledge about this facility.

Table No. 05
Knowledge About Reservation Facility In Government Jobs

Knowledge of Reservation		Total
Yes	No	
29 (39.00)	61 (61.00)	100 (100.00)

The 39 per cent respondents who had the knowledge about this facility only 8 per cent of them said that they have been benefited by this facility. Thus, it can be concluded that the majority of people are not aware of the facilities given to them by the government and those who know about the facility are not taking advantage of it.

Strategy For The Effective Utilization Of The Reservation Policy By The Giri Community

The Giri community is socially, economically and educationally backward community. Therefore special safe guards are given to them by the central government and state government but lack of awareness they are not utilizing the reservation policy and schemes in an effective way. The intellectuals, the NGOs and the Social media can play a vital role to aware the community.

- The teachers can spread awareness among the parents and the students at the school level about the benefits given to the OBC students.
- The NGOs can also impart the knowledge of reservation policy in the urban and rural areas.

- The social media (TV, radio and newspapers) can create awareness among people through advertisements.
- The government can create awareness among people through banners and pamphlets about the programmes and schemes for OBC run by the government.
- At district level and block level meetings should be conducted to train the village representatives and the workers such as the Gram Pradhan (village head), Up Pradhan, Ward Member, Asha Worker and the Anganwadi workers etc.
- At last the public must be aware and educated enough to avail the benefits given to them and if they don't get benefit then they must approach to the higher authority until the last resort.

Conclusion

The Giri form a backward community of Kumaun. They are 'backward' in their economy, they depend on agriculture and animal husbandry. But today through education they have changed their economic conditions.

The different schemes run by the government for upliftment of the backward classes also have changed and improved the social life of Giris.

On the basis of the conclusion of the study it can be said that the government policies and programmes for poverty alleviation could not reach the grass root level of the population. In the last 68 years of independence it is seen that the reservation policy has not delivered the desired results. Reservations in jobs and in educational institutes have benefitted only a few backward castes.

At last it can be concluded that many Giris do not have knowledge of reservation facility so they are not taking the full advantage of it. Due to the reservation and various facilities of Government the status of the Giris is changing but very slowly.

References

1. Sharma K.L. : *Indian Society*, NCERT, Sir Aurobindo Marg, New Delhi-110016, 1987, p-1.
2. Ahuja Ram : *Society in India*, Rawat Publications,

Jaipur 1999, p-86.

3. Bateille, A : *The Backward Classes and the New Social order*, Oxford University Press, 2/11, Ansari Road, Daryaganj, New Delhi-110002, 1981, p-9.
4. Source : *Census of India 2011*, Govt. of India.
5. Ahuja Ram : *Social Problems in India*, Rawat publications 3-Na-20, Jawahar Nagar, Jaipur 302004 India, 1999, p-173
6. Atkinson, E.T. : *The Himalayan Gazetteer*, Vol-II Part II, Natraj Publishers, Dehradun, 1996, p-773.
7. Pathak, R.P. : *Nath Sampradayay- Udhbhav.evam Vikas : Kumaun Ke Vishesh Sandharbha Mei (Gyarahvie shatabdi se beesvi shatabdi tak. Thesis, History Deptt. Govt. P.G. College, Pithoragarh 1993.*
8. Bogardus Emory : *Sociology*, the Macmillan Co London, 1957, p-75.
9. Kothari Education Commission, *Government of India, UGC, New Delhi (1964-66).*
10. Source : *Ministry of Social Justice and Empowerment, The Backward Classes Division, Govt. of India, 1998.*
11. Source : www.gconnect.in.

“Striking Work Life Balance” Rising Challenges and Contemporary Solutions

Nilesh Sancheti

Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur



shodhshree@gmail.com

Varied and highly competing demands between home and work responsibilities have assumed increased relevance for employees in recent years, due in large part to demographic and workplace changes, such as, transformation in family structures, rise in the number of single parents, a greater numbers of women in the workforce, dual-career couples, a growing reluctance to accept the longer work hours culture, the rise of the 24 by 7 society, and affordable technological advancements makes it feasible for employees to keep regular contact with work.

As Bowswell and Olson-Buchanan stated, Employees have many methods, such as emails, computers, and cell phones, which enable them to accomplish their work beyond the physical boundaries of their office. Employees may respond to an email or a voice mail after-hours or during the weekend, typically while not officially "on the job". Many theorists suggest that this blurred boundary of work and life is a result of technological control and advancement. In other words, companies use email and distribute smart phones to enable and encourage their employees to stay connected to the business even when they are not in the office. This type of control, replaces the more direct, authoritarian control, or simple control, such as managers and bosses. As a result, communication technologies in the temporal and structural aspects of work have changed, defining a "new workplace" in which employees are more connected to the jobs beyond the boundaries of the traditional workday and workplace. *"The more this boundary is blurred, the higher work-to-life conflict is self-reported by employees".*

In response to these changes and the conflict they generate among the multiple roles that individuals occupy, organizations are increasingly pressured to design various kinds of practices, intended to facilitate employees' efforts to fulfill both their employment related and their personal commitments. The way of how work-life balance can be achieved and enhanced is an important issue in the field of human resource management and has received significant attention from all stakeholders.

Organizations need to ensure they not just encourage but mandate a practical and workable work/life balance policy, benefiting and meeting the needs of both the organization and its employees. Organizations not providing real opportunity for employees work/life balance are opening themselves up to increasing numbers of dissatisfied and unproductive employees and hence increased attrition rates. Merely creating a work/life policy framework is not enough. Fostering an organizational culture that supports the use of available policies is also of great importance. Further there is a need for employers and employees alike to find flexible, customised and innovative solutions that maximize productivity without damaging employees well-being, their family relationships and other aspects of life.

Finally as Stewart Friedman—professor of Management and founding director of the Wharton School's Leadership Program describes - a "one size fits all" mentality in human resources management often perpetuates frustration among employees. Everyone's life is different and everyone needs different things in terms of how to integrate the different pieces. It's got to be customized.

Defining Work - Life Balance

The work-leisure dichotomy was invented in the mid-1800s. Paul Krassner remarked that anthropologists use a definition of happiness that is to have as little separation as possible "between your work and your play". The expression "work-life balance" was first used in the United Kingdom in the late 1970s to describe the balance between an individual's work and personal life.

In its broadest sense Work-life balance is meaningful achievement and enjoyment in everyday life and is defined as a satisfactory level of involvement or 'fit' between the multiple roles in a person's life. Work-life balance is a concept including proper prioritizing between "work" (career and ambition) and "lifestyle" (health, pleasure, leisure, family and spiritual development / meditation). To introduce and define work life

balance to the core we need to appreciate that that the meaning of work/life balance has chameleon characteristics. It means different things to different groups, and the meaning often depends on the context of the conversation. The following are working definitions of terms used regarding work/life balance, some definitions overlap and some are continuing to evolve.

Work/family: A term more frequently used in the past than today. The current trend is to use titles that include the phrase *work/life*, giving a broader work/life connotation or labeling referring to specific areas of support (e.g., quality of life, flexible work options, life balance, etc.)

Work/family conflict: the push and pull between work and family responsibilities.

Work/life balance from the employee viewpoint: the dilemma of managing work obligations and personal /family responsibilities.

Work/life balance from the employer viewpoint: the challenge of creating a supportive company culture where employees can focus on their jobs while at work.

Work/life programs: programs (often financial or time-related) established by an employer that offer employees options to address work and personal responsibilities.

Work/life initiatives: policies and procedures established by an organization with the goal to enable employees to get their jobs done and at the same time provide flexibility to handle personal/family concerns.

Work/family culture: the extent to which an organization's culture acknowledges and respects the family responsibilities and obligations of its employees and encourages management and employees to work together to meet their personal and work needs.

Work - Life Balance Practices

Various research shows and suggests that those employees who were more favourable toward their organization's efforts to support work-life balance also indicated a much lower intent to

leave the organization, greater pride in their organization, a willingness to recommend it as a place to work and higher overall job satisfaction thus impacting the ROI of the organisation in a positive manner. Organizations can implement various work-life balance initiatives that may assist employees to better balance their work and family responsibilities, gain improvements in well-being and provide organizational benefits. There are a large variety of policies which include but are not limited to the following:

Flexible working hours, job sharing, part-time work, compressed work weeks, parental leave, tele commuting, on-site child care facility. In addition, employers may provide a range of benefits related to employees health and well-being, including extended health insurance for the employee and dependents, personal days, and access to programs or services to encourage fitness and physical and mental health. Still, other practices may support children's education, employees' participation in volunteer work, or facilitate phased retirement. These additional practices fall outside the scope of our current paper, but can be viewed as supporting employees' health, well-being, and work-life balance.

Part-Time Work arrangements can also allow people with health problems, disabilities or limited disposable time (e.g. students) to participate in the labour force, develop their skills and obtain work experience. Finally, they can facilitate re-entry into the workforce for those who have had career breaks - particularly mothers (or fathers) who have stayed at home to raise their children - or provide a gradual exit for employees nearing retirement. From the employer's point of view, the use of part-time workers, where feasible, can help maximize the use of human resources and increase operational flexibility, by providing additional coverage during peak periods. Part-time employment can also be considered unsatisfactory for those employees who would prefer working longer hours to increase their income, thereby ensuring

a higher standard of living for their families. The European Working Conditions Survey found that 85% of those working less than 30 hours per week were satisfied with their work-life balance. Furthermore, part-time workers and those working less than 35 hours a week reported the lowest levels of both physical and psychological health problems. Part-time work is one strategy frequently used by workers who wish to better balance their work and family life. Part-time work should be promoted in more, higher-level occupations, for instance, Daimler Chrysler in Germany promotes part-time work in leading positions in the company.

Telecommuting is becoming increasingly common for people to do at least some of their regular work from home instead of going into the office. This type of arrangement is often called 'tele work' or 'tele commuting' and can be advantageous for employees by allowing them to organize their work day around their personal and family needs, to decrease work-related expenses, to reduce commuting time and to work in a less stressful and disruptive environment. It may also help to accommodate employees who, because of particular disabilities, are unable to leave home. The employees who tele work can use this added flexibility to capitalize on their personal peak productivity periods and can also positively impact the company's bottom line. Despite these benefits and the attention that tele commuting has attracted in the media, very few collective agreements contain tele work provisions. The paucity of tele work clauses is partly due to the fact that not all occupations are amenable to such an arrangement. Moreover, employers may be concerned by the initial implementation costs, potential legal liabilities, and difficulties in supervising and appraising the performance of tele workers. Trade-Unions may disapprove of work-at-home clauses if they perceive them as leading to greater isolation of employees, reduced job security and promotion opportunities, and diminished health and safety protection.

Compressed Work Week is an arrangement whereby employees work longer shifts in exchange for a reduction in the number of working days in their work cycle (e.g. on a weekly or biweekly basis). This can be beneficial for employees in terms of additional days off work (e.g. longer week ends allowing "mini vacations") and reduced commuting time, whereas employers can extend their daily operating hours, with less need to resort to overtime. Compressed work week arrangements may be particularly useful for employees who wish to reduce the number of days per week spent at work, but who cannot financially afford to decrease their working hours. Compressed work weeks are often initiated by the employee, but sometimes the employer may initiate the option to improve operational efficiency, to maximize production (reduced daily start up costs) or to establish longer business hours which can enhance customer service. Common arrangements for a forty hours work week are working ten hours per day, four days a week; working an extra hour a day with one day off every two weeks; or working an extra half hour a day and having one day every three or four weeks off.

Job sharing is an arrangement which allows two or more employees to jointly fill one full time job, with responsibilities and working timeshared or divided between them. Job sharing may be appropriate where opportunities for part-time jobs or other arrangements are limited. Apart from the obvious advantage of allowing employees more time for other commitments, including family responsibilities, job sharing also facilitates the development of partnerships, where job sharers can learn from each other while providing mutual support. It can benefit employers as well by improving staff retention, increasing productivity and combining a wider range of skills and experience in a single job. In some cases, such an arrangement can also provide additional coverage during busy periods, while ensuring continuity of coverage when one partner is on sick leave or holidays. For business

with substantial numbers of administrative, maintenance or customer-facing employees, offering flexible working conditions can be problematic. Where the hours of work are customer-driven, organizations face limitations on flexibility for employees, but this is when family-friendly programs such as child care would be of most benefit. A positive example of childcare support is Star City Casino in Sydney that provides a 24-hour childcare facility. Management believes this has helped both staff and the organization, as evidenced by the lowest staff turnover rate of any casino in Australia. Contextual factors that influenced the success of these work arrangements were management support and supportive organizational culture, the presence of formal human resource management practices regarding reduced work arrangements and assistance in the implementation of such arrangements.

Flexi time allows employees, to determine or be involved in determining the start and end times of their working day, provided a certain number of hours is worked. This can allow them to meet family or personal commitments/emergencies (enable employees to respond to both predictable and unpredictable circumstances), during the day or to reduce their commuting time by starting and ending work before or after the rush hour.

Employees Benefits and Organizational Outcomes of work-life balance practices

The effects of introducing work-life balance practices on employee attitudes and perceptions include organizational commitment, job satisfaction, turnover intention and job stress. All of these factors, in turn, affect job performance, direct and indirect absenteeism costs, costs associated with the loss and replacement of valued employees, customer satisfaction, and organizational productivity. Although the formal evaluation of work-life practices is often difficult because of the problem of calculating the costs and benefits of different strategies, some companies have attempted to quantify the outcomes of specific policies. The most commonly

used measures of organizational outcomes include the following:

Reduced Costs: Particularly those related to reduced absenteeism and turnover. Both absenteeism and high turnover rates in organizations are indicative of low morale and job stress. Thus, reducing absenteeism is an important organizational objective for reducing costs. Organizations like Capital One Financial, a financial services company, reported that work-life balance practices reduced turnover and increased productivity and Employee satisfaction. The Canadian Teleworkers Association has also reported that about 25% of IBM's 320,000 employees worldwide tele commute saving the company \$700 million unreal estate costs.

Enhanced Organizational Image and Retention of "Desirable" Employees: Being perceived as having innovative work-life balance practices allows organizations to enhance their organizational reputation in the public domain. This means that they are also well-positioned to attract and retain greater numbers of job applicants from which a larger pool of better qualified employees can be selected. Thus for example, Arup Laboratories, a Medical and Testing Reference Laboratory with 1,789 employees in Salt Lake City, has reported that offering flexible scheduling has helped them to more than double their employee base from 700 in 1992 to 1,700 employees in 2004, whilst reducing turnover from 22% to 11%. It is also notable that a variety of 'best employer' surveys regularly use availability of work-life balance practices as an evaluation criterion, thus indicating the connection between corporate image and the availability of such practices. SC Johnson, a family-owned consumer-goods company in New Zealand, says improved staff retention as a result of work-life initiatives saves the company more than \$200,000 a year.

Increased Productivity and Employees' Performance: The existent literature suggests that work-life balance practices generally have a

positive impact on individual and organizational productivity. In addition to the previous reference to Capital One Finance, Pfizer Canada reported a 30% productivity increase in its translation department when employees were provided with opportunities to tele commute. Focusing specifically on customer service as an indication of organizational performance, KPMG has reported that allowing employees to take emergency time off to attend to care responsibilities has been a driving force behind their retention and 'superlative services' provision. Organizations that offered more extensive bundles of work-life balance practices had higher ratings on a measure of organizational performance obtained from senior HR directors on such dimensions as being able to attract essential employees, the quality of relations between management and employees, and product quality. Can Work-Life Initiatives be measured? Even if, it is difficult enough measuring the return on investment in work-life practices there are several key factors to be considered in measuring return on investment and that can positively impact the bottom line. Identifying and assessing the impact of work-life balance practices on absenteeism, turnover/replacement, healthcare costs and stress-related illness and employee time saved will be the topic for a further research.

Barriers in Achieving Work-life Balance

Implementing of work-life practices for organizational effectiveness may be compromised by lack of use these practices. Research conducted amongst organizations suggests that employees often remain unaware of their work-life entitlements following the implementation of work-life balance practices. For example, in a survey of 945 employees in six different organizations across three sectors of employment (local government, supermarkets, and retail banking), found that 50% of employees were unaware of the family friendly practices offered by their organizations. (Yeandle 2002). Five distinct aspects of work-life culture have

been identified from previous studies (McDonald 2005), all of which should be considered by organizations when attempting to improve employees' work-life balance. These are outlined below:

Managerial Support is consistently emphasized in discussions and studies as a factor influencing work-life balance. Managers play an important role in the success of work/life programs because they are in a position to encourage or discourage employees' efforts to balance their work and family lives. Where supervisors enthusiastically support the integration of paid work and other responsibilities, employees will be more likely to take up available work-life programs. On the other hand, it has been suggested that even in 'family-friendly' organizations, managers may send negative signals indicating that the use of flexible benefits is a problem for them, their colleagues and the organization as a whole.

Career Consequences: The second factor associated with a barrier to the successful implementation of work-life practices is the perception of negative career consequences. In a study of 463 professional and technical employees in bio pharmaceutical firms, found that the provision of work-life practices improved employees' organizational commitment, but only to the extent that employees felt free to use the practices without negative consequences to their work lives—such as damaged career prospects. Similarly, cites an American Bar Association report that although 95% of American law firms have a part-time employment policy, only 3% of lawyers have used it due to fear of career derailment. The perception that using work-life balance practices will have an egative impact on their career prospects appears to be a powerful demotivate or for employees' use of these practices.

Organizational Time Expectation: Another factor that influence the up take and overall supportiveness of work-life policies is organizational time expectations the number of hours employees are expected to work, how they

use their time (e.g., whether employees are expected to take work home). In several studies, however, long working hours have been identified as a signal of commitment, productivity and motivation for advancement. One study, based on interviews with engineers in a Fortune 100 companies, concluded: "If one is to succeed, one has to be at work, one has to be there for long hours, and one has to continuously commit to work as a top priority. To be perceived as making a significant contribution, productivity alone is not enough. One has to maintain a continual presence at work." This is particularly the case in organizations with "pre senteeism" cultures where those who succeed are the ones who come in early and stay late as a matter of course. Known as "face time" being visibly at workplace, often for long hours—is seen as a sign of commitment, of loyalty, of competence and high potential but also is seen as a major barrier to achieving work/life balance. Employees who do not give the maximum amount of time possible to the organization are often defined as less productive and less committed, and are therefore less valued than employees working longer hours. We consider that the shift to evaluating performance on the basis of outputs rather than time spent physically at the workplace is, however, an essential part of developing a culture that supports work-life balance. It is very difficult to implement flexible work arrangements in organizations where the focus is on hours rather than out put, and presence rather than performance. This means that organizations that want to increase work-life balance need to introduce new performance measures that focus on objectives, results and output. To do this, they need to reward output not hours and what is done, not where it is done. They also need to publicly reward people who have successfully combined work and non-work domains and not promote those who work long hours and expect others to do the same.

Genders Perceptions: Perceptions that work-life policy is developed only for women are the

fourth factor related to their use. A review of men's use of family-friendly employment provisions argues that barriers to men's use arise from three major sources. First the culture of many workplaces casts doubt on the legitimacy of men's claims to family responsibilities. Second, the business environment, imposing competitive pressures to maintain market share and increase earnings. Third, the domestic organization in employees' own homes often precludes men from taking up available work/life options. Some work-life provisions, such as paternity leave, are intended specifically for men and aim to foster a greater sharing of responsibilities between men and women. Thus, encouraging more men to use opportunities for flexible work is important but clearly this requires a supportive work environment as well as changes in attitudes and expectations in the wider community.

Co-worker support: An increasing amount shows that workers who make use of work-life practices suffer negative perceptions from colleagues and superiors. An experiment found that employees who used work life balance practices were perceived by co-workers as having lower levels of organizational commitment, which was thought to affect the subsequent allocation of organizational rewards such as advancement opportunities and salary increases. Some staff that use flexible arrangements have reportedly experienced 'family friendly back lash' or resentment from co-workers. In other organizations, employees without dependent care responsibilities (in this paper, defined as time spent performing childcare, elder care or care for a disabled dependent) interpret "family friendly" as favoritism and complain that they are being "unfairly" or inequitably treated. We consider that such employees feel that their colleagues with childcare or elder care responsibilities are "getting away with less work" and that the needs of childless employees are being ignored, but this kind of attitude should be changed. This backlash against "family friendly" makes it harder for organizations who wish to address the issue. In

conclusion regarding such perceptions, it is therefore not surprising why work-life practices tend to be underused by male employees, single employees and career-oriented mothers; and that apprehension of negative career consequences for using practices has been associated with increased levels of work-life conflict.

Conclusion

An employer's commitment to work/life initiatives is influenced by the perception of whether or not such initiatives have a positive return on investment. In recent years, employers increasingly realize that the quality of an employee's personal and family life impacts work quality and that there are concrete business reasons to promote work and family integration. Work/life programs have the potential to significantly improve employee morale, reduce absenteeism, and retain organizational knowledge, particularly during difficult economic times. In today's global market place, as companies aim to reduce costs, it falls to the human resource professional to understand the critical issues of work/life balance and champion work / life programs. Be it employees whose family members and/or friends are called to serve their country, single mothers who are trying to raise their children and make a living, Generation X and Y employees who value their personal time, couples struggling to manage dual-career marriages, or companies losing critical knowledge when employees leave for other opportunities, work/life programs offer a win-win situation for employers and employees. Changing demographics are behind the move to embrace work-life programs.

In conclusion we want to enhance that everyone benefits from good practice in work-life balance. The more control employees feel they have over their lives, the more able they are to balance work and family. An overall conclusion of much of the research is that work-life balance practices are most effective when they enhance employees' autonomy and increase their capacity to perform well in work and in family situation. Therefore a

successful convergence between work and non-work aspects can be a win-win situation for employees and employers alike.

The results are: reduce absenteeism & employee turnover, lower job stress levels and work-life conflict and increased productivity. A lower employee turn over means - lower recruitment and training costs, increased retention of valuable employee and increased organizational commitment and loyalty. All of these aspects are associated, in turn, with costs savings, higher customer satisfaction and implicitly higher levels of organizational performance.

Lastly we must appreciate that building an organizational culture which supports work-life balance is a long term process for organizations. It involves changing the way people think and talk about their work and about work-life balance so that using flexible working options and other work-life initiatives becomes accepted and normal for everyone regardless of their gender, seniority within the organizational or personal commitments.

Happiness is not a matter of intensity but of Balance and Order and Rhythm and Harmony.

Thomas Merton

References

1. Andy McCue, "India Faces Worker Shortage," ZDNet India Home Page, June 6, 2005, <http://www.zdnetindia.com/news/national/stories/122965.html> (accessed March 8, 2006).
2. Bhargava, S & Baral, R (2009). *Work - life Balance Practices in India. Working Paper, IIT Bombay.*
3. Beauregard, Alexandra and Lesley C. Henry (2008), "Making the link between work-life balance practices and organizational performance", *Human Resource Management Review, Volume 19, Issue 1*, article available on www.sciencedirect.com
4. Goleman, D. (1998b, November-December). *What makes a leader?* *Harvard Business Review*, 93-102
5. Bretz, R.D. and Judge, T.A., (1994), "The role of human resource system in job applicant decision processes", *Journal of Management*, 20, 531-550.
6. Clarke, M., Koch, L., and Hill E. (2004), "The work-family interface: Differentiating balance and fit", *Family and Consumer Sciences Research Journal*, 33(2).
7. Delery, J.E. and Doty, D. H., (1996), "Modes of theorizing in strategic human resource management", *Academy of Management Journal*, 39, 830-835.
8. Dreher, G.F., (2003), "The effect of work-life programs on female leadership at the top", *Human Relations*, 40, 541-560.
9. Eby, L.T., Casper, W. J., Lockwood, A., Bordeaux, C., Brinley, A., (2005), "Work and family research. Content analysis and review of the literature", *Journal of Vocational Behavior*, 66, 124-139.
10. Hudson Resourcing. (2005), *The case for work/life balance: Closing the gap between policy and practice.* Hudson Australia and New Zealand available on www.hudson.com
11. Kodz, Kersely, Strebler and O'Regan, (1998), *Breaking the long hours culture*, Institute for Employment Studies, Sussex University, IES report 352.
12. Konard, A.M., and Mngel, R., (2000), "The impact of work-life programs on firm productivity", *Strategic Management Journal*, 21 (12), 1225-1235.
13. McDonald, P., Bradley, L., & Brown, K. (2005), "Explanations for the provision utilization gap in work-family policy", *Women in Management Review* (in press).
14. McPherson, Mervyl and Reed Phillippa, (2007), *The role of managers in worklife balance implementation. Labour, Employment and Work in New Zealand.*
15. Yeandle, S., Crompton, R., Wigfield, A. and Dennett, J., (2002), *Employed careers and family-friendly employment policies*, Joseph Rowntree Foundation Policy Press, London.

Changes In Histopathology of Rice Plant Due To Blast Disease Caused By *Pyricularia Oryzae* (L.)

Dr. Rohini Maheshwari

Lecturer, Government College, Bundi



shodhshree@gmail.com

The infection processes exhibited by plant pathogenic fungi are typified by infected host plant cells, remaining alive for several days (Sarah *et al* 2001). The plant may lead to disease and necrosis involving the movement of the pathogen towards the host, attachment of the pathogen to the plant surface, penetration of host by the pathogen, and the proliferation of the pathogen inside the host immediately following entrance (Huang 1986). Host parasite interaction due to infection is helpful to understand the shift in host metabolism. Madhavi *et al* (2005) studied the histological characteristics in six wild *Helianthus* species and in cultivated sunflower following infection with *Alternaria helianthi*. Aggarwal *et al* (2008) reported mechanism of resistance and histopathological changes in wheat that occurred due to pathogen *Biopolaris sorokiniana* attack and observed colonization pattern by fungal hyphae and necrotic lesions on the leaf surface. Veerbhadraswami *et al* (2011) studied the host parasite interaction between *Cephalosporium acermonium* and maize (*Zea mays*) seedling in Belgaum district, Karnataka. The microscopic observation revealed the presence of pathogen mycelium at both inter and intra cellular root tissue of host plant.

Rice blast is characterized by definite changes in host plant morphology and anatomy causing visual and remarkable changes in anatomy of the plant. Histopathological changes in the leaf structure of diseased plant has been carried out and compared with the anatomical features of healthy leaf to know the effect and severity of blast fungi on rice plant as a result of infection by pathogenic blast fungus *Pyricularia oryzae cav.* in healthy rice plant. The present study was done to know the process of infection, invasion and histopathological changes brought about by the pathogen in the host cultivar.

Material And Methods

The blast infected *Oryza sativa* cultivar Pusa Basmati- 1121, plants were collected from the fields of different localities Of Bundi district of Rajasthan. The isolation, purification and culture of *Pyricularia oryzae* and its pathogenicity test was further confirmed the pathogen infection according to

Koch's postulates.

In order to find out any difference in the pattern of colonization of leaf tissues by the pathogen, inoculated leaves of rice were studied and compared with un-inoculated rice plant leaves. Thin and fine sections of leaves were cut of the healthy and infected leaves and passed through 30%, 50%, 70%, 90%, 95% and absolute alcohol series for dehydration, then stained with safranin in case of healthy leaf. The infected leaf was stained with both safranin and cotton blue. The leaves were then mounted in anhydrous glycerol for histological examination.

Observations

Histopathological study of rice leaf (plate 1 and 2)

Anatomy of healthy leaf:

The micrograph illustrated in plate 1 showed the typical anatomy of a rice leaf blade. The leaf anatomy was consisted of three basic tissues epidermis, mesophyll tissues and vascular bundles. The upper (adaxial) and lower (abaxial) epidermal cells formed the boundary of the leaf blades. The upper epidermis was protected by a layer of cuticle. Stomata interrupted the epidermal layer at both the surfaces. The thorn like structures called trichome, were also present on the epidermal layer. In the upper epidermis a specialized group of cells called as bulliform cells, also termed as motor cells was found. These cells were located in the upper epidermis near the midrib and were also located between stomatal rows on the upper side of the leaf epidermis. These bulliform cells were highly vacuolated and thin-walled and non lignified cell wall. The mesophyll tissues representing the main photosynthetic area, was located in between the two epidermal layers comprised of parenchymatous cells having large intercellular spaces and densely packed chloroplasts along with the other cell organelles. The vascular bundles within leaf veins consisted of xylem and phloem tissues. The xylem tissue was consisted of vessels and tracheidial elements and phloem

tissue was consisted of companion cells. The vascular bundles were arranged parallel to each other throughout the leaf in a linear manner. The anatomy of healthy rice leaf is characterized by papillate epidermis, motor cells, parenchyma cells and usually by large intercellular spaces in photosynthetic areas.

Anatomy of Diseased Leaf:

The affected tissue was classified into three regions

- (1) Disintegrated tissue
- (2) Necrotic tissue and
- (3) Semi necrotic tissue

Disintegrated Tissues

The disintegrated tissues displayed a greyish white or yellow-brown color in the center of the spots, and in the section which was seen clearly withered and desiccated. There was complete loss of matter inside of the cells and part of the membrane was lost. The remaining cells appeared to be pressed from above and below, and their thickness was reduced and looked dried out. Frequently rough brown hyphae were observed in the disintegrated tissues. Usually there were more hyphae in the vascular bundles than in the assimilatory tissues. In the disintegrated area the formation of pathogenic conidiophores were observed. Conidiophores were bunched together and pushed outwards by forcing the stomata.

Necrotic Tissues

The necrotic section was the part surrounding the outer edge of the disintegrated section. Here the coloration of the infected tissue was dark. This section was seen slightly around the disintegrated section in and around the vascular bundle in the disintegrated section or near the motor cells. The cell walls were not yet severely disintegrated and were brown. The contents of the cells were completely lost. In the necrotic section a few rough hyphae were seen in the cross section close to the disintegrated region. The pathogenic hyphae were seen not only in

the assimilatory tissue, but also in the epidermis, sometimes in the vascular bundle.

Semi necrotic tissues

The semi necrotic section when observed from the outside was the part outside of the dark-colored band. It was presented as light yellow green or light yellow brown colored. The border between this part and the outer healthy part was indistinct. In this portion no pronounced tissue deterioration was visible although it had been invaded directly or indirectly by pathogens. The deterioration of diseased tissue, especially cell content in the semi necrotic area was very complex. The cell walls naturally became markedly brown in colour and many hyphae were detected only in one part of the vessel.

Disease cycle and Epidemiology (plate 2)

After landing of conidia on the leaf surface, the spores germinated due to availability of leaf moisture. The conidia produced infection peg and penetrated into the leaf through epidermal layer. The fungus grew in the leaf tissues and lesions on the young leaves appeared within fifteen days after infection. The fungus in leaf tissues reproduced asexually forming the conidia. The conidia formed in these tissues served as the source of secondary inoculums. The conidia were then disseminated by wind to nearby healthy leaf tissues. The cycle of disease was repeated many times during growing season. The infected seeds served as the source of primary inoculum.

Result And Discussion

The effect of blast disease caused by *Pyricularia oryzae* was visualized in the internal tissues of the leaf when observed microscopically. Many alterations in the normal anatomical structures of leaf tissues had been observed. There was loss of matter inside of the cells and parts of the membrane were lost. Frequently rough brown hyphae were observed in the infected tissues with lateral branches of mycelium. The results of the present findings were in corroboration with many previous workers such as Singh *et al* (2004), Sesma and Osbourn (2004), Valent

(2004), Nandkumar *et al* (2009). However, the mechanism of disease resistance is yet to be elucidated. Hence, studies on germination of conidia on the leaf surface, penetration by the germ tubes, and colonization in the leaf tissue of rice plant were undertaken. The sequence of events taking place from conidial germination to successful establishment, as observed for this host-parasite system, is in agreement with what has been described by Lilian Z de Luna *et al* (2002) in the case of infection of *Curvularia tuberculata* and *C. oryzae* on rice plant. Roetschi *et al* (2001), Bohman *et al* (2004) and O'connel *et al* (2004) also studied the cellular basis of host pathogen interactions.

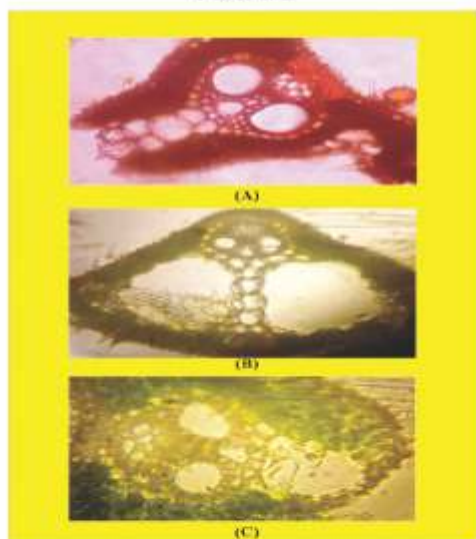
This piece of work was organized to perform a close examination of the morphological and anatomical structure of blast infected rice plant along with the epidemiological study of fungus. Aiming to understand how diseases interact in the field, it was further concluded that increased focus should be placed on considering the dynamics of plant growth along with epidemiological development. The present observations and results could provide a structural rationalization for expression of partial resistance.

References

1. Agarwal R, Das S, Jahani M and Singh DV (2008). Histopathology of spot blotch disease of wheat caused by *Biopolaris sorokiniana* (Teleomorph; *Cochliobolus sativus*). *Acta phytopathologica etEntomologica Hungarica*, 43(1):23-30.
2. Bohman S, Staal J, Thomma BP, Wang M, Dixelius C (2004) Character isolation of an *Arabidopsis-Leptosphaeria maculans* pathosystem: resistance partially requires camalexin biosynthesis and is independent of salicylic acid, ethylene and jasmonic acid signalling. *Plant J*, 37: 9-20
3. Huang J (1986) Ultrastructure of Bacterial Penetration in plants. *Annual Review of Phytopathology*, 24: 141-157.
4. Lilian Z de Luna, Alan K Watson and Termothy C Paulitz (2002). Reaction of Rice (*Oryza sativa*) Cultivars to Penetration and Infection by *Curvularia tuberculata* and *C. oryzae*.

5. Madhavi K J, Sujatha M, Raja Ram Reddy D and Chander Rao S (2005). Culture characteristics and histological changes in leaf tissues of cultivated and wild sunflowers infected with *Alternaria helianthi*. *Helia* 28(43): 1-12.
6. Nandakumar R, Shahjahan AKM, Yuan X, Dickstein E, Groth DE, Clark CA, Cartwright R, and Rush MC (2009). *Burkholderia glumae* and *B. gladioli* cause bacterial panicle blight. *Plant Disease*, 93(9):896-905.
7. O'Connell R, Herbert C, Sreenivasaprasad S, KhatibM, Esquerre-Tugaye MT and DumasB (2004). A novel *Arabidopsis-Colletotrichum* pathosystem for the molecular dissection of plant-fungal interactions. *Mol PlantMicrobe Interact*, 17: 272-282.
8. Roetschi A, Si-AmmourA, Belbahri L, Mauch Fand Mauch-Mani B (2001) Characterization of an *Arabidopsis-Phytophthora* pathosystem: resistance requires a functional *PAD2* gene and is independent of salicylic acid, ethylene and jasmonic acid signalling. *Plant J*, 28: 293-305
9. Sarah E Perfect and Jonathan R Green (2001). Infection structures of biotroph and hemibiotrophic fungal plant pathogens. *Molecular plant pathology*, 2(2):101-108
10. Sesma A and Osbourn AE (2004). The rice blast pathogen undergoes developmental processes typical of root infecting fungi. *Nature*, 431:582-586.
11. Singh M P, Lee F N, Counce P A, and Gibbons J H (2004). Mediation of partial resistance to rice blast through anaerobic induction of ethylene. *Phytopathology*, 94:819-825.
12. Valent B (2004). Plant disease: Underground life for rice foe. *Nature*, 431: 516-517.
13. Veerabhadraswamy AL and Raj Kumar HG (2011). Host pathogen interaction between *cephalosporium acremonium corda* and maize (*Zea mays*) seedlings. *J. Mycol Plant pathol*, 41(3): 445-450.

PLATE 1



Rice in Transverse Section

(A) Healthy Leaf

(B) Infected Leaf

h=Fungal hyphae in intercellular space

(C) Infected Leaf With Distorted Cells

dt=Disintegrated tissues, nt=Necrotic tissues,

M=Mycelium, S=Spores

PLATE:2



(A) Surface of Infected Leaf Showing Fungus *Pyricularia oryzae*

FH=Fungal Hyphae

C= Conidiophore bearing conidia

S= Spore/Conidia

(B) Diagrammatic representation of life cycle of blast fungus

Corporate Social Responsibility (CSR) and Social welfare: Creating a Better World Through Business

Dr Minakshi Kumawat
Pune (Maharashtra)



shodhshree@gmail.com

The Business of Business should not be about Money. It should be about responsibility. It should be about public good, not private greed.

- Anita Roddick, founder- Body Shop

The way Corporate Social Responsibility (CSR) is assumed and acted upon, differs greatly for each organization and nation. CSR is a concept with many definitions and practices. Furthermore, CSR is a very comprehensive concept that touches various subjects of human life such as human rights, corporate governance, health and safety, environmental effects, working conditions and contribution to economic development. There may be numerous definitions of CSR but the purpose of CSR is to drive change towards sustainability, a development that meets the need of present, without compromising the ability of future generations, to meet their own needs.

This concept of CSR coined in the 1950's in the United States but it became dominant in early 1970s. USA had faced ample amount of social problems including poverty, pollution and unemployment during those times. Consequently a huge fall in the prices of Dollar was witnessed. Corporate Social Responsibility became a matter of utmost importance for diverse groups demanding change in the business. During the 1980's to 2000, corporations recognized and started accepting a responsibility towards society.

Furthermore, CSR is a concept where corporate houses and companies integrate social and environmental concerns in their business operations and interactions with their stakeholders. A main objective of CSR is "Building a better and sustainable way of life for the punier segment of society and boost the human development index of the country.

Why CSR

The need of CSR depends upon the concept of organization to realize that government alone will not be able to get success in its endeavor to uplift the downtrodden of society. Corporate Social Responsibility is about an

organization taking responsibility for the impacts of its decisions and activities on all aspects of society, the community and the environment. Corporate Social Responsibility not simply just about donations or double-sided printing to preserve trees, but it's relating to the contribution towards health and welfare of the society, visible and ethical operations in life. The Businesses must have this way of operating embedded in to their operations rather than an afterthought.

According to the International Institute for Sustainable Development, key areas that CSR addresses are "environmental protection and the wellbeing of employees, the community and civil society in general, both now and in the future." When a company takes it upon itself to commit to a certain responsible investment, it effectively communicates to its stakeholders-investors, employees, suppliers, creditors, trade unions, community members, consumers, government agencies, concerned non-governmental organizations and the public sphere—that it recognizes the importance of social welfare and can be counted on to be part of the solution, make ethical decisions and do the right thing. Society at large benefits greatly with different CSR efforts by being ensured of product safety and quality, having access to corporate-sponsored community education, employment, housing and anti-poverty programs, being beneficiaries of employee volunteer outreach activities and receiving charitable contributions.

It is not only the society which is benefited from CSR, but the organizations also realize the multifold benefits in return. The major benefits to the organizations includes:-

➤ **Public Idols**

In today's time consumers are considerate to shopping at the institutes that contribute towards welfare of the society. Companies that exhibit their commitment to various causes are considered as less selfish than companies whose corporate social responsibility endeavors are absent.

➤ **Augments Employee Engagement**

Employees like working for a company that has a good public image and is constantly in the media for positive reasons. They have a sense of belongingness and feel proud to be part of social welfare through their organization.

➤ **Drives Investment**

By donating money to nonprofit organizations and encouraging their employees to volunteer their time, organizations demonstrate to investors that they don't just care about profits. Instead, they exhibit that they have an interest in the local and global community

➤ **Funding Welfare by Matching gift Program**

Majority of the top Corporations that offer matching gift programs essentially double the donations that its employees are giving to eligible nonprofit organizations. This results in increased employee engagement.

➤ **Positivity at Work Place**

When corporations exhibit humanitarian behavior, they are more likely to provide employees with a positive workplace. Consequently, employees feel engaged and productive when they walk into work each day

➤ **Creative employees**

Employees who know that their employer is committed to enhancing the local and global communities feel a stronger connection to the company. Because of this close relationship that employees share with their company, workers feel more inclined to be productive and creative.

➤ **Promotes individuals Humanity**

When employees observe their organizations involved in charitable endeavors, it play follow the leader and they begin to engage in their own philanthropic activities. The act of individual philanthropy create a better and kind world which proliferate the concept of

“sarvajana hitay, sarvajana sukhay” (For the Gain of The Many and for the Welfare of the Many)

CSR in India:-

In India the tradition of CSR is very old same as other countries but CSR practices are not regularly practiced or done only in namesake especially by MNCs with no cultural and emotional attachments to India. Lot of efforts have been done in recent years to make Indian Entrepreneurs aware of social responsibility as an important segment of their business activity but CSR in India has yet to receive widespread recognition.

The development of CSR in India can be understood in 4 different stages, which runs aligned to the India's historical development. However the phases are not static and the landscapes of any phase may overlap other stage.

Phase-1

The main drivers of CSR in this phase were charity and human welfare. During the pre industrialization period which existed till 1850, well-off merchants shared a part of their wealth with the larger society by way of setting up temples and charity for a religious cause. Furthermore, these merchants helped the society in getting over times of famine and epidemics by providing food from their stores and money and thus creating a primary position in the society. After 1850, when colonial rule came to India, the CSR approach changed greatly. The industrial families of the 19th century such as Tata, Godrej, Bajaj, Modi, Birla, Singhania were strongly inclined towards economic as well as social considerations.

Phase-2

The second phase lasted during the independence movement in India. During this time, there was increased stress on Indian Industrialists to demonstrate their dedication towards the progress of the society. The nation of “trusteeship” was introduced by Mahatma Gandhi, according to which the industry leaders

had to manage their wealth so as to benefit the common man. Gandhi's inspiration put pressure on various Industrialists to act towards building the nation and its socio-economic development. Under his guidance, businesses established trusts for schools and colleges and also helped in setting up training and scientific institutions

Phase-3

This is the phase between 1960 and 1980. This has its relation to the elements of mixed economy. Rise of PSU and labour laws & environmental standards were formulated. PSUs were set up by the state to ensure suitable distribution of resources (wealth, food etc.) to the needy. Nevertheless, the public sector was effective only to a certain limited extent. This was a vital factor which for the shift of expectation from the public to the private sector and their lively involvement in the socio-economic development of the country became absolutely necessary. A national workshop on CSR was setup by Indian Academicians in 1965 which was focused on reconciliation. The emphasis was upon transparency, social accountability and regular stakeholder dialogues. In spite of such attempts the CSR failed to catch steam.

Phase-4

This is the current phase which commenced from 1980. In this phase Indian companies started abandoning their traditional engagement with CSR and integrated it into a sustainable business strategy. Globalization has transformed India into an important destination in terms of production and manufacturing bases of TNCs are concerned.

From the point of inception of CSR in India, Popular corporate houses such as Tata sons, Aditya Birla Group, Mahindra & Mahindra group, Maruti Udyog, Siemens, L&T, Coca-cola India, Steel Authority of India and Infosys are working on different projects under CSR. The main objective of CSR in these days is to maximize the company's overall impact on the society and stakeholders. Companies have dedicated CSR teams that define policies and strategies, set goals

for the CSR programs and plan set yearly budget to fund them. A brief of different CSR initiatives major corporates in India is as given below:-

Tata Steel Tribal Language Preservation Project:-

No success or achievement in material terms is worthwhile unless it serves the needs or interests of the country and its people.

- J R D Tata

This project was started by Tata Steel's Tribal Cultural Society four years ago, has not only received overwhelming response, but produced over 1000 tribal teachers in Jharkhand. As per Mr Biren Bhuta, Chief of Corporate Social Responsibility (CSR), "This project was started to preserve Santhali Script 'Ol-chiki' and Ho script 'Warang Chiti' with nine and six centres respectively in tribal-populated kolhan region comprising East and West Singhbhum and Seraikela-Kharswan districts on experimental basis,"

Bhuta said the centres had also generated employment opportunity for the tribal as the Society itself had appointed one teacher and one assistant teacher for each centre. The Society has also taken initiative to revive the traditional tribal sports such as Sekkor, Kati, Bahu-chor and Chhur.

Instead of all these Tata has many more relating to policy of Corporate Social Responsibility.

- Titan has employed 169 disabled people in blue collar workforce at Hosur in Tamil Nadu.
- Contribution to setting up national Center for performing arts Mumbai Tribal cultural centers showcases legacy of nine tribes in Jharkhand and Orissa
- Tata Tea has Srishti Welfare Centre at Munnar, Kerala; its various programs provide education, training and rehabilitation of children and adults in special needs.

- Tata Steel has adopted the Corporate Citizenship Index, Tata Business Excellence Model and the Tata Index for Sustainable Development. Tata Steel spends 5-7 per cent of its profit after tax on several CSR initiatives.

Aditya Birla Group Initiatives:-

On CSR front, Aditya Birla Group has an ideology that "Give a hungry man fish for a day, he will eat it and the next day, he would be hungry again. Instead, if you taught him how to fish, he would be able to feed himself and his family for a life time."

With this ideology in mind, Aditya Birla Group has a single minded goal to build modern villages that can stand on their own feet. Their 5 key focus areas are sustainable livelihood, infrastructure development, Health care, Education and Social Causes.

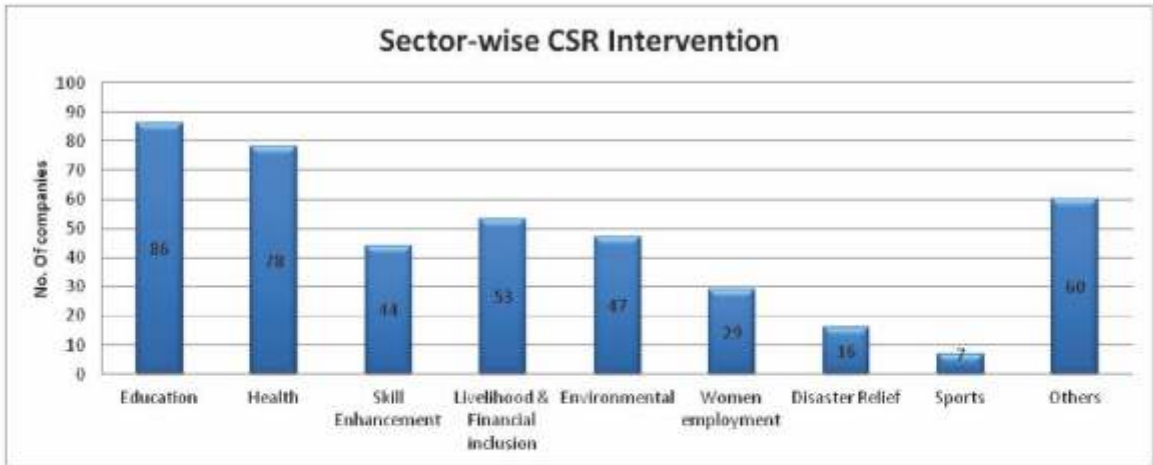
CSR and Law:-

Under section 135 of Companies Act 2013, Govt. of India has laid the requirements and guidelines on CSR. Companies meeting a certain requirement of net worth and profitability are required to spend at least 2% of their three year average annual net profit towards CSR activities in each fiscal. As per amendment to schedule VII of the companies Act 2013 made in February 2014, (A schedule listing out activities which can be included by companies in their CSR policies) contribution to technology incubators approved by the central government is considered as CSR contribution effective April 2014.

Sector wise Intercession:-

According to one of the study by SRRF, Socio Research Reforms Foundation, NGO, New Delhi, Education and the health is the most engagement sector for CSR programmes. Below diagram shows the results of this study.

Sector-wise CSR Intervention



If we look at the data, it is clear that maximum number of companies spend on Education and Health sector. The spend on Sports sector is surprisingly low. There is a need of improvement on women empowerment and Disaster relief sectors.

Major Findings

Today, CSR in India has gone beyond merely 'charity and donations' and is approached in a more organized fashion. It has become an integral part of the corporate strategy (Das Gupta 2010). But very less data available on CSR and lack of interest of the general public in participating and contributing to CSR activities, is the direct problem faced for doing such studies. A sound CSR strategy needs to be more than just a concept of 'do gooder'. A huge level of scope for transparency is required in this sector. According to one of the study, 82.4% strongly agree that business means more and more benefits. They strongly believe in the concept of making money and doing your work well. According to Professor C.S. RAO, and Professor Shyamkant Surve (An Empirical Research on Indian Context), 70.6% of the corporate connect to the community through social activities, and the 23.5% through specific NGO.

Conclusion:-

A study conducted by Economic Times, Partnered with Futurescape and IIM Udaipur to find the best companies for CSR had 115 companies

participated in 2014, whereas in 2015 the participation had risen up to 216. Several new companies had made the competition tougher to find a place in top 10 best CSR companies for 2014. The study showed that only about 18% of all companies surveyed met the mandatory 2% spending norm. There was not a single service company was featured in the top 10 list.

These facts indicate that companies need to have more strategic thinking towards CSR. For now, companies are engaging with communities in limited areas. Mainly education, health and Environment related areas are in focus but there is a need of addressing area like women's empowerment, safety, remove poverty by creating more employment opportunities needs more attention. Having said that, the top 10 corporates featured in this report are veterans, with a tradition of executing and monitoring CSR projects. Others can learn from them.

In the year 2013-14, CSR study finds that many companies have topped up operations in CSR and are looking at it as a priority. Mahindra and Mahindra leads the pack. Compared with the previous study, it has jumped two ranks. There are four Tata group companies in the top 10 list. GAIL replaces SAIL in the public sector honors while Bharat Petroleum joins the top ten list. Interestingly no foreign players make it to the top 10 list. Jubilant Life Sciences, a healthcare company, has entered the top ten list.

CSR Rank	Company (2014)	Company (2013)
1	M&M	Tata Steel
2	Tata Power Co.	Tata Chemicals
3	Tata Steel	M&M
4	L&T	Maruti Suzuki India
5	Tata Chemicals	Tata Motors
6	Tata Motors	Siemens
7	GAIL (India)	L&T
8	BPCL	Coca-Cola India
9	Infosys	SAIL
10	Jubilant Life	Infosys

After Companies act making it mandatory to spend 2% of the average net profit for the corporates, the contribution toward CSR has

increased. However, As per India CSR Outlook report 2015 the actual CSR spend was 79% of the prescribed budget. Below fig shows the statistics.



Prescribed CSR Spend FY-2014-15	7040
Actual CSR spend in FY-2014-15	5563
Actual CSR spend in %	79%
Prescribed CSR spend in FY 2015-16	8016
% increase in prescribed CSR budget from previous year	13.9%

Source:- ngobox.org- a snapshot of CSR spend FY 2014-15, Oct2015

In this way it is concluded that CSR impacted throughout the society. The study can be further concluded with below two slogans:-

“CSR is not a Charity, it is a necessity” - e-Poster on “CSR – integration of business goals with social goals.”

“As blood to human life, CSR is to business life.”

Suggestions:

- It should be the moral duty of each and every citizen to uplift the morality of his fellow citizen.
- The boost up plans to encourage the corporate should be launched by Government.
- Employee can also encourage themselves towards contribution to CSR activities.
- The area of CSR should be need based of that particular region.

References

1. *The economic times, politics and nations, Nov. 2, 2014*
2. <http://www.survivalinternational.org/>
3. *Indiacsr.in sustainable-livelihood-a-case-study-of-training-in-handicrafts-for-primitive-tribal-groups-in-jharkhand/*
4. <http://www.investopedia.com/terms/c/corp-social-responsibility.asp#ixzz3bO21EvvX>
5. *Frederick, W.C., The growing concern over business responsibility(California management review, vol.2, 1960*
6. *Corporate social responsibility: a case study of tata group, by Amit kumar srivastava, Gayatri negi, Vipul mishra, Shradha pandey, IOSR journal and business management(IOSRBM), ISSN: 2278-487x, Volume 3, issue 5(sep, - oct. 2012), PP 1727*
7. *"Understanding and Encouraging Corporate Responsibility in South Asia" (PDF). 2001.*

8. *www.forbs.com- Six reasons companies should embrace CSR. Feb21-2012*
9. *Cubegroup.com:- top 5 benefits of CSR, 24 July-2015.*
10. *lexicon.ft.com-CSR*
11. *Wikipedia.org-evolution of CSR in India.*
12. *Study by SRRF, Socio Research Reforms Foundation, New Delhi*

Governance of NGOs in Education Sector An Analytical Study of Rajasthan

Mushtaq Ahmed

Research Scholar, Mewar University, Chittorgarh



shodhshree@gmail.com

NGOs can play an effective role in assisting the State to complement the public education system and to improve its effectiveness. Various survey revealed that the experimental approaches of the NGOs have successfully tackled many shortcomings in schooling. NGOs involvement in education increases the accountability of the schooling system to the beneficiaries. The NGOs can establish partnerships with the Government to share their models rather than create islands of excellence. The effectiveness of NGO action is best in evidence in the successful schooling of underprivileged children, communities in remote locations, scheduled caste, scheduled tribe and other children that face social barriers to education. NGOs can find out and accordingly suggest the respective authority that targeted actions are required for specific deprived groups, for instance, the urban poor, child workers or street children. NGOs can pioneer the concepts of the voluntary teacher and the alternative school to counter teacher absenteeism and to make appropriate education available for out of school children.

To name, for example, educational activities of Bal Rashmi Socioety, Jaipur, Kalp, Jaipur, Cheer Society, Jaipur, Alwar Mewat Institute of Education and Development and IBTADA, Alwar can be mentioned here. The Organizations have successfully completed apparently impossible task for the Rajasthan Government within a short span.

Bal Rashmi Society(**BRS**) is working in some urban slums of Jaipur and over 200 villages in Rajasthan. It runs a large number of Government's programmes in these areas and is funded both by the state as well as the Central Governments. The major programmes and success achieved by it is empowerment of the formal primary and middle school level education of children from slums and villages who, but for the motivation efforts on the parts of BRS, may have never gone to any school. Five schools and six Balbadies(Kindergarten Schools) run by BRS. Enrolment of girls as high as 40% achieved. 130 Orphans and destitute children cared for and educated in the BRS homes Nirashrit Bal Graha (DCH), Ashram School (Awasiya School), Bhavishya Nirman Kendra and Kilkari Shishu Graha (Foster Home). Besides

providing good upkeep- far better than available in government run Homes or what is possible with the meagre grant given by it to BRS, special care is taken to install values essential to making of a good citizen. Young Children and infants rehabilitated into foster homes to be brought up in a family atmosphere.

Alwar Mewat Institute of Education and Development (AMIED) initially worked in 3 villages of Umren and Ramgarh blocks of Alwar district with approx. 4,098 children in schools. Currently AMIED works in 115 villages in three blocks for Children's Right to Education. The core strategy of this organisation is community mobilisation and engagement with children, through which they believe they can bring change in the lives of the children. Their innovative education programmes have resulted in increased engagement with children in the community.

IBTADA mainly focuses on girl child education in Mewat region. Due to the inferior status of women in Mewat region, education and well being of girl child is largely neglected. The education system has not been effective to reach out to the girl child. The community has also its own myths and reservations about educating girls. In-depth discussions, participatory problem analysis and planning have helped IBTADA to evolve a community based education system, as a result IBTADA started separate learning centers for the girls called Taleemshalas.

The underlying philosophy of Taleemshalas is closely knit with basic human rights. It treats the child a human being first and a student later. It promotes democratic processes in the school and equitable relationship between student and teacher.

Taleemshalas follow modern approaches of education such as no class or standard system, no examinations or one time testing of students' abilities. The child has flexibility to learn at her own pace. It focuses on quality education centered on the time availability, needs and learning ability of the girl child, and

strengthening the community drive for education of their children. This is all the more appropriate for our girl students who cannot make to the school regularly. IBTADA has 121 Taleemshalas with 3350 girls studying.

Governance of NGOs

Governance is the procedure of providing overall vision, direction, purpose and oversight to an organization through a structure, such as Board of directors separate from day to day management of the organization.

Too often it is seen that governance stays off the agenda until the point where failures in governance reach crisis stage. In NGOs good governance is exercised through internal systems of checks and balance that divides power and authority between management and a governing body to ensure that the public interest is saved.

Why NGOs can have Governance Problems?

NGOs often find themselves embroiled in disagreements over what the board should and shouldn't be doing. Some Boards are seen as too 'hands off' by staff, and others as 'micro-managers', scrutinizing every small detail of an organisation's operations.

NGOs appear to have more governance problems than for-profit organisations because the question of who owns the organisation is complex. In a for-profit situation, the company belongs to the shareholders, or the owner. In a NGOs situation, employees feel their commitment to the organisation (often for less pay and more hours) as a kind of ownership. So they feel they have a right to make input to the running of the organisation.

This is complicated by the fact that funding bodies can feel they have ownership rights to the organisation - after all, they're putting up the cash. Clients and customers, in receiving services, may feel they have an ownership role as well.

A further issue is that NGOs are often governed by a voluntary board, even if they have paid staff. This may mean that the Board has very little knowledge or experience in organisational

governance, and this may lead to disputes over its role. Using voluntary board members, who will usually have their own jobs and life to concentrate upon, may also mean that paid staff have much greater knowledge and understanding of the organisation and board processes, leading them to "manage up" - or do much of the Board's governance role for them.

To top this off, in non-profits there are often conflicting and emotive attitudes about the core vision and values of the organisation.

One governance problem is resolved only to be followed by another. It is fairly certain the board needs to sit down, consult with staff, and agree on the relative limits of board and staff responsibilities. In times of change, the board needs to explain itself more and involve staff more in its decisions.

Problem of Governance

Analyzing the information received from five NGOs workers and key-informants, the overall scenario of the problems of governance in NGOs of education sector has been summarized below:

1. Role of the Governing Body

The governing body is formed according to the choice of founding executive head. The governing body does not oppose the executive head's opinion and decision. Membership of the governing body is given to people for their social and political reputation although they are not able to give time to the organization. Members of the governing body often recommend for recruiting their relatives. No action is taken against the executive head although s/he acts against the interest and objective of the organization. Regular meetings of the governing body are not held. Meeting proceedings are prepared although a meeting is not held. Members of the governing body are not informed about the current programs of the organization. Most of the members do not visit the NGO except participating in meetings.

2. Roles and Responsibilities of Board and Management

Lack of clarity in roles and responsibilities is an issue in many NGOs, which impacts governance considerably. Achieving appropriate balance of power between the CMD, the CEO, and the Board is very essential for accountability.

3. Board Diversity

Board diversity is very essential for effective discharge of fiduciary duties of the board the overwhelming majority of NGO boards fail to represent or reflect the diversity of backgrounds of their beneficiaries and supporters.

4. Tenure of board members

The absence of term limits can lead to boards that are static in thinking and resist challenge or change, and this becomes a hindrance in NGO's ability to take a strategic view of current challenges. Thus majority of NGOs do not have any policy on board tenure. Role of governing boards are not well-defined and as a result, the boundaries between boards and managements are unclear and most NGOs have failed to adequately deal with internal governance structure. In context of Indian NGOs, one possible explanation for weak governance is that even after several years of establishment; founders exert disproportionate level of control and thus make it unrealistic to have independent and effective boards. Their focus is on building dynamic and effective organizations rather than one with checks and balances.

5. Decision Making Process

Executive head takes decisions unilaterally. Decisions are not taken through meetings. The original proceedings of the meeting are not recorded. There is no scope of giving opinion by general staff. Many times decision is taken to promote organizational interest of that of the executive head, without considering the need of the

beneficiaries/service recipients. Concentration of power into the hands of Chief Executive renders him/her owner of the NGO in the eyes of the employees.

6. Project Implementation, Supervision and Monitoring

Many programs are not implemented properly. There is lack of necessary supervision and evaluation in program implementation Progress and evaluation report are exaggerated.

7. Accountability to Service Recipients, Donors and Government

NGOs are not accountable to service recipients. Exaggerated reports are submitted to NGO Affairs Bureau, Donors, Local Administration, and Social Service Directorate. Financial negotiation is done for getting government project.

8. External Accountability

Most studies indicate that degree of external accountability for NGOs is low in comparison to other sectors. The current reporting requirements for NGOs place much less emphasis on governance standards as compared to financial reporting. Based on form of NGO registration, annual reports are required to include details of board recruitment processes and particulars of its governing document, but beyond these basic considerations, there is no requirement to report on whether NGO has the policies and arrangements in place that would support good governance.

9. Financial Transparency

The chief executives have unlimited discretion in financial decision. They have complete control over the communication with donors, preparing the project budget, the common fund of the organization and other crucial issues. Financial and other facilities are taken by members of the executive committee. In most cases, the

employees know nothing about the chief executive's salary and other benefits. The accountants are not independent exaggerated and wrong information is provided in the audit and financial reports. The auditor appointed for financial management is previously known and s/he is influenced. The employees are not given their salary and other benefits according to the project proposal or approved budget. A portion of the employees' salary is deducted in the name of the sustainability of the organization. Fund release process is very lengthy.

10. Human Resource Development and Grievance Procedure

There is absence of a Human Resource Policy. Even if it exists, it is not followed properly.

Necessary training is not provided to the employees. In many cases performance is not the basis of benefits provided to employees. Proper staff evaluation is not done and employees are not promoted. Grievance procedures are not properly maintained. Employees are compelled to work extra time. Financial benefits are not provided to employees for extra work. No action is taken against harassment of female staff.

11. Institutional Anomalies

The financial management system is weak in some NGOs. Employees are not recruited according to the project proposal. One employee, even if s/he works for different projects, gets salary from one project whereas salary drawn against her/him from all such projects. The chief executive can spend from the common fund upon his/her free will. The salary as mentioned in the circular is not fully paid. Salary is not paid according to the project budget, even if signatures are taken on the pay-slip. Two salary statements are often maintained to cover such irregularities. Income tax is deducted at source, but is not submitted to

the treasury. There is discrimination with regard to salaries of the high, medium, and low level staff. Properties such as vehicle, computer, and furniture bought for the organization are often used for personal purposes.

12. Institutional Management

The NGOs job description and work hour, vacations and holidays are not maintained according to the rule. The employees do not have job security. There is no provision of provident fund in many NGOs.

13. Employee Harassment, Complain System, and Grievance Procedure

The higher officials often do not show proper respect to the employees. The employees often face mental torture, and verbal abuse. In some cases there are clear complaints against higher officials for physical and mental abuses. Female employees cannot express harassments committed upon them for fear of a negative impact. The jobs of higher officials are secured even after the allegations of physical abuse against female employees are proven.

14. Training and Workshop

There is always shortage of initiatives for increasing the skill of the staff. In many cases there are no regular training programmes. Lower level employees have very limited scope to participate in training or workshop, especially if it is abroad. Members of governing body are sent abroad for training or workshop although the outcome is not beneficial for the organization.

15. Secrecy of Information

Culture of secrecy in keeping financial and accounts information is found. In most of NGOs common people do not get information easily from the organization. There is no website. There is no updated information on the website. NGOs are often reluctant to disclose information especially those on

finance and human resource management. Employees and service recipients are not informed about the policies. Information on accounts are not often documented properly. Project proposals, budget, audit report, evaluation report, general fund, accounts of the organization are often treated as highly confidential. There is no strong initiative from donors to make the NGOs disclose their documents.

16. Procurement-Related Anomalies

At the end of the project period, unnecessary procurement is done to use up the allocated fund. During the procurement process, one original and two fake quotations are collected from the same vendor. Undue payment is collected from the vendor as a pre-condition of procurement. The tender procedure is not transparent. Per diem and travel allowances are drawn against fake vouchers. Fake vouchers are produced against procurement of old properties and machineries.

17. Avoiding Tax by NGO Officials

Many NGO high officials avoid income tax by showing the basic salary less and other facilities high. The chief executive often takes salary from many projects, but does not reflect it in the accounts. Such irregularities take place with the connivance of tax consultants.

18. Poor Networking: was identified as a major challenge. It is the cause of duplication of efforts, conflicting strategies at community level, a lack of learning from experience and an inability of NGOs to address local structural causes of poverty, deprivation and under-development.

19. Poor Communications: NGOs also recognize that there is very poor communication within the sector. The NGOs have little or no access to reliable email and internet connections, they receive almost no literature on development issues and are

generally out of touch with issues of global, regional and national importance. There lack of understanding of the difference between the Board and Council is just one example of the knowledge gaps that exist.

Governance is the need of the hour in the development sector in order to ensure and promote application of best management practices compliance of law and adherence to best possible ethical standards.

Good Governance Benchmarks for NGOs :

Well drafted and comprehensive policies are good guide in dealing with difficult situations and provide framework for strengthening the structures of accountability and transparency in NGOs. There are statutory requirements to be fulfilled by NGOs based on the law under which they are registered in addition to conditions imposed by authorities who grant them exemption from income tax and to receive tax-deductible contributions, but it is equally important for NGO to adhere to principles of good governance to pursue their mission and act with responsibility to all their stakeholders.

Good Governance Benchmarks for NGOs is a set of standards to guide the actions of the board and the management for attaining high standards of upward, downward, inward and outward accountability. Before examining the criteria identified for the benchmarks, it may be helpful to understand what these benchmarks are not.

They are not a replacement for existing frameworks and codes for NGO governance. In fact some of them are drawn from some of the existing frameworks and codes. They should not be used as tools for assessing legal or regulatory compliance. Some of the benchmarks are part of legal compliance; however, the benchmarks presented go beyond statutory compliance and aim to define elements of good governance.

1. Clear, well-Articulated and Well Publicized Vision, Mission and Goals

NGO must not only have clearly defined and well-articulate vision and mission

statement- the reason or purpose for its existence and what it hopes to accomplish, but must also have goals/objectives in measurable form, to guide its activities. Goals in measurable form will also help in evaluating the program outputs and performance of the organization.

The board should revisit its vision and mission statements and goals from time to time to enable the NGO fulfill its charitable purpose in accordance with its values. Vision and mission statements and goals should be prominently displayed in their office, websites and annual reports to enable effective communication to all its directors, management, staff, volunteers, donors and other stakeholders. The matic/program based umbrella bodies may be formed by the concerned NGOs for ensuring self-regulation and due diligence. Early steps should be taken for infrastructural improvement, logistic benefit, skill development and capacity building of the NGO staff backed up by sufficient resources and incentives.

2. Strategic Planning

Few NGOs have strategic plans which would enable them to have ownership over their mission, values and activities. This leaves them vulnerable to the whims of donors and makes it difficult to measure their impact over time. Therefore there is urgent need for strategic planning to achieve mission objectives.

3. Program Implementation, Monitoring and Evaluation

Monitoring should be strengthened to achieve the goals of the project. NGO documentation process must be further improved, so that anyone may have a look on it when necessary.

4. Transparency in Appointment of Governing Board

NGO should have a clearly defined and transparently communicated policy and

procedures for appointment and induction of competent, experienced and committed board of directors. Criteria for selecting board members should be inclusive, independent, and in-depth process, aligned with NGO's vision and mission. Information about existing director's qualifications, experience, areas of expertise, and their associations should be made available to all stakeholders in their annual report and websites. Executive head's relatives must not be included in the governing body. Governing body should empower the chief executive to operate within the policy guidelines set up by the Board. On the other hand the Governing body members should perform their roles effectively so that the executive head's accountability is ensured. Effective check and balance system must be enforced. Specific code of conduct of governing body members should be available. The founder of an NGO may hold the post of Chief Executive or Chairman/Member of the governing body. In that case there should be an effective check and balance between the executive head and the governing body. The chief executive may be changed as per the governing body's decision.

5. Tenure of the Board members

Governance policies should define the tenure of membership of the governing board. There should be clarity on both, the maximum number of years that can be served in an individual term and the number of consecutive terms allowed. Absence of term limit can lead to a situation where boards go on for many years without significant change in membership and become fixed in their thinking and resistant to change and fail to take a strategic view of current challenges. It is recommended to limit board membership term to maximum of three years and not more than two consecutive terms. Turnover of the members

should be staggered so as to have right combination of experienced and new board members.

6. Written Policy on Conflict of Interest

Policy on conflict of interest should be in writing and prominently publicized for the guidance and protection of both, the organization and the individuals (board members, management, staff, volunteers and other parties related to them) involved. This will ensure propriety and confirm compliance to statutory and good governance practice requirements. The policy should also specify procedures to be followed in managing conflict of interest without denouncing the dignity of the member. This will protect organization from unethical or illegal practices. The policy should be tailored to specific organizational needs and characteristics. Every member having ability to influence decisions of the organization should be required to sign it and to disclose all potential and actual conflicts of interest from time to time (generally, annually), including each institutional affiliation s/he has that might possibly involve a conflict of interest (such as sitting on a board of another NGO with overlapping goals and missions). This policy and disclosures should be available in public domain (for example, in annual reports and on NGO website) for all stakeholders to refer to.

7. Governance Supervisory Body (Collegium)

Appointing Governance Supervisory Body is designated with the responsibility of independently monitoring governance practices. This will improve NGO's ability to identify and address any weaknesses at the earliest possible stage by ensuring that accountability remains an ongoing priority and is embedded in the organizational culture. To ensure that the board fulfills its legal, ethical, functional and fiduciary

responsibilities effectively this should include ensuring that board evaluation/assessment process is in place and to investigate any governance-related concerns raised by trustees or staff.

8. Annual General Meeting (AGM) of all Stakeholders

AGM of an NGO will have an audience of interested stakeholders. This may include beneficiaries, donors, regulators, community, other NGOs or citizen groups, media, staff and volunteers. AGM could be most effective tool for two-way communication between the NGO and its stakeholders, as other tools of communication like, annual reports, website, newsletters, etc. are one way communication. They do not give scope for comments and queries by stakeholders. The rationale behind holding AGM of an organization in non-profit sector is developing mechanism for engaging with different stakeholders and giving them opportunity to engage with the board and the NGO, review financial information, clarify their claims and interests, make suggestions and ask questions in order to demand accountability.

9. Equitable, Inclusive and Transparent staff Recruitment and Compensation Policy

It is recommended that an NGO has a well-defined non-discriminatory policy and rules with regard to human resource, gender, accounts, working hour, competitive salary and benefits and so on. Every NGO must develop and adopt its own Code of Ethics and other policies on staff recruitment and compensation. Internal transparency is as important as transparency with donors and other stakeholders. Compensation policy should be formulated to support equal pay for equal work. NGOs in their annual report disclose distribution of staff as per salary levels and gender breakup and make declaration about being an equal

opportunity organization in their communications. There should be a cell to receive complaints from NGO workers and take proper actions accordingly.

10. Ombudsman and Whistleblower Protection policy

Well drafted ombudsman and whistleblower policy sends a message that the organization will not tolerate misconduct and enables those most affected by NGO's decisions to voice their concerns and complaints in an environment free from the threat of retaliation. The policy should lay down follow-up mechanisms to ensure that complaints are acted upon in a responsible and effective manner. These complaints could be related to malpractice, impropriety, abuse of power, unlawful or unethical practice or conduct on part of any person related with the NGO. The office of the ombudsman should provide independent, confidential, impartial and informal services to the complainant or whistleblower. The whistleblower policy should contain procedures to receive, investigate and take appropriate action regarding non-compliance with law or organizational policy, and to protect whistleblowers against retaliation. This will encourage the staff to draw board and management's attention to activities that may not comply with the law or mission and values of the organization.

11. Internal and External Financial and Program Audits and Financial Transparency

Depending on the size of the organization, every NGO must have defined policy for financial and program audits, both by internal and external auditors. Audits act as a measure of the organization's health and assure donors, members, beneficiaries and other stakeholders of right utilization of the collected funds. Quarterly internal finance and program audits will help board and the management to reflect upon their

performance and if required, take corrective actions. Annual financial audit by external auditor will certify efficient and effective functioning of the organization and its adherence to standards of accountancy and legal compliance. Difference of salaries between higher and lower level especially field-workers should be bridged. The information on the salary and other benefits of the employees must be open for all. The yearly budget of every program must be disclosed. In this regard stakeholders, local citizen, journalists, researchers and government officials may be informed. Appropriate legal steps must be taken against responsible individuals in the NGO found to be involved in corruption.

12. Accountability to Stakeholders, Government and Donor

The development partner, along with providing fund to a project, should monitor and evaluate the activities of the concerned NGO. They may stop their fund immediately if any irregularities are found. The development partners should adopt and implement a policy of not receiving different types of hospitality, such as food, lodging or gifts, offered by NGOs. The information provided by the consultants, evaluators or auditors should be checked.

13. Declaration of the important Ratios Related to Funds Utilization in the Annual Report

Efficient management of collected funds, which may include utilization, corpus, and investment, is among the most essential responsibility of the board. NGO should maintain desirable ratio in fund allocation. Major portion of the collected funds should be used for the purpose for which it is collected. At the same time there should be sufficient funds to support management, administrative and fundraising activities of the NGO. It is desirable that a healthy balance that denotes an active as well as relatively

sustainable NGO is maintained between corpus fund and general fund depending upon the size and the programs of NGO.

14. Policy of Social Audit

Social audit is a multi-stakeholder downward and horizontal accountability mechanism. It is value based bottom up approach that aspires to address the issue of holistic sustainability, relevance and effectiveness of the programs, activities and systems of NGO by its beneficiaries and community at large. Need for social audits cannot be overemphasized given the large amount of funds that are pouring in and wide range of activities that NGOs are involved with and its ability to impact millions, specifically when at times there could be conflicting dynamics in the interest of various stakeholders. For meaningful social audits, it is important that the beneficiaries and community are empowered enough to make the NGO and its board accountable. Thus NGOs are recommended to develop proper policies and methodology in this regard. The frequency of audits can be determined based on the life cycle stage and the size of NGO. Social audit adds to credibility of the organization and is a test for quality of trusteeship duties performed by the governing board.

15. Annual Governance Compliance Certification by External Agency

Efforts should be made to develop its own website which should be uploaded regularly. Annual disclosures by the NGO on their website and annual reports should include governance compliance certification by the auditors or practicing company secretary. This report should include, Non-compliance with any statutory requirement if any. If not, a statement that all statutory norms have been complied. Compliance report with exception if any on any voluntary code of governance that the board has adopted

16. Access to Information

All information of an NGO should be made accessible to the public, especially its stakeholders. Information dissemination should be institutionalized rather than being dependent on one individual.

The study in question on process of governance in NGOs in education sector in Rajasthan was undertaken to bring out overall picture of NGOs to find out problems in governance and to suggest certain recommendations as a way out for promoting accountability, transparency and good governance in education sector. Once implemented in true spirit, these recommendations will go a long way in making substantial improvements in overall working of NGOs in education sector not only in Rajasthan but world over.

References

1. *Education Status Report-Rajasthan- working paper 2013 Anju Gupta Catalyst Management services(CMS)CEI-India.*
2. *Directorate of Economics and statistics, Rajasthan, Yojana Bhawan Jaipur, 2011.*
3. *Role of NGOs in Promoting Education* Posted by: M. Burhanuddin Qasmi
4. *Role of NGOs in Education Sector Development Programme in Developing Countries- Mojibur R. Doftori, Ph.D. Department of Education, 33014 University of Tampere, Finland.*
5. *Organisational problems of NGO -Ibrahim Aksel, Muhtesen Baran.*
6. *Widespread challenges of NGOs in developing countries: Case studies from Iran- Ali Akbar Bromideh.*

Study of Consumer Behaviour and Its Evolution

Surbhi Sancheti

Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur



shodhshree@gmail.com

Consumer behaviour has been always of great interest to marketers. The knowledge of consumer behavior helps the marketer to understand how consumers think, feel and select from alternatives like products, brands and the like and how the consumers are influenced by their environment, the reference groups, family, and salespersons and so on. A consumer's buying behavior is influenced by cultural, social, personal and psychological factors. Most of these factors are uncontrollable and beyond the hands of marketers but they have to be considered while trying to understand the complex behavior of the consumers. Consumer is the study "of the processes involved when individuals or groups select, purchase, use, or dispose of products, services, ideas, or experiences to satisfy needs and desires" (Solomon 1995, 7) Consumer consumption process, within a consumers' self and his environment.

- This interaction takes place between three elements viz. knowledge, affect and behavior.
- It continues through pre-purchase activity to the post purchase experience.
- It includes the stages of evaluating, acquiring, using and disposing of goods and services.

Consumer behavior involves the psychological processes that consumers go through in recognizing needs, finding ways to solve these needs, making purchase decisions (e.g., whether or not to purchase a product and, if so, which brand and where), interpret information, make plans, and implement these plans (e.g., by engaging in comparison shopping or actually purchasing a product). Consumer behavior incorporates concepts from psychology, sociology and social anthropology, marketing and economics. It attempts to understand the characteristics of individuals, their demographics and behavioral variables and influences on the consumer from groups such as family, friends, sports, reference groups, and society in general.

Factors Influencing Consumer Behavior

There are 4 main types of factors influencing consumer behavior: cultural factors, social factors, personal factors and psychological factors.

Culture and Society: Cultural factors are coming from the different components related to culture or cultural environment from which the consumer belongs. For a brand, it is important to understand and take into account the cultural factors inherent to each market or to each situation in order to adapt its product and its marketing strategy. As these will play a role in the perception, habits, behavior or expectations of consumers. Throughout his existence, an individual will be influenced by his family, his friends, his cultural environment or society that will "teach" him values, preferences as well as common behaviors to their own culture. Culture is crucial when it comes to understanding the needs and behaviors of an individual.

The subcultures are often considered by the brands for the segmentation of a market in order to adapt a product or a communication strategy to the values or the specific needs of this segment. Subcultures are the nationalities, religions, ethnic groups, age groups, gender of the individual, etc. A society is composed of several sub-cultures in which people can identify. Subcultures are groups of people who share the same values based on a common experience or a similar lifestyle in general.

Social Class: We often assume three general categories among social classes : lower class, middle class and upper class. Even if it's very large groups, we usually find similar values, lifestyles, interests and behaviors in individuals belonging to the same social class. For example, Face book has become a cultural trend. The social network has widely grew to the point of becoming a must have, especially among young people. By social pressure, desire to conformity or belonging to a group, desire to "follow fashion trends" or simply due to the high visibility provided by media, consumers will be influenced, consciously or

unconsciously, by these trends. They affect behavior and shopping habits of consumers and may be related to the release of new products or become a source of innovation for brands.

Cultural Trends: Cultural trends or "Bandwagon effect" are defined as trends widely followed by people and which are amplified by their mere popularity and by conformity or compliance with social pressure. The more people follow a trend, the more others will want to follow it.

Social Factors: Social factors are among the factors influencing consumer behavior significantly. They fall into three categories: reference groups, family and social roles and status.

Reference Groups and Membership Groups:

The understanding of the specific features (mindset, values, lifestyle, etc.) of each group allows brands to better target their advertising message. The influence level may vary depending on individuals and groups. The membership groups of an individual are social groups to which he belongs and which will influence him. The membership groups are usually related to its social origin, age, place of residence, work, hobbies, leisure, etc. Because the individual can also be influenced by a group to which he doesn't belong yet but wishes to be part of. This is called an aspiration group. This group will have a direct influence on the consumer who, wishing to belong to this group and look like its members, will try to buy the same products. More generally, reference groups are defined as those that provide to the individual some points of comparison more or less direct about his behavior, lifestyle, desires or consumer habits.

Within a reference group that influences the consumer buying behavior, several roles have been identified:

The Initiator: the person who suggests buying a product or service,

The Influencer: the person whose point of view or advice will influence the buying decision. It may be a person outside the group (singer,

athlete, actor, etc.) but on which group members rely on. The person who will choose which product to buy. In general, it's the consumer but in some cases it may be another person.

The Decision-Maker: the person who will buy the product. Generally, this will be the final consumer.

The Buyer: We all kept, for many of us and for some products and brands, the same buying habits and consumption patterns that the ones we had known in our family.

Family: The family may be the most influencing factor for an individual. It forms an environment of socialization in which an individual will evolve, shape his personality, acquire values. But also develop attitudes and opinions on various subjects such as politics, society, social relations or himself and his desires.

The Social Role and Status: The social role and status profoundly influences the consumer behavior and his purchasing decisions. Social status meanwhile reflects the rank and the importance of this role in society or in social groups. Some are more valued than others. A social role is a set of attitudes and activities that an individual is supposed to have and do according to his profession and his position at work, his position in the family, his gender, etc. and expectations of the people around him. The position of an individual within his family, his work, his country club, his group of friends, etc.. – All this can be defined in terms of role and social status. Decisions and buying behavior are obviously also influenced by the characteristics of each consumer.

Personal Factors: A consumer does not buy the same products or services at 20 or 70 years. His lifestyle, age and way of life: The factors influencing the buying decision process may also change. For example, the "social value" of a brand generally plays a more important role in the decision for a consumer at 25 than at 65 years. For example, during his life, a consumer could change his diet from unhealthy products (fast food, ready

meals, etc.) to a healthier diet, during mid-life with family before needing to follow a little later a low cholesterol diet to avoid health problems. Values, environment, activities, hobbies and consumer habits evolve throughout his life.

The lifestyle of a consumer will influence on his behavior and purchasing decisions. For example, a consumer with a healthy and balanced lifestyle will prefer to eat organic products and go to specific grocery stores, will do some jogging regularly (and therefore will buy shoes, clothes and specific products), etc. The lifestyle of an individual includes all of its activities, interests, values and opinions.

In order to attract more customers, many brands are trying to develop an image and a personality that conveys the traits and values - real or desired - of consumers they are targeting. These two concepts greatly influence the individual in his choices and his way of being in everyday life. It materializes into some traits such as confidence, sociability, autonomy, charisma, ambition, openness to others, shyness, curiosity, adaptability, etc.

Psychological Factors

Personality and Self-Concept: Personality is the set of traits and specific characteristics of each individual. There are two factors mainly influencing the consumers for decision making: Risk aversion and innovativeness. Risk aversion is a measure of how much consumers need to be certain and sure of what they are purchasing (Donthu and Gilliland, 1996). Highly risk adverse consumers need to be very certain about what they are buying, whereas less risk adverse consumers can tolerate some risk and uncertainty in their purchases.

Motivation

To increase sales and encourage consumers to purchase, brands should try to create, make conscious or reinforce a need in the consumer's mind so that he develops a purchase motivation. He will be much more interested in considering and buy their products. Motivation is what will

drive consumers to develop a purchasing behavior. It is the expression of a need which became pressing enough to lead the consumer to want to satisfy it. It is usually working at a subconscious level and is often difficult to measure.

Perception

Perception is a mental process, whereby an individual selects data or information from the environment, organizes it and then draws significance or meaning from it. Each person faces every day tens of thousands of sensory stimuli (visual, auditory, kinesthetic, olfactory and gustatory). Depending to his experiences, beliefs and personal characteristics, an individual will have a different perception from another.

Learning

Learning is through action. When we act, we learn. It implies a change in the behavior resulting from the experience. The learning changes the behavior of an individual as he acquires information and experience. Learning: Beliefs as well as attitudes are generally well-anchored in the individual's mind and are difficult to change

Attitude

An attitude can be defined as a feeling, an assessment of an object or idea and the predisposition to act in a certain way toward that object. Attitudes allow the individual to develop a coherent behavior against a class of similar objects or ideas.

Belief

A belief is a conviction that an individual has on something. Through the experience he acquires, his learning and his external influences (family, friends, etc.) will develop beliefs that will influence his buying behavior.

Perceived Fit

Perceived fit is an attitudinal measure of how appropriate a certain channel of distribution is for a specific product. Morrison and Roberts (1998) found that consumer's perception of the fit between a service/product and a channel is

very influential in determining whether they will consider using that channel for a specific service. In fact, perceived fit was found to be more important than consumer's preferences for the distribution method or service.

Quality

It is our aim to provide the best product for the consumer and we believe that if the products have quality the consumer will pay the price, says Amal Pramanic, regional business director. Oral B.

Packaging

Packaging establishes a direct link with the consumers at the point of purchase as it can very well change the perceptions they have for a particular brand. A product has to draw the attention of the consumers through an outstanding packaging design. Earlier packaging was considered only a container to put a product in, but today, research in to the right packaging is beginning at the product development stage itself. Packaging innovation has been at the heart of Dabur's attempt to rap with the urban consumers. It spends large sums annually on packaging research. -"We have been laying emphasis on aesthetics, shelf appeal and convenience for consumer" "says Deepak Manchandra, manager packaging development.

Promotion

The greatest challenge faced by companies today is holding and increasing their market share and value. This is always a strenuous exercise and one of the tools for the same is marketing. There is no specific game rule available for using these marketing tools. The reason is: each promotional tool has its own characteristics.

Familiarity with a Channel

Consumer's familiarity with a channel is a measure of the general experience they have with purchasing products through specific channels (i.e., catalog, internet, and bricks-and-mortar retailer). Through frequent use consumers should become accustomed to using the channel which reduces their apprehension

and anxiety in purchasing products through the channel.

Brand Awareness

According to Rossiter and Prey (1987), brand awareness precedes all other steps in the buying process. A brand attitude cannot be performed, unless a consumer is aware of the brand. In memory theory, brand awareness is positioned as a vital first step in building the bundle of associations which are attached to the brand in memory (Stokes, 1985).

Family Influence

A family exerts a complex influence on the behaviors of its members. Prior family influence research has focused on intergenerational rather than intergenerational influence in consumer generationalisation. As has been compellingly demonstrated, parents influence children. Yet, consumption domains clearly exist where sibling efforts may also be exerted.

Shopping Motives

Shopping motives are defined as consumer's wants and needs as they relate to outlets at which to shop. Two groups of motives, functional and nonfunctional, have been proposed by Sheth (1983). Functional motives are associated with time, place, and possession needs and refer to rational aspects of channel choice. Whereas non-functional motives related to social and emotional reasons for patronage. The functional motives included: convenience, price comparison, merchandise assortment. The nonfunctional motives entail: recreation.

The Non-Positivist Perspectives

In contrast to the traditional perspectives, the interpretive and postmodern perspectives of consumer behaviour attribute consumers with the capacity to "proactively" assign meaning to and represent their environments rather than just passively respond to them (Hirschman 1986; Calder and Tybout 1987). The interpretive perspective for example suggests, that behaviour is channeled by the content and structure of

consumers' subjective meaning systems (Holbrook 1995). The postmodern perspective of consumer behaviour firmly points to the fragmentary and fluid nature of consumers' self-identity. Firat et al. (1995, 44) contend, that consumers frequently change their self-concepts, character, values and often transit highly contradictory value systems, lifestyles, etc., without feeling inconsistent or improper". Thus, the postmodern

perspective places great emphasis on the creativity, autonomy, and power of consumers to define and change themselves and the world in which they live through different patterns of consumption and lifestyles (Brown

1995). The non-positivistic perspectives (particularly postmodernism) question and criticize modernism's claims on philosophical, cultural, and empirical grounds. Firat and Venkatesh (1995, 240) argue that, "modernism reduces the world into simple dichotomous categories of consumer/producer, male/female and so on. Postmodernism (as does interpretivism) regards these dichotomies as unsuccessful historical attempts to legitimize partial truths." In sum, it can be argued that the new perspectives may legitimately be classified as part of the non-positivist movement, which acknowledge the social, complex, and often irrational and unpredictable nature of consumer behaviour. This view focuses on not just the process of buying, but gives equal significance to the experiential and meaningful aspects, which underpin consumption.

Conclusion

Conditions of competition are changing rapidly today and companies that strategize and react to these changes promptly and quickly are the most successful. Due to technological developments, physical differences of products have decreased. Differentiation should be made on the meanings products bear instead of on their physical features. A successful brand differentiation can be possible by building Brand Loyalty. Consumer seek brand as friend since it provides him with

emotional benefits.

Overall, it is argued that the study of consumer behaviour is rapidly evolving as researchers recognize and implement new techniques and transdisciplinary perspectives to understand the nature of purchase and consumption behaviour. This wider view attempts to study consumer behaviour in the light of rapidly evolving lifestyles, values, priorities, and social contexts.. In particular the buying process of consumer behaviour is of more importance to marketing practitioners than the consumption process. From a practitioner's perspective consumer research is pertinent so as to enable him to understand changing consumer needs, wants, and motivations and thereby devise the most appropriate mix for his market. Then, to the marketer the dynamic nature of consumer behaviour implies rapid product development, changing communications, and distribution strategies in order to be more effective.

A customer is the most important visitor on our premises,

He is not dependent on us, we are dependent on him.

He is not an interruption on our work, he is the purpose of it.

He is not an outsider in our business. He is a part of it.

We are not doing him a favour by serving him; he is doing us a favour by giving us the opportunity to do so.

Mahatma Gandhi.

References

1. Moneesha Pachauri, Nottingham University Business School, Jubilee Campus, Wollaton Road, Nottingham, The Marketing Review, 2002, 2, 319-355, ISSN 1472-1384/2002/0300319.
2. Ajzen, I. and Fishbein, M. (1977), "Attitude-Behaviour Relations: A Theoretical Analysis and Review of Empirical Research" Psychological Bulletin 84, September, pp. 888-918. In Solomon, M.R. 1995, Consumer Behaviour, 3rd ed., Prentice Hall.
3. Alba, J.W. and Hutchinson, J.W. (1988), "Dimensions of Consumer Expertise", Journal of Consumer Research, 13, March, pp. 411-454.
4. Allen, C.T. and Madden, T.J. (1985), "A Closer Look at Classical Conditioning", Journal of Consumer Research, 12, December, pp. 301-315.

An Overview on Green Marketing

Payal Chandak

Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur



shodhshree@gmail.com

The concept of green marketing was developed in the late 1980s and early 1990s. Green marketing is defined as "Green or Environmental Marketing consists of all activities designed to generate and facilitate any exchanges intended to satisfy human needs or wants, such that the satisfaction of these needs and wants occurs, with minimal detrimental impact on the natural environment and as well as Industry, to achieving the selling organization's objectives." It is efforts by businesses and organizations for production, marketing consumption and disposal of products and services happen in a manner that is less detrimental to the environment with growing awareness about the implications of global warming, non-biodegradable solid waste, harmful impact of pollutants etc. Clearly, green marketing is part and parcel of the overall corporate strategy (Menon and Menon, 1997) along with manipulating the traditional marketing mix (product, price, place and promotion); it requires an understanding of public policy processes. Green marketing also ties closely with issues of industrial ecology and environmental sustainability such as extended producers' liability, life-cycle analysis, material use and resource flows, and eco-efficiency. Thus, the subject of green marketing is vast, having important implications for business strategy and public policy. Generally terms like Phosphate Free, Recyclable, Refillable, Ozone Friendly, and Environmentally Friendly are some of the things consumers most often associate with green marketing. Green marketing must satisfy two objectives: Improved environmental quality & Customer satisfaction.

Objectives of Study

- To discuss the need for Green marketing in India from different perspectives.
- To understand the strategy needed for successful Green marketing.
- To study the present scenario and potential of Green marketing in India.
- To study the challenges faced by Green marketing team in India.

Why Green Marketing: Need of the Hour

Environmentalism has fast emerged the world over as an important phenomenon during the last decade or so owing to increasing environmental problems such as acid rain, green house effect, land degradation and ozone layer depletion. As per research, deforestation and air pollution are most important green issue in India. The results of the recently released 2011 edition of the Global Image Power green Brands Survey show that more than 60 percent of consumers globally want to buy from environmentally responsible companies. In developing countries, however, consumers say that green products have a higher inherent value. Further this research reveals that 64% of Indian consumer is ready to pay more for green product. As Green marketing mirrors the goals of traditional marketing, which is to "facilitate exchanges intended to satisfy human needs or wants." The point of difference is that green marketing seeks to accomplish that with minimal detrimental impact on the natural environment. As companies face limited natural resources, they must also develop new or alternative ways of satisfying their customers' needs. Witnessing an increase in demand for green products, business firms' has turned green and started practicing green marketing strategies. While the shift to "green" may appear to be expensive in the short term, it will definitely prove to be indispensable and advantageous, cost-wise too, in the long run.

Now the question is why are firms using green marketing?? When looking through the literature there are several suggested reasons for firms increased use of Green Marketing. Five possible reasons cited are:

1. Organizations perceive environmental marketing to be an opportunity that can be used to achieve its objectives [Keller 1987, Shearer 1990];
2. Organizations believe they have a moral obligation to be more socially responsible [Davis 1992, Freeman and Liedtka 1991, Keller 1987, McIntosh 1990, Shearer 1990];

3. Governmental bodies are forcing firms to become more responsible [NAAG 1990];
4. Competitors' environmental activities pressure firms to change their environmental marketing activities [NAAG 1990]; and
5. Cost factors associated with waste disposal, or reductions in material usage forces firms to modify their behavior [Azzone and Manzini 1994].

The last way in which cost or profit issues may affect firms' environmental marketing activities is that new industries may be developed. This can occur in two ways:

1. A firm develops a technology for reducing Waste and sells it to other firms; or
2. A waste recycling or removal industry develops [Yurman 1994]. For example, firms that clean the oil in large industrial condensers increase the life of those condensers, removing the need for replacing the oil, as well as the need to dispose of the waste oil. This reduces operating costs for those owning the condensers and generates revenue for those firms cleaning the oil.

The 2011, top 10 Green Brands in India are:

1. AMUL
2. Dabur India ltd.
3. Infosys
4. Taj Hotels
5. Britannia Industries ltd.
6. Suzlon India
7. Hindustan Unilever Ltd.
8. Wipro technologies ltd.
9. Maruti Udyog ltd.
10. Godrej Consumer Products

Green Marketing Mix: Every company has its own favorite marketing mix. Some have 4 P's and some have 7 P's of marketing mix. The 4 P's of green marketing are that of a conventional marketing but the challenge before marketing team is to use 4 P's in an innovative manner.

Product: The ecological objectives in planning products are to reduce resource consumption and pollution and to increase conservation of scarce resources (Keller man, 1978).

Price: Price is a critical and important factor of green marketing mix. Most consumers will only be prepared to pay additional value if there is a perception of extra product value. This value may be improved performance, function, design, visual appeal, or taste. Green marketing should take all these facts into consideration while charging a premium price.

Promotion: There are three types of green advertising: -

- Ads that address a relationship between a product/service and the biophysical environment
- Those that promote a green lifestyle by highlighting a product or service
- Ads that present a corporate image of environmental responsibility

Place: The choice of where and when to make a product available will have significant impact on the customers. Very few customers will go out of their way to buy green products.

Challenges to Going Green

Polanski: An Introduction to Green Marketing No matter why a firm uses green marketing there are a number of potential problems that they must overcome. One of the main problems is that firms using green marketing must ensure that their activities are not misleading to consumers or industry and do not breach any of the regulations or laws dealing with environmental marketing. For example marketing team in the US must ensure their green marketing claims can meet the following set of criteria, in order to comply with the FTC's guidelines. Green marketing claims must;

- Clearly state environmental benefits;
- Explain environmental characteristics;
- Explain how benefits are achieved;

- Ensure comparative differences are justified;
- Ensure negative factors are taken into consideration; and
- Only use meaningful terms and pictures.

The major challenges to Green marketing which have to be faced are:

New Concept-Indian literate and urban consumer is getting more aware about the merits of Green products. But it is still a new concept for the masses. The consumer needs to be educated and made aware of the environmental threats. The new green movements need to reach the masses and that will take a lot of time and effort

Cost Factor- Green marketing involves marketing of green products/services, green technology, green power/energy for which a lot of money has to be spent on R&D programmers for their development and subsequent promotional programs which ultimately may lead to increased costs.

Convincing Customers-The customers may not believe in the firm's strategy of Green marketing, the firm therefore should ensure that they undertake all possible measures to convince the customer about their green product, the best possible option is by implementing Eco-labeling schemes. Eco-labeling schemes offer its –approval to –environmentally less harmless|| products. In fact the first eco-label program was initiated by Germany in 1978. Sometimes the customers may also not be willing to pay the extra price for the products.

Sustainability- Initially the profits are very low since renewable and recyclable products and green technologies are more expensive. Green marketing will be successful only in long run. Hence the business needs to plan for long term rather than short term strategy and prepare for the same, at the same time it should avoid falling into lure of unethical practices to make profits in short term.

Non Cooperation- The firms practicing Green marketing have to strive hard in convincing the

stakeholders and many a times it may fail to convince them about the long term benefits of Green marketing as compared to short term expenses.

Avoiding Green Myopia- Green marketing must satisfy two objectives: improved environmental quality and customer satisfaction. Misjudging either or overemphasizing the former at the expense of the latter can be termed-green marketing myopia.

In short firms using green marketing must ensure that their activities are not misleading to the consumers or the industry, and do not breach any of the regulations or laws dealing with environmental marketing.

Green Marketing: A Way Ahead

To be successful green marketing companies there are a few fundamental rules that will go a long way in shaping the future of the business in the coming years. The fundamental strategy is to use the Four P's suitably modified to meet the needs of Green Marketing, but there are a few points that are needed to be stressed on before embarking on Strategy. They are:

- 1. Knowing your Customer:** Means making sure that the consumer is aware of and concerned about the issues that your product attempts to address, without which success in green marketing will be difficult to achieve.
- 2. Educating your customer:** Means educating the people the reasons as to whatever you're doing is not only to protect the environment, but also matters of letting them know why it matters. Otherwise, for a significant portion of your target market, it's a case of "So what?" —Does it matter to me? and your green marketing campaign goes nowhere.
- 3. Genuineness & Transparency to your customer:** It shows that In reality you are actually practicing, what you claim to be doing in your green marketing campaign and your business policies are in lieu with whatever you are doing that's eco friendly. Both these conditions have to be met for your

business to establish the kind of environmental credentials that will allow a green marketing campaign to succeed.

- 4. Reassuring your Buyer:** Means that the customers must be made to believe that the product being offered shall fulfill the objective or purpose for which it has been purchased i.e.-no compromise in product quality in the name of the environment.
- 5. Pricing for your customer:** Means making sure that consumers can afford the premium and feel it's worth it, which is being charged for your product, as many environmentally preferable products cost more due to economies of scale and use of higher-quality ingredients.
- 6. Giving your customers an opportunity to participate:** Means personalizing the benefits of your environmentally friendly actions, normally through letting the customer take part in positive environmental action, at same time keep in view the changed expectations of the customers.

In nutshell, Green Marketing claims of a firm must clearly state environmental benefits; Explain environmental characteristics; Explain how benefits are achieved; Ensure comparative differences are justified; ensure negative factors are taken into consideration; and must only use meaningful terms and pictures.

Conclusion

Green marketing covers more than a firm's marketing claims. While firms must bear much of the responsibility for environmental degradation, ultimately it is consumers who demand goods, and thus create environmental problems. One example of this is where McDonald's is often blamed for polluting the environment because much of their packaging finishes up as roadside waste. It must be remembered that it is the uncaring consumer who chooses to dispose of their waste in an inappropriate fashion. While firms can have a great impact on the natural environment, the responsibility should not be

their alone.

In the EPA's 1994 study consumers gave the following reasons for why they damage the environment. It appears that consumers are not overly committed to improving their environment and may be looking to lay too much responsibility on industry and government. Ultimately green marketing requires that consumers want a cleaner environment and are willing to "pay" for it, possibly through higher priced goods, modified individual lifestyles, or even governmental intervention. Until this occurs it will be difficult for firms alone to lead the green marketing revolution. Thus an environmental committed organization may not only produce goods that have reduced their detrimental impact on the environment, they may also be able to pressure their suppliers to behave in a more environmentally "responsible" fashion. Final consumers and industrial buyers also have the ability to pressure organizations to integrate the environment into their corporate culture and thus ensure all organizations minimize the detrimental environmental impact of their activities.

In India Green Marketing is still in nascent stage, and there is lots of opportunity available. It seems

that Indian consumer is ready to pay premium price if required and this transformation on behavior of consumer give opportunity to corporate to think about going green. As developing country we should consider innovative way for green marketing and set a path for others to follow.

"Think before you print"

References

1. *Integral Review- A Journal of Management* ISSN: 2278-6120, Volume 5, No. 1, June-2012, pp 22-30
2. *International Journal Of Social Sciences & Interdisciplinary Research* Vol.1 No. 1, January 2012, ISSN 2277 3630)
3. *Namex International Journal of Management Research* 103 Vol. No.2, Issue No.1, Jan-June 2012
4. *E-Waste Management: As a Challenge to Public Health in India, Indian J Community Med.* 2010 July; 35(3): 382-385.
5. *Fuller A. D. - Sustainable Marketing: Managerial-Ecological Issues - Sage Publications 1999*
6. *Kotler P. & Lee N. - Corporate Social Responsibility: Doing the Most Good for Your Company and Your Cause - Wiley 2005*
7. *Ottman A. J. - Green Marketing: Opportunities for Innovation - NTC Business Books 1998*

Munshi Devi Prasad: A Historian Par Excellence

Dr. Sambodh Goswami

Lecturer, P.N.K.S. Govt. P.G. College, Dausa



shodhshree@gmail.com

Munshi Devi Prasad (born on 18th of February, 1848 and died on 15th of July, 1923), was a legendary historian of Rajasthan, who wrote around 27 books in Urdu, nearly 66 books in Hindi and more than 60 research papers and reviews, which were published in various reputed journals, weekly and monthly newspapers of the then Indian sub-continent¹. Saraswati, Maryada, Navjiwan, Indu, Vidyarthi, Bharat Mitra, Shri Venketeshwar, Kayastha Conference Gazette, Kayastha Samachar, Abhudaya, Kashi Naagri Pracharini Patrika were some of the weekly and monthly newspapers in which his research papers and articles were published in Hindi. Similarly his articles in Urdu were published in Awadh Akhbaar (Lucknow), Adeeb (Allahabad), Urdu Marjan (Lahore), Koh-i-noor, (Lahore), Kayastha Akhbaar (Lucknow), Kayastha Hitkari (Gwalior), Tahrir Hind (Lahore), Sarai Hind (Lahore), Rajputana Gazette (Ajmer), Vakil-e-Hind (Delhi), Marudhar Mitra (Jodhpur), Rajput Gazette (Lahore), Tafir (Lucknow) etc.² His forefathers, earlier, were in the royal service of Mughal court, then after it's disintegration, they, in search of patronage, shifted to the royal court of Bhopal and later on to the court of Nawab of Tonk.³ There they were entrusted with the responsibility of recording, writing and answering the royal orders, 'firmans', etc. which were sent to these courts. Thus they all had the access to the royal orders, correspondence, decrees, firmans etc. and some of his forefathers kept the copies of these records, orders etc. in their personal library for any future reference. It was in this manner that Munshi Devi Prasad got acquainted with history and historiography, which later on transformed his entire personality and career.

In his childhood, he learnt many languages and regional dialects like Brijhasha, Malwi, Urdu, Hindi, Arabian, Persian etc. from his near relatives and family members.⁴ In 1865, he (at the age of 19) joined the court of Hamid Khan, the grand son of Amir Khan Pindari, the Nawab of Tonk and served him till 1878. Because of some difference of opinions (and also because of his fanatic views against his Hindu subjects) with Hamid Khan, he left his court. On 6th of June, 1879, he was appointed as 'Naib' in the Appeal Court of Sir

Pratap Singh, the ruler of Jodhpur and till his death, he remained there and kept the lamp of historiography burning.

He was by himself an academy and institute personified. He was an erudite son of an scholastic father (Munshi Nathu Lal Bahjat). He was not only a poet, scholar, historian but also a prolific writer. He was also a member of Royal Asiatic Society, London and had been an author, according to Dr. A. F. Usmani, of as many as fifty works of Urdu and Persian⁵, among which the following are prominent. Dr. Usmani in his research thesis has lavishly highlighted his literary pursuits and contribution to Persian and Urdu literature. *Fasana -i-khirad Afrauz* (published from Agra in 1872), *Mizan -i-Adalat* (from Rizawi press, Delhi, 1872), *Tarikh -i-Raj Prashasti* (a history of Mewar, published in Nawal Kishore Press, 1885), *Risalah Chahal Jawab Tarikhi* (published in Nawal Kishore Press, 1885), *Khawab I Rajasthan, 1879*, *Risalah Jawahir -i- Ta'bir* (from Rizawi press, Delhi, 1872), *Tarikh-i- Tuzak -i-Hind* (from Rizawi press, Delhi, 1883), a translation of Mahabharat, *Intikhab-i- Nadirah*, (from Rizawi press, Delhi, 1885), *Jugrafiyah Marawar* (published by Ijad Kishan, Agra, 1890), *Tazkirah Asar-ush- Shuara -i- Hunud* (from Rizawi press, Delhi, 1885), It comprises a bio-biographical survey of 658 Hindu poets and is considered to be an authentic and scholarly work. Its second part written into Persian could not be traced. His detailed works on the history of famous kings and Rajas were also published in a research journal entitled *Risalah -i- Muraqqa'ul-Mashahir* which continued to be released from 1890 to 1895. His detailed papers on Prithvi Raj, Babar, Shah Tahmasp, Humayun, Man Singh of Jaipur, Princess Krishna Kumari etc, were published in sort of books. He wrote a separate work on Akbar which was published in 1895 and also compiled *Shahjehan Nama* in bilingual Hindi and Urdu in 1896-97. *Nushirwan Namah* was published from Rizawi press, Delhi, 1896, *Khan-i-Khanah Namah* in 1898, *Iftikharut Tawarikh* in 1909, which was based on *Amir-Namah*, *Nafa'is-*

ut Tawarikh (from Rizawi press, Delhi, 1896), and *Sawanih Birbal* in 1893. Apart from these works he has also written the local histories of Ajmer, Alwar, Jaipur, Bharatpur, Jhalawar, Kota, Bundi, Sirohi and Bikaner which could not be located. He has also translated Colonel Tod's Rajasthan and *Nasikh -ul-Tawarikh* into Urdu under the caption 'Ajai'but Tawarikh'.

Amongst his books in Hindi⁶, *Raj Rasnamrita* (published in 1906 by Bharat Mitra Press, Calcutta), *Rajputane me Prachin Shodh*, *Nari navratna*, *Chand bai*, *Ahilya Bai*, *Baj Bahadur aur Rupmati*, *Kavi Kalash*, *Rajputane me Hindi ki Dasha*, *Marwar ka Bhugol*, *Insaf Sangrah*, *Marwar ke Prachin Shilalekhon ka Itihas*, *Kavi ratnamala*, *Maharana Pratap Singh ke Patte*, *Jiv hinsa ki kami ka ek upaya*, etc. are worth mentionable. His book '*Mahila Mriduvaani*' (published by Kashi Naagri Pracharini Sabha, Banaras, 1905) is a collection of the poems of nearly 35 poetess, who lived in the medieval period. But perhaps his most memorable work is *Mardum shumari Raj Marwar* (census report of Marwar). While in the government service of the then Marwar State, he compiled the annual state reports from 1883 to 1886 and later on in 1891, he completed the census report. In this book, he has presented a very useful and interesting account of the origin, traditions, customs, occupations, superstitions, taboos, economic condition etc. of the various castes and the tribes of Marwar. Seeing the significance of this book, the ruler of Marwar got it published in English in 1894.

His fame rose to such an extent that Kaviraja Shyamaldas, Kaviraja Muraridan, Barhat Kishan Das, Janardan Singh Gahlot, G.H. Ojha, (beside many other historians of the Historiography of Rajputana) took his help, advice and suggestions in writing, compiling, editing or in completing their historical works.

This is a lesser known fact that he was a generous donor to various academic and research institutions⁷. For the propagation of education and literature, he gave Rs.5000/- to Arya Pratinidhi Sabha, Lahore, Rs.10,500/- to Naagri

Pracharini Sabha, Kashi, Rs.10,000/- to Kallobai Ayurvedic Aushadhalaya, Jodhpur, Rs.8000/- to Girls' College, Jalandhar, Rs.3000/- to Devi Prasad Natthanlal Public Library, Jodhpur, Rs.1100/- to Rajputana Kayastha Boarding House, Ajmer, Rs.1000/- to Government College, Ajmer for Scholarship, Rs.500/- to Hindu University, Kashi, Rs. 700/- to Sir Pratap High School(Kayastha), Jodhpur etc. Besides being a historian, he was also against many prevalent social evils⁸. He was against the age-old social custom of child marriage and had his daughters married at the age of 15-16 and his own son at the age of 20. If looked from the eyes of the 20th century feminist writers, this would not look very convincing and satisfactory; but while pronouncing a judgment, we must not forget the time and the age in which he was living. This research paper is, thus, an humble attempt to understand the significance and contribution of Munshi Devi Prasad as a historian as well as to present his passion and commitment towards social reforms.

References

1. For a detailed list of his books, please see 'Itihaskar Munshi Devi Prasad' in *Parampara* (edited by

Narayan Singh Bhati), part 79-80, *Rajasthan Shodh Sansthan, Jodhpur, 1986, pp.26-32*. And also, *Shaukat Ali Khan, (Director, Arabic and Persian Research Institute, Tonk), History and Historians of Rajasthan, Triveni Publications, Delhi, 1981, pp.60-62*.

2. 'Itihaskar Munshi Devi Prasad' in *Parampara* (edited by *Narayan Singh Bhati*), *ibid*.
3. He himself tells this about his forefathers. Please see the introduction of the author in *Jehangir Nama*, written by *Munshi Devi Prasad*, p.ii.
4. *Ojha, Jamnesh Kumar, 'Munshi Devi Prasad' in Rajasthan Ke Itihaskar* (edited by *Hukum Singh Bhati*), *Pratap Shodh Pratishthan, Udaipur, 1988, pp.93-103*.
5. Cited from (now onwards Cf.) *Shaukat Ali Khan, History and Historians of Rajasthan, Ibid*.
6. For a detailed study please see *Munshi Devi Prasad krit Shah Jehan Nama* (edited by *Raghubir Singh and Manohar Singh Ranawat*), *Publication Scheme, Jaipur, 1990, pp.1-54*.
7. *Munshi Devi Prasad krit Shah Jehan Nama* (edited by *Raghubir Singh and Manohar Singh Ranawat*), *ibid, pp.16-17*.
8. 'Itihaskar Munshi Devi Prasad' in *Parampara* (edited by *Narayan Singh Bhati*), part 79-80, *op.cit*, pp.22-24.

Municipal Governance and Per Capita Expenditure in Local Self Bodies of Rajasthan

Jitendra Prakash Bohra

Research Scholar, JNVU Jodhpur



shodhshree@gmail.com

In India, Municipal Corporations or City Corporation or Mahanagar Palika or Mahanagar Nigam are urban local government that works for the development of a city, which has a population of more than one million (ten lakh). The growing population and urbanization in various cities of India were in need of a local governing body that can work for providing necessary community services like health care, educational institution, housing, transport etc. by collecting property tax and fixed grant from the State Government.

Municipal governance in India has existed since the year 1687, with the formation of Madras Municipal Corporation, and then Calcutta and Bombay Municipal Corporation in 1726. In the early part of the nineteenth century almost all towns in India had experienced some form of municipal governance. In 1882 the then Viceroy of India, Lord Ripon's resolution of local self-government laid the democratic forms of municipal governance in India.

In 1919, a Government of India act incorporated the need of the resolution and the powers of democratically elected government were formulated. In 1935 another Government of India act brought local government under the purview of the state or provincial government and specific powers were given.

According to the 1991 Census of India, there were 3255 urban local bodies (ULBs) in the country; classified into the four major categories of:

1. Municipal corporation (Nagar Nigam)
2. Municipality (municipal council, municipal board, municipal committee) (Nagar Parishad)
3. Town area committee
4. Notified area committee

The municipal corporations and municipalities are fully representative bodies, while the notified area committees and town area committees are either fully or partially nominated bodies.

As per the Constitution of India, 74th Amendment Act of 1992, the latter two

categories of towns are to be designated as municipalities or nagar panchayats with elected bodies. Until the amendments in state municipal legislations, which were mostly made in 1994, municipal authorities were organised on an ultra vires (beyond the authority) basis and the state governments were free to extend or control the functional sphere through executive decisions without an amendment to the legislative provisions.

After the 74th Amendment was enacted there are only three categories of urban local bodies:

Mahanagar nigam

- (municipal corporation) Nagar palika
- (municipality) Nagar panchayat
- (notified area council, city council)

This article provides that there be a nagar panchayat for transitional areas i.e. an area in transition from rural to urban, a municipality for a smaller urban area, and a municipal corporation for a larger urban area. Article 243Q of the 74th Amendment requires that municipal areas shall be declared having regard to the population of the area, the density of population therein, the revenue generated for local administration, the percentage of employment in non-agricultural activities, the economic importance or such other factors as may be specified by the state government by public notification for this purpose.

Responsibilities of Urban Local Bodies

The municipal bodies of India are vested with a long list of functions delegated to them by the state governments under the municipal legislation. These functions broadly relate to public health, welfare, regulatory functions, public safety, public infrastructure works, and development activities.

Public health includes water supply, sewerage and sanitation, eradication of communicable diseases etc.; welfare includes public facilities such as education, recreation, etc.; regulatory functions related to prescribing and enforcing building

regulations, encroachments on public land, birth registration and death certificate, etc.; public safety includes fire protection, street lighting, etc.; public works measures such as construction and maintenance of inner city roads, etc.; and development functions related to town planning and development of commercial markets. In addition to the legally assigned functions, the sectoral departments of the state government often assign unilaterally, and on an agency basis, various functions such as family planning, nutrition and slum improvement, disease and epidemic control, etc.

The Twelfth Schedule of Constitution (Article 243 w) provides an illustrative list of eighteen functions which may be entrusted to the municipalities.

Nagar Nigam/ Mahanagar Palika (Municipal Corporation)

Nagar Nigam a.k.a **Mahanagar Palika** or by some other names in different states (translated in English as Municipal Corporation) in India are state government formed departments that works for the development of a metropolitan city, which has a population of more than 1 million. The growing population and urbanisation in various cities of India were in need of a local governing body that can work for providing necessary community services like health centres, educational institutes and housing and property tax.

They are formed under the Corporations Act of 1835 of panchayati raj system which mainly deals in providing essential services in every small town as well as village of a district/city. Their elections are held once in five year and the people choose the candidates.

Litreature review

A comprehensive literature review was conducted to obtain the information needed for pursuing the objectives of this research. Information was obtained from books, academic journals, government and institutional reports. **Athanassopoulos and Triantis (1998)** have

analyzed the efficiency of large Greek municipalities on the basis of cash accounting data. Their conclusion shows that efficient municipalities have a higher tax base, income level, and public investment share on total expenditure and inefficiency is related to high share of grants in total municipal expenditure and population density. **R.K. Bhardwaj** in his "The Municipal Administration in India (A Sociological Analysis of Rural and Urban India)," discuss the causes of backwardness of municipal bodies in India. He expresses his dissatisfaction in the following words. The way in which the people have dealt with the local bodies in India does not bring credit to the smooth functioning of municipal administration. **Om Prie Srivastava's** 'Municipal Government and Administration in India' is based on her research thesis of 1976 entitled "State Control over Municipal-Corporations." She explains the various kinds of state control and suggests remedial measures that need to be taken. She has felt that government should reorient its attitude in regard to municipal corporations, providing constructive guidance and adequate assistance to them, as an active partner in the common cause of city administration.

Improved financial management is required to increase efficiency in revenue collection and expenditure control. Therefore the financial health of an urban local body (ULB) is indicated by a set of closely interrelated factors and not merely income-expenditure balance. The main objective of this paper is to evaluate the financial health of the selected Municipal Corporation for the period of five years. The specific objectives of the present paper are:

1. To examine the trends in major revenue sources and expenditures of municipalities and assess their fiscal position.

2. To analyze the growth rate of total income and total expenses
3. To analyze the growth rate of income over expenditure
4. To offer useful suggestions

The Need of The Study

In the present period all the problems related with the welfare of the citizens cannot be solved by the central or state government. It is the local self government that helps the state government to look into the welfare of the people of the state. In big cities Municipal corporations and municipal committees have taken this charge. It is present in people's mind that funds which are collected from them in the form of various taxes, grants taken by different municipal corporations should be used for their welfare. Hence the need of the study of urban local bodies has become essential. The present study is an modest attempt to undertake a comparative study of financial analysis of Municipal Corporation in Rajasthan State with reference to five Municipal corporation.

Objectives of The Study:

The study consists of following objectives:

To analyze the expenditure of these five municipal corporations

Data Analysis

The present chapter deals with the analysis of the data taken and calculated from the sources of local self bodies of Ajmer, Bikaner, Jaipur, Jodhpur and kota. Tables show per capita expenditures below. Data taken from period 2007-2008 to 2014-2015.

From the mean values of per capita expenditure we found that Jaipur's expenses was largest than followed by Jodhpur, kota, Ajmer and Bikaner.

Per capita expenditure city wise:

Ajmer

Year	Total expenditure	Population	Per capita expenditure
2007 - 08	7897.35	24.21	326.2
2008 - 09	10460.54	24.61	425.05
2009 - 10	11952.36	25.02	477.71
2010 - 11	12290.25	25.42	483.48
2011 - 12	11296.25	25.83	437.33
2012 - 13	11958.85	26.23	455.92
2013 - 14	14939	26.03	573.91
2014 - 15	15354	27.04	567.82

Jaipur

Total expenditure	Population	Per capita expenditure
74494.74	60.76	1226.04
103987.81	62.13	1673.71
106643.37	63.51	1679.15
72226.64	64.88	1113.23
94179.7	66.26	1421.36
90811.7	67.63	1342.77
90230.1	69.01	1307.49
108374.07	70.38	1539.84

Jodhpur

Total expenditure	Population	Per capita expenditure
9787.37	33.66	290.77
25360.54	34.46	735.94
26275.84	35.27	744.99
34009.29	36.07	942.86
35376.61	36.87	959.49
29943.75	37.67	794.89
48513.98	38.47	1261.08
53709.04	39.27	1367.68

Kota

Total expenditure	Population	Per capita expenditure
7837.8	17.98	435.91
11387.11	18.36	620.21
12025.07	18.74	641.67
11670.56	19.12	610.38
15094.01	19.51	773.65
16445.98	19.89	826.84
20986.86	20.27	1035.36
24003.95	20.65	1162.41

Per Capita Expenditure Compare Means

Ajmer	Bikaner	Jaipur	Jodhpur	Kota
326.2	130.24	1226.04	290.77	435.91
425.05	194.72	1673.71	735.94	620.21
477.71	501.11	1679.15	744.99	641.67
483.48	259.23	1113.23	942.86	610.38
437.33	317.12	1421.36	959.49	773.65
455.92	318.82	1342.77	794.89	826.84
573.91	362.58	1307.49	1261.08	1035.36
567.82	359.88	1539.84	1367.68	1162.41
3747.42	2443.7	11303.59	7097.7	6106.43
468.4275	305.4625	1412.949	887.2125	763.3038

The table shows jaipur has highest per capita expenditure in this period. Whereas Bikaner has the lowest per capita expenditure.

References

1. R.K. Bhardwaj, - *The Municipal Administration in India (A Sociological Analysis of Rural and Urban India)*, New Delhi, Sterling Publishers, p. 172 (1970).
2. Om Prie Srivastva, - *Municipal Government and Administration in India*]- Allahbad, Chugh Publication (1980).
3. Jawaharlal Nehru, (1964), *The Discovery of India*, Signet Press, Calcutta, p.288
4. George Mathew, Ed :*Status of Panchayati Raj in the States and Union Territories of India 2000*/edited by George Mathew. Delhi, Concept for Institute of Social Sciences, 2000,
5. *Report of the Royal-commission on Decentralisation, 1907*
6. Venkatarangaiah, M. and M. Pattabhiram (1969), 'Local Government in India:Select Readings', Allied Publishers, New Delhi
7. "74th Amendment Act of 1992, PART IXA".Retrieved 18January 2009.
8. *The Constitution (Seventy Third Amendment) Act, 1992, The Gazette of India, Ministry of Law, Justice and Company Affairs, New Delhi, 1993.*
9. Singh, Vijandra (2003)."Chapter 5: Panchayati Raj and Gandhi". *Panchayati Raj and Village Development: Volume 3, Perspectives on Panchayati Raj Administration. Studies in public administration. New Delhi: Sarup & Sons. pp. 84–90. ISBN 978-81-7625-392-5.*
10. Bajpai and Verma, (1995), *Panchayati Raj in India.*
11. *Government of India, Report of the Team for the Study of Community Projects and National Extension Service, (Chairperson: Balwant Rai Mehta), Committee on Plan Projects, National Development Council, (New Delhi, November 1957), Vol. I,*

Industrial Development in Rajasthan

Dr. Seema Pareek

Lecturer, Govt. P.G. College, Sambhar Lake



shodhshree@gmail.com

Rajasthan, the largest (area-wise) state in India, is located in the north-western part of the subcontinent. It borders six major states in the northern, western and central parts of India. Rajasthan is a natural corridor between the wealthy northern and the prosperous western states, making it an important trade and commerce centre.

Rajasthan is the second largest mineral producing state in India and houses about 90% of the total mineral reserves of the country. Mining sector in Rajasthan is another pre-eminent sector next to Agriculture. There are about 42 major and 28 minor minerals. The mineral and mining sector of Rajasthan is a very important revenue earner for the state. From this sector Rajasthan earns as mineral royalty an annual income. This sector provides employment to mine workers throughout the state.

Rajasthan comprises rocks from oldest Archean rocks to recent alluvium formations. The oldest formations are known as Banded Gneissic Complex exposed in central and southern Rajasthan. The Aravalli hill range dividing the State diagonally is made up of precambrian rocks of Aravalli and Delhi Super group comprising the metamorphosed gneisses, schists, marble, quartzite, calc silicate, ultra basic, acidic and basic intrusive rocks, trending NE-SW and dipping 30° to 70° easterly. This is known as Delhi fold belt and is an important horizon for base metals, other metallic and non-metallic minerals.

The eastern and southeastern parts of the State are occupied by rocks of Vindhyan Super group mainly forming a plateau of sandstone, shale's and limestone. In the southern part Deccan trap formation of cretaceous age are exposed.

The Aravalli metallogenic province of Rajasthan is the most important geological province for base metal and gold deposits. The province contains the world class Rampura-Agucha Lead-Zinc deposit along with several large deposits of Lead and Zinc in Rajpura-Dariba and Zawar belts. In addition, there are a number of deposits in Deri-Basantgarh belt. Since the last decade, several gold deposits have been proved in the southern part of the province in

Banswara.

Mineral based Industries

Rajasthan is the very important state of the country in mineral production. 79 varieties of minerals are available in the state. Abundant availability of minerals such as limestone, zinc concentrate, gypsum, fluorite, asbestos, calcite, wollastonite, jasper, garnets, marble, lead & tungsten concentrates, phosphate rock, clay, soapstone, sandstone, limestone and feldspar. Substantial quantities of lignite and natural gas have also been identified in the desert areas of the state. Rajasthan is already exporting wollastonite, soapstone and a variety of dimensional stones. Export oriented units are given a priority while granting mining leases.

Rajasthan is among the largest producers of cement in the country. Large reserves of clay and silica sand, raw materials for the ceramic and refractory industry, are available in the state. Further, the state has locational advantage as large north Indian markets for ceramics is easily accessible from the state. With large reserves of rock phosphate in the state, manufacture of phosphoric acid/DAP is a viable venture.

The discovery of natural gas in the state has opened up possibilities for additional investment in the chemical and ceramic sector.

Rajasthan accounts for 17.5 per cent of the total cement grade limestone reserves in India and is the largest cement producer with 21 major cement plants having a total capacity of 55 million tonnes per annum.

The State is geologically so endowed that it become a veritable repository of minerals. Rajasthan is fortunate enough to have a wide spectrum of mineral deposits.

Rajasthan is the sole producer of garnet (gem variety), jasper and wollastonite. Almost entire production of zinc (concentrate), calcite, asbestos and gypsum in the country was reported from Rajasthan. Besides, Rajasthan is the leading producer of ball clay (70%), feldspar (36%), fluorite (graded) (59%), Kaolin (44%), lead

concentrate (89%), ochre (90%), phosphorite (90%), silver (81%), steatite (76%), barytes (32%), copper (32%), quartzite (33%) and silica sand (21%).

Objectives of The Study:

1. To find out the trends of various mineral production in Rajasthan.
2. To find out the composition of minerals in various districts of Rajasthan.
3. To examine the employment generation in mineral industry in Rajasthan.
4. To estimate the revenue generation through mineral industry in Rajasthan.
5. To estimate the employment elasticity and revenue elasticity in mineral industry in Rajasthan.

Methodology

The study is based on time series data from 2006 to 2014. The secondary data published by Dept. of Directorate of Economic and Statistics of Rajasthan, mines and Geology is used in the research paper. Arithmetic Mean, Geometric Mean are used for analysis.

The Composition of Minerals and Its Trends

Felspar, Quartz, Zinc, Soapstone and Lime stone are major minerals those are providing 70% of the employment in the mining industry. Rest 50% of varieties of minerals are providing only 30% of employment. The employment elasticity of above minerals is comparatively high i.e. 0.20% (although inelastic) as compare to elasticity of other minerals i.e. 0.03% (about to zero). It reveals that if the production of these minerals increases the employment more as compare to the other minerals. Production of these minerals are good for employment generation.

Mineral Industry In Rajasthan

Year	Production	Sale Value	Revenue	Employment
	(Tons)	(Rs.)	(Rs.)	(Nos.)
2006 -07	10636600	13928200000	8130334000	27035
2007 -08	49116000	16388700000	7658456000	29155
2008 -09	60132395	23201945225	6724814525	38146
2009 -10	69702364	32265411951	9972827082	37019
2010 -11	69735655	36499229133	1178719801	37063
2012 -13	85336954	62983384753	13158352568	
2013 -14	95088344	63391557993	16599569058	34993

source : Dept of mining & Geology, Govt. of Rajasthan

Year	Production	Sale Value	Revenue	Employment
	(Tons)	(Rs.)	(Rs.)	(Nos.)
2006 -07	10636600	13928200000	8130334000	27035
2013 -14	95088344	63391557993	16599569058	34993
Changes	84451744	49463357993	8469235058	7958
%	793.9731	355.1310147	104.1683535	29.4359164
Elasticity of demand			0.293	0.037

Source: Calculated From the above Data

Over the period of 2006 to 2014, the productions of various mineral have been varied. Some of the minerals are showing high growth rate but other side production of some of the minerals either decrease or stagnant.

Iron, Ball Clay, China Clay, Lignite, Feldspar, Quartz, Limestone and Soapstone are major minerals those production shows increasing trends during the period of 2006 to 2014.

Cooper, Gypsum, Rock Phosphate shows either decreasing or stagnant trend in production over the duration of research study period. It is a good sign that the production of minerals those are providing maximum employment is increasing.

Industrial Development & Economic Growth in Rajasthan

Between 2004-05 and 2014-15, Gross State Domestic Product (GSDP) expanded at a Compound Annual Growth Rate (CAGR) of 12.83 per cent to US\$ 95.31 billion whereas the Net State Domestic Product (NSDP) expanded at a CAGR of 13.05 per cent to US\$ 85.68 billion.

Bureau of Investment Promotion (BIP) is a nodal agency of the Government of Rajasthan that facilitates investments in various sectors in the state. Rajasthan State Industrial Development and Investment Corporation (RIICO) is the sole agency in the state that develops land for industrial growth.

Some of the major initiatives taken by the government to promote Rajasthan as an investment destination are:

- As per the state budget 2015-16, an estimated outlay of US\$ 659.56 million was made for agriculture and allied industries in the state.
- US\$ 0.83 million for constructing the special priority roads and US\$ 1.58 million for the construction of urban roads in the state.
- The Government would also be providing US\$ 76.82 million for Feeder Renovation Programme (FRP). In addition, the Government of Rajasthan would provide US\$ 1.13 billion for the purpose of equity contribution and budgetary support.
- A Single Window Clearance System (SWCS) for investment approvals is operational in the state and the BIP was set up to focus on investments above US\$ 2.2 million.
- To draw investments, the state has planned for 'Resurgent Rajasthan Summit' in November 2015.
- The Government of Rajasthan is promoting the development of several SEZs across the state for sectors such as gems and jewellery, handicrafts, IT, electronics, automotive/auto components and textiles.
- Special auto and engineering zones have been developed in Pathredi Industrial Area and Bhiwadi. The three main auto clusters of Rajasthan - Bhiwadi, Neemrana and Pathredi - have as many as 100 functional units.
- RIICO developed 323 industrial areas, including SEZs, export promotion industrial parks and inland container depots.
- The state government is encouraging JVs and contract management of private heritage properties (forts, fortresses, palaces and havelis) as well as identifying heritage government properties to award on a lease basis to

promote tourism.

- IT parks with special infrastructure have been set up at Jaipur, Jodhpur, Udaipur, Kota and Alwar.
- The Government of India is planning to set up India's first gems bourse in Jaipur with an investment of US\$ 8.29 million to facilitate organised trading of gem stones.
- In 2014, Rajasthan Solar Energy Policy was introduced to reduce dependence on conventional sources of energy by promoting the development of nonconventional energy sources, especially solar power.

Conclusions

- Production of major minerals is increased by 8 times in Rajasthan from 2006 to 2014.
- Sales values of major minerals are increased by 3 times in 2014 as compare to 2006.
- The employment generated in exploration of major minerals is increased only by 29% during the period of 2006 to 2014.
- The employment elasticity in mineral exploration is highly inelastic i.e. 0.03% (near to zero)
- The revenue elasticity in mineral industry is also inelastic i.e. 0.29%

The finding states that the productivity and sales value of major minerals in Rajasthan have been increased by more than 700% and 300% respectively while the employment and sales revenue has been increased by 29% and 104% respectively. This reveals that the increasing in the production of minerals does not lead to the employment. The mineral industry in Rajasthan has not the potential enough to provide employment.

The mining activity is not labor intensive in Rajasthan. The inelastic revenue elasticity in

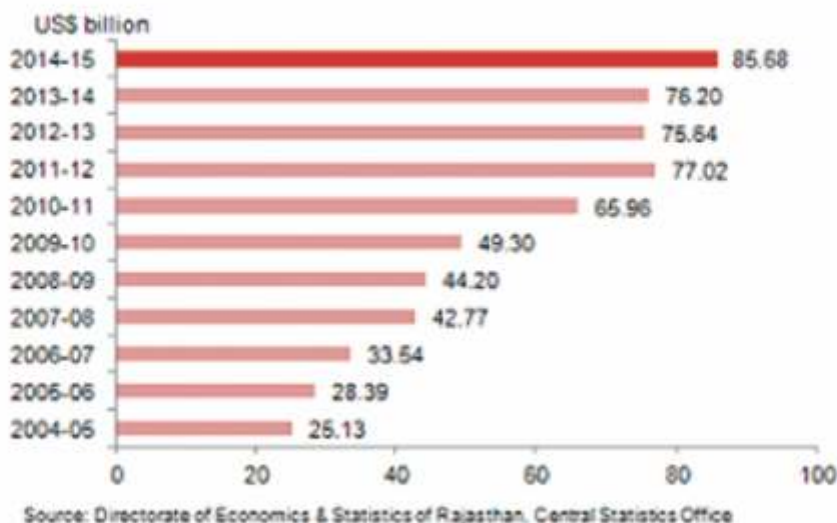
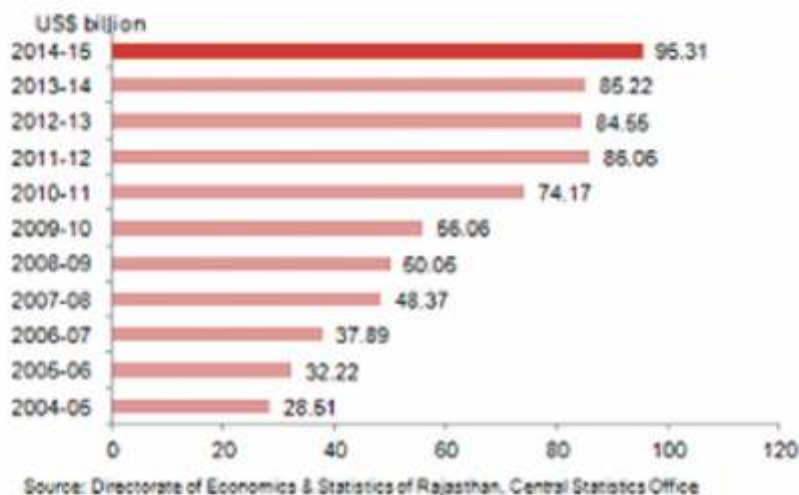
mining depicts the mining activity in Rajasthan is also not a good source of revenue generation to the government. On the basis of above analysis it can be concluded that the benefits of increasing in the production of mineral and sales value does not pass to the society but has the tendency to concentrated to the owners of mines. The industry has very less capacity to trickle down the benefits to the laborers and governments.

The mining industry of Rajasthan is enhancing the income inequality in the economy.

Single Window Clearances - The State Government having amended the 'Rules of

Business' has created three empowered committees to provide all desired clearances in one go. Single application form has been designed for availing the clearances.

Due to industrialisation the GSDP and NSDP has increase. Rajasthan's gross state domestic product (GSDP) is rising continuously It was US\$ 95.31 billion over 2014-15. and NSDP of Rajasthan and Rajasthan's net state domestic product (NSDP) is also rising continuously It was US\$ 85.68 billion over 2014-15. The graphs below make the picture clear.



Suggestions

On the basis of above analysis some of the following suggestions may be given –

- A specific tax should be levied on the income of mining owner, so that the income disparities formed due to concentration of money at mining owner can be shrunken.
- Incentives should be given to those mineral units which uses the labour intensive techniques.
- Government may enhance the duty on sales revenue, so that the money that is concentrating to the owner of mines can be channelized towards society.

- The state has now launched the 'New Single Window Clearance System (SWCS). The System is fully online facilitating applications, payments, status tracking, approvals and issuance of certificates. Single Window scheme must be implemented effectively.

References

1. *Rajasthan development report By India. Planning Commission*
2. *Directorate of Economic and Statistics of Rajasthan*
3. *Website of dept. of mines and geology*
4. *Rajasthan mineral bulletin A technical journal of the department.*
5. *SWS website*

Enhancing the Quality and Accessibility of Higher Education through the use of ICT

Dr. Sarita Agarwal

Assistant Professor, Manav Rachna College of Education, Faridabad (Haryana)

Dr. Ravneet Gaur

Assistant Professor, Manav Rachna College of Education, Faridabad (Haryana)



shodhshree@gmail.com

The supply of teaching aids to every school is essential for the quality of teaching. It would indeed bring about an education revaluation in the country.

The world appears to be in the midst of an information explosion, we are living in "The age of communication" and indeed, this seems to be even to casual observation. Satellite relay television signal around the globe.

India, like any other knowledge economy, depends on the development of its educational sector. Higher education drives the competitiveness and employment generation in India. However, research findings have shown that the overall state of higher education is dismal in the country. There is a severe constraint on the availability of skilled labor (Agarwal, 2006). There exist socio-economic, cultural, time and geographical barriers for people who wish to pursue higher education (Bhattacharya and Sharma, 2007). Innovative use of Information and Communication Technology can potentially solve this problem.

Through history of civilization, technology has been linked to learning. Generations of students have been taught using first clay tablets and papyrus, letter paper, pen and ink, the horn book, chalk-boards, books and pictures and more recently films, recorders and transparency projectors. In today's world many learners receiving instruction by radio, televisions, electronic sound and visuals stored or tape, telephone, computer and communication satellite. Video applications of telecommunication provide even greater promise as new developments make it economically feasible to transmit televised lectures or even conduct to way seminars among people dispersed over larger distances.

Transition, transformation and revolution is the scenario of today's educational system. All the process of teaching and learning are crossing the boundaries and barriers. This tendency requires a change in knowledge, competencies and skills to deal with technological advancement in networking which is necessary to establish a network between students,

educators, parents, institutions and libraries the world over. Technology is the means to enhance teaching learning quality. One can use technology to better display information, increase access to information, improve information, sharing, and organize better class presentations. The educators must discover and develop how to implement new technologies into the learning environments and focus efforts on facilitating learning and not implementing "multimedia toys". The age of communication and age of science and technology during the second half of the present century coupled with desire to make teaching learning more effective, efficient, durable, a vigorous movement took shape in the area of structured learning heralding the application of such devices, technique and technology re-appropriated for use in the classroom with the sole aim of advancing and enhancing the classroom teaching learning situations.

Quality education is our universal goal. It is common to hear arguments that instructional technology will be the key to educational quality as we enter the new millennium. Investment in educational technology is urged up on policy makers as the path to educational quality. In fact, enthusiasts for educational technology argue that quality has and will continue to increase rapidly, creating a "new educational culture".

ICT increases the flexibility of delivery of educational so that learners can access knowledge anytime and from anywhere. It can influence the way students are taught and how they learn as now the process are learner driven and not by teachers. This in turn would better prepared the learners for lifelong learning as well as to contribute to the industry. It can improve the quality of learning and thus contribute to the economy. It provides several tangible and intangible benefits for all stakeholders involved in the economic growth of the country. Wider availability of best practices and best course material in education which can be shared by means of ICT, can foster better teaching. ICT also

allows the academic institutions to reach disadvantaged groups and new international educational markets. Thus, ICT enabled education will ultimately lead to the democratization of education. Specially in developing countries like India, effective use of ICT for the purpose of education has the potential to bridge the digital divide.

ICT's are one of the major contemporary factors shaping the global economy and production rapid changes in society. They have fundamentally changed to the way people learn, communicate, and do business. They can transform the nature of education where and how learning takes place and the roles of students and teachers in the learning process. In order to function in the new world economy, students and their teachers have to learn to navigate large amounts of information, to analyze and make decisions, and to master new knowledge and to accomplish complex tasks collaboratively. Overloaded with information, one key outcome of any learning experience should be for learners to critically challenge the material collected in order to decide whether it can be considered useful input in any educational activity. This is the basis for the construction of knowledge.

Dimensions of Technology

Strategies use in teaching learning

In the present scenario teachers use electronic medium for the teaching learning process in the classroom. Need of hour that every teacher should use all types of educational technologies in their classroom teaching.

1. Electronic Learning (e-learning)

In electronic learning the term electronic refers to use of computer and electronic learning therefore significance use of computer to facilitate learning.

2. Ubiquitous learning (u-learning)

Ubiquitous learning means "everywhere learning" or learning content follows people around. Core "knowledge pots" hold content and information. Various devices plug in and

retrieve the information in the appropriate formats like cell phone, laptop or other technology gadgets. It fulfills e-learning's promise of "anytime, anywhere, and any context".

3. Blended learning

Blended learning is a face to face classroom instruction with online learning. A major part of the activities take place online, while traditional classroom time is reduced but not eliminated. Blended learning sometime also called "Hybrid Learning".

4. Virtual Learning

In Virtual learning, all learning activities that occur in noncontiguous educational settings where the learners and their teachers are separated temporarily and spatially (Anandan, Nallu Samy, 2013). A virtual learning environment is a phrase that refers to technology which supports teaching and learning. Virtual learning environment does not decrease the importance of the classroom or the teacher, it enhance the learning and teaching experience.

5. M-Learning (Mobile Learning)

It is a wireless technology which can be used anywhere, anytime and by anybody. By using this in teaching learning process, we can enrich our communication with pupils and convey our ideas effectively. Mobile learning, simply means "learning on the move", "any sort of learning that happens where the learner is not at a fixed, predetermined location or learning that happens when the learner takes advantage of the learning opportunities offered by mobile technologies".

Conclusion:

The decline in quality of higher education can be ascribed due to lack of use of modern technology of information communication technology (ICT) lack of trained staff in information

communication. Modern world needs, not just competent teacher but teachers who are effective teacher and have multiple sequence and are able to envisage new forms of professionalism. The basic mission of higher education system should be viewed in terms of indispensable demands of society, characterized by democratic value, high demands of learning of science and technology including information communication technology which is fell need of society and flexibility to cope with inevitable socio-economic changes. It is right time for all of us to establish quality input norms, process norms and output norms, for different teachers which would help us to produce effective professional teachers.

In the last we can say that the use of ICT in higher education institutions, education will become highly interactive, individualized, flexible, accessible and computed mediated.

References

1. Alexander, B.(2006). *A new way of Innovation of Teaching and Learning*, Educational Review, 41(2).
2. Aggarwal, A. (2000). *Web based Learning and Teaching Technologies: Opportunities and Challenges*, 1(2), 2000.
3. Bruns, A., and Hamphreys, S. (2005). *Wikis in Teaching and Assessment; The M/Cyclopedia Project. Proceedings of the 2005 International Symposium on Wikis*. ACM Press New York, NY, USA.
4. Huffaker, D. (2005). *The educated blogs: Using weblogs to promote literacy in the classroom*; AACE Journal, Vol. 13(2).
5. Rathore, Rachana, (2009). *Effective Teaching through e-learning EDUTRACKS*, Vol.6, No.6, Feb. 2007.
6. Sangeeta Paliwal, (2009). *Future trends of education - mobile learning problems and prospects*, IPAS Academy, Indore, India.

Websites:

www.edublog.net

www.educomp.com



Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018
Shodhshree@gmail.com

Individual Subscription Form

Name

Designation

Name of Organization

Address

District

State

Pin

Tel. No. (R)

Mobile

e-mail

Date

(Signature)

Frequency	: Shodh Shree is Published four time in a year (Quarterly) i.e. January, April , July & October.
Mode of Payment	: Subscription fee can be deposit through online Banking.
Bank Details	: Virendra Sharma, OBC Bank, Adarsh Nagar, jaipur SB A/C No. 06722151002965, IFSC Code ORBC 0100672, MICR Code 302022005 Subscription Fees 1300 Rs

Membership No.

Date

(For Office Use only)

DECLARATION FORM FOR CONTRIBUTORS

I.....
hereby declared that the paper entitled'.....
.....'is unpublished original paper which is not sent any where
for publication.

This paper is prepared by me/jointly with.....
.....which is
exclusively for your journal entitle 'Shodh Shree'.

I/We will not demand any honorarium for the same expect one copy of the
Journal in which this paper will appear. Please send copy of the Journal at the
address of author whose name is appeared at first,

Copy right of matter is with Shodh Shree. I/We will not reproduce it in any other
journal of book except prior permission of the Chief Editor.

Signature

Name

Designation

Official Address

Residential Address

Phone No. Pin No.

e-mail Address



Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018
Shodhshree@gmail.com

Institutional Membership Form

The Editor
Shodhshree
Jaipur

Dear Sir

I want to become a member of this Journal for -

1 year

(Rs. 1000/-)

2 years

(Rs. 1800/-)

3 years

(Rs. 2500 /-)

I am sending here with Rs..... through online banking/cash for membership of your Journal.

Name of Institution

.....

Address.....

..... Pin Code.....

Phone/Mobile No.

E-mail ID

Date:

Signature

For Office Use Only

Membership No.

Date

Frequency : Shodhshree is Published four time in a year(Quarterly)
i.e. January, April, July, October.

Mode of Payment : Subscription fees can be deposit through online Banking.

Bank Details : **Cheque /DD must be in Favor of Virendra Sharma** ,OBC Bank,
Adarsh Nagar, Jaipur

SBA/CNO.06722151002965

IFSC Code ORBC0100672, MICR Code 302022005

Guidelines for the Contributors

1. All research paper must be typed in Microsoft Word and use KRUTI DEV 010 font for Hindi or Times New Roman Font for English can submit by C.D. or through e-mail.
2. A separate list of references should be given at the end of the paper and not at each page. Footnotes may be given on the same page if any technical term needs some explanation.
3. Table, Model, Graph or Chart should be on separate pages and numbered serially with appropriate heading.
4. Maximum word limit of research paper up to 1500 words.
5. Special care should be taken to avoid spelling errors and grammatical mistakes in the paper otherwise it will not be accepted for publication.
6. The author(s) should certify on a separate page that the manuscript is original and it is not copyrighted.
7. The copyright is Reserved for 'Shodhshree' for All Research papers and Book Reviews, published in this journal.
8. Publication of research paper would be decided by our editorial board or subject specialist.

Book Review : For Book Review to be included in this journal only reference books and research publications are considered. One copy of each such publication must be submitted to the Editor.

Note : Shodh Shree have copyright on papers published in the journal therefore, prior permission is necessary for reproduction of paper, anywhere by author or other person. However, papers published in the journal may be freely quoted in further study. All disputes are subject to jaipur jurisdiction.

Research Paper may be sent to our e-mail: shodhshree@gmail.com
For any assistance, Please Contact Dr. Ravindra Tailor - 09413224134

To,

प्रिन्टेड मैटर

If undelivered please return to :

शोध श्री (त्रैमासिक)

54-ए, जवाहर नगर कॉलोनी
टोंक रोड, जयपुर-302018

स्वात्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान सम्पादक – वीरेन्द्र शर्मा के लिए मुद्रित व 54-ए,
जवाहर नगर कॉलोनी, टोंक रोड, जयपुर-302018 मो. 9460124401 से प्रकाशित।
मुद्रण स्थल आकृति एड्वरटाईजर्स, जयपुर

